

डा. नारायणदत्त श्रीमाली

रहस्यमय अज्ञात

तंत्रों की खोज में

रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में

अनन्त काल से हिमालय पर्वत पर सिद्ध योगियों, संन्यासियों, तपस्वियों और तांत्रिकों का निवास रहा है, जहां वे अटूट साधना में लीन रहते हुए अनूठी सिद्धियां प्राप्त करते आए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ज्योतिषाचार्य और तंत्र-विद्या विशेषज्ञ डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली ने इनकी खोज में भटककर उन अज्ञात तंत्रों को खोज निकाला है, जो आज तक अत्यन्त रहस्यमय, दुर्लभ और गोपनीय थे।

खोजे गए ये दुर्लभ तंत्र अत्यधिक चुनौती-भरे प्रामाणिक और रहस्यमय हैं। तंत्र-विद्या में रुचि रखने वाले पाठक इनकी सहायता से निश्चय ही अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। निरीह प्राणियों की सहायता के साथ-साथ अपने जीवन को भी पूर्णता की ओर ले जा सकते हैं।

इस पुस्तक की भाषा सरल और शैली सहज है। इसकी विधियां भी आसानी से समझ में आ जाती हैं। तंत्र का रहस्यमय संसार पाठकों को अचरज में भी डालता है और रोचकता निरंतर बनी रहती है।



डॉ॰ नारायणदत्त श्रीमाली
तंत्र विद्या
पर अद्भुत रहस्यमय ग्रन्थ



- श्मशान भैरवी
- हिमालय के योगियों की रहस्यमय गुप्त सिद्धियां
- रहस्यमय गोपनीय सिद्धियां
- रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में
- गोपनीय दुर्लभ मंत्रों के रहस्य





हिन्द पॉकेट बुक्स
देश-भर के सभी बुक स्टालों पर उपलब्ध,
न मिलने पर हमें लिखें।

तंत्र विद्या का अद्भुत ग्रंथ

डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली

रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में



हिन्द पॉकेट बुक्स

भारत की सर्वप्रथम पॉकेट बुक्स

रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में
(तंत्र शास्त्र)

संस्करण: 1991

प्रकाशक
हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड
दिलशाद गार्डन, शाहदरा,
जी० टी० रोड, दिल्ली-११००९५

मुद्रक
संजय प्रिंटर्स,
मानसरोवर पार्क, दिल्ली - 110032

RAHASYAMAY AGYAT TANTRON KI KHOJ MAIN
(Tantra Shashtra)
Dr. NARAYANDATT SHRIMALI

दो शब्द

यह पुस्तक पाठकों के हाथों में सौंपते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है, क्योंकि इसमें हिमालय-स्थित सिद्धयोगी, संन्यासी और उच्चकोटि के तपस्वियों तथा तांत्रिकों की खोज में भटककर उन अज्ञात तंत्रों को खोज निकाला गया है, जो अभी तक अत्यन्त रहस्यमय, दुर्लभ और गोपनीय रहे हैं।

इससे पहले भी इन तंत्रों की खोज में सैकड़ों लोगों ने प्रयत्न किए। हिमालय के चप्पे-चप्पे को छान मारा, दूर-दूर तक यात्राएं कीं, पर उन्हें वे रहस्यमय तंत्र प्राप्त नहीं हो सके जो कि वास्तव में ही अभी तक अज्ञात रहे हैं।

इस पुस्तक में पहली बार उन सभी रहस्यमय गोपनीय तंत्रों का समावेश किया है, जो कि वास्तव में ही चुनौती-भरे हैं, प्रामाणिक हैं और रहस्यमय हैं। जिसका एक-एक अक्षर अपने आप में खरा और प्रामाणिक है। जिसके माध्यम से पाठक अपनी समस्याओं को सुलझा सकता है। समाज के अन्य कमजोर वर्गों की सहायता कर सकता है और अपने जीवन को पूर्णता तक पहुंचा सकता है। अपने पूर्वजों की इस थाती को सुरक्षित रखने और प्रकाशित करने में प्रकाशक महोदय ने जो प्रयत्न एवं परिश्रम किया है, वह वास्तव में ही सराहनीय है।

इन रहस्यमय तंत्रों, गोपनीय मंत्रों, यंत्र, ज्योषित, कर्मकाण्ड, आयुर्वेद आदि से सम्बन्धित पत्रिका 'मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान' पिछले कई वर्षों से हर माह बरावर प्रकाशित होती है। जिसकी चर्चा चारों तरफ है, जो अपने आप में गोपनीय विद्याओं की थाती है। यह पत्रिका सही अर्थों में सराहनीय है और आने वाली पीढ़ियों के लिए धरोहर है। आप मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान—डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कालोनी, जोधपुर ३४२००१ (राजस्थान) के पते पर पत्र-व्यवहार कर इस प्रकार की महत्वपूर्ण सामग्री से भरी हुई पत्रिका से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं और प्रत्येक माह इसका लाभ उठा सकते हैं।

उपर्युक्त पते से ही आप लेखक से भी सम्पर्क स्थापित कर अपनी समस्याओं के लिए मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। यह पुस्तक आपके जीवन की उन्नति के लिए पूर्ण रूप से सहायक होगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

डॉ० श्रीमाली मार्ग
हाई कोर्ट कालोनी,
जोधपुर-३४२००१ (राजस्थान)

—डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली

अनुक्रम





१

क्या मरने के बाद भी पूर्व जीवन के कार्यों और रिश्तेदारों से सम्बन्ध रहता है

हमारा जीवन स्वतन्त्र नहीं है, अपितु पूर्व जीवन से पूर्णतः जुड़ा हुआ है, पिछले जीवन के अधूरे कार्यों को पूरा करने के लिए ही इस जीवन का सृजन हुआ है। हम इस जीवन में तब तक शांति प्राप्त नहीं कर सकते, जब तक कि हम हमें अपने पिछले जीवन को देख न लें, उस जीवन के किए गए कार्यों का जब तक अवलोकन नहीं होता, तब तक इस जीवन को समझा भी नहीं जा सकता।

भारतीय दर्शन इसी बात की पुष्टि करता है कि 'शरीर समाप्त अवश्य होता है, परन्तु उसी प्रकार के क्रमिक विकास की ओर गतिशील बना रहता है।' अब तो पाश्चात्य विद्वान् और वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करने लगे हैं।

यदि इस जीवन को सुखमय, चिंता-रहित और शांतियुक्त बनाना है तो यह आवश्यक है कि हम पिछले जीवन को भली प्रकार से पहिचानें।

प्रस्तुत लेख के लेखक ने लगभग छत्तीस वर्षों तक इसी कार्य पर शोध किया है, उनके शोध और निष्कर्षों का विवरण आगे की पंक्तियों में प्रस्तुत है।

मृत्यु जीवन का अन्त नहीं है, अपितु जीवन-शृंखला की एक कड़ी का अवसान है, शरीर के साथ-साथ जीवन का भी अन्त हो जाता हो, ऐसी बात नहीं है, वैज्ञानिकों का यह कहना है कि जब रक्त का दौरा बंद हो जाता है, या हृदय रक्त को स्वीकार नहीं करता, तब मस्तिष्क को रक्त मिलना बंद हो जाता है और वह शून्य होकर समाप्त हो जाता है, इसी

को 'मृत्यु' कहते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में ज्यादा-से-ज्यादा पन्द्रह मिनट लगते हैं।

परन्तु यह शरीर का नाश होना है, जीवन तो इस प्रकार से गतिशील रहता है, इस शरीर से पहले जो हमारा शरीर था, उसका जीवन का क्रमिक विकास ही इस जीवन में हुआ है, और आगे जो हम नया शरीर धारण करेंगे उसमें भी इसी जीवन का क्रमिक विकास होगा।

अब यह वैज्ञानिक प्रमाणों से भी सिद्ध हो चुका है कि पूर्व जीवन के कार्यों का पूरा-पूरा और निश्चित प्रभाव हमारे इस जीवन में हमें भोगने को मिलता है। इस शरीर से जो पहले का शरीर था, उस शरीर की अवधि में हमने जो कार्य किए हैं, जो बिचारधारा रखी है उन सबकी क्रिया और प्रतिक्रिया इस जीवन में भोगने को मिलती है। अब यह बात निश्चित हो चुकी है कि हमारा वर्तमान जीवन पूर्णरूप से स्वतन्त्र नहीं है, अपितु यह पिछले जीवन से बंधा हुआ है।

अमेरिका मे इन दिनों दो पुस्तकों की बहुत चर्चा है, जिन्होंने चिकित्सा-जगत में हलचल मचा दी है, ये पुस्तकें हैं—'डेथ : द फाइनल स्टेज आफ ग्रोथ', व आर० एफ० मुडी लिखित 'लाइफ आफ्टर लाइफ'। ये दोनों पुस्तकें वर्षों के अनथक शोध-कार्यों का परिणाम हैं, इन पुस्तकों के लिखने से पूर्व लेखकों ने लाखों मील की यात्राएं की हैं, हजारों लोगों से मिले हैं और लगभग २० वर्षों के परिश्रम के बाद उन्होंने अपने अनुभव का निचोड़ इन पुस्तकों में दिया है।

इन पुस्तकों का भी सार यह है कि हमारा जीवन स्वतन्त्र नहीं है अपितु पिछले जीवन के अधूरे कार्यों को आगे बढ़ाने का प्रयत्न मात्र है नवीन शरीर धारण होने से हम पिछले जीवन की घटनाएं, सम्बन्ध संस्कार आदि भूल जाते हैं, पर इस जीवन में कभी-कभी अचानक किसी को देखते ही मन कहने लगता है कि इसको कहीं देखा है, इससे जरूर मिलना हुआ है, पर कहां ? इसका ज्ञान नहीं होता, ये सारे परिणाम पूर्व जीवन के परिचय के फलस्वरूप ही सम्भव होते हैं।

चिड़ियों की जीभ का शोरबा

मैं शुद्ध वैज्ञानिक हूं और तर्क की कसौटी पर कसकर ही सत्य-असत्य का निर्णय करता हूं, परन्तु इस एक घटना ने मेरे सारे विश्वास को आमूलचूल हिला दिया है।

यह सन् ८० की घटना है, श्रीमाली जी आये हुए थे, उन्हीं दिनों

इलाहाबाद से प्रातःकाल की ट्रेन से अशोक कुमार भी दिल्ली आ गए थे, उनके कई-कई बार टेलिफोन मेरे यहां आते थे—जब भी गुरुदेव का दिल्ली आगमन हो तो मुझे उनसे मिलना जरूरी है, जोधपुर मेरे लिए बहुत दूर पड़ जाता है। अतः एक दिन पहले मैंने ही उन्हें टेलीफोन पर इस आशय की सूचना दे दी थी और वे प्रातःकाल की गाड़ी से दिल्ली आ गए थे।

मैंने अशोक कुमार को पहली बार देखा था, दुबला-पतला, सांवले-से रंग का व्यक्ति। इलाहाबाद में इनके कई व्यापार हैं और आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध हैं, घर में कई कारें, नौकर-चाकर, मान-सम्मान सब कुछ है, परन्तु उनकी बात से ही पता चला कि वे जन्म से ही पेट के रोग से पीडित हैं, उनका लगभग छः वर्षों से गुरुजी से संबंध-सम्पर्क है, यद्यपि अपने पेट के रोग के लिए उन्होंने कई बार गुरुजी से निवेदन किया, परंतु उन्होंने कभी उस ओर ध्यान नहीं दिया।

उस दिन मैंने ही इस बात को उठाया क्योंकि बात उठाने के एक घंटे पहले ही अशोक कुमार के पेट का दर्द बढ़ गया। जब दर्द बढ़ जाता है, तो वह असहनीय हो जाता है, वे जमीन पर बिन पानी की मछली की तरह तड़फड़ाते रहते हैं, दर्द के मारे आंखें बाहर निकलने लगती हैं और उनका सारा शरीर नीला-नीला-सा हो जाता है, ऐसी स्थिति लगभग १५-२० मिनट रहती है और फिर स्वतः पेट का दर्द ठीक हो जाता है।

मेरी पत्नी और मैं उसे इस प्रकार से छटपटाते हुए नहीं देख पा रहे थे, जब वह कुछ ठीक हुआ तो उसने लगभग रोते हुए कहा कि मैंने लाखों रुपये इस रोग को मिटाने के लिए खर्च कर दिए हैं डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों पर पानी की तरह पैसा बहाया है, सैकड़ों एक्सरे ले लिए हैं, पर रोग का पता ही नहीं चलता। दिन में एक बार तो निश्चय ही यह दर्द बढ़ जाता है और जब दर्द बढ़ता है तो मुझे कुछ भी भान नहीं रहता, उस समय तो ऐसी इच्छा होती है कि यदि मेरी मौत हो जाय तो इससे कई गुना ज्यादा सुख मिले—और मैं देख रहा था, कि उस दर्द को स्मरण करते ही उसकी आंखों में भय उतर आया था।

उन्होंने बताया कि मेरा लम्बा-चौड़ा व्यापार है, नौकर-चाकर, भोग-विलास की सभी वस्तुएं मेरे घर में विद्यमान हैं, आज मैं ३२ वर्ष का हो रहा हूं, परन्तु पिछले बीस वर्षों से मैं केवल मूंग के पानी पर ही जिंदा हूं। डाक्टरों ने बिना चुपड़ी हुई रोटी और मूंग की दाल का पानी ही लेने के लिए कहा है, नौकर-चाकर मिठाई खाते हैं, कारों में दनदनाते हुए घूमते हैं और मैं इन सबका मालिक होते हुए भी अपाहिज की तरह पड़ा रहता

हूं। और कहते-कहते उसकी आंखों में आंसू छलछला आए।

फिर उसने गुरुजी के चरणों को पकड़ते हुए कहा—मैं अपनी यह दास्तान कई बार आपके सामने रख चुका हूं पर आप पर पता नहीं कोई असर क्यों नहीं होता ? आज मैं यही निश्चय करके आया हूं कि या तो आप मेरा यह दर्द ठीक कर दें या मुझे अपने हाथों से मौत दे दें, अब मैं इस प्रकार के दर्द को सहन नहीं कर सकता।

हम सब गुरुदेव के चेहरे की ओर ताक रहे थे, एक क्षण उनके चेहरे पर आवेश आया, दूसरे ही क्षण उन्होंने शांत होकर कहा—तुम्हें पेट का दर्द भोगना बाकी है, तुमने जो कर्म किए हैं, उसके अनुसार तो यह दर्द बहुत कम है, फिर उन्होंने कुछ सोचते हुए कहा—तुम लगभग छः वर्षों से मेरे यहां आ रहे हो, तुम्हें पता है कि तुम्हें यह सब क्यों भोगना पड़ रहा है ?

अशोक ने उत्तर दिया—मैंने तो कभी किसी का दिल भी नहीं दुखाया है, नित्य सन्ध्या-गायत्री आदि करता हूं, दान आदि यथासंभव देता रहता हूं, अन्न क्षेत्र खोल रखा है और हर वर्ष चित्रकूट जाकर साधु-संतों को ग्यारह दिनों तक भोजन कराता हूं, फिर मैंने ऐसे कौन-से पाप किए हैं, जिसकी वजह से आप कहते हैं कि मुझे इससे भी ज्यादा कष्ट भोगना चाहिए ?

इसका उत्तर अभी तीन-चार घंटों में मैं दूंगा, पर इसके लिए हमें यहां से लगभग २०० किलोमीटर कार में पावागढ़ चलना पड़ेगा, जो दिल्ली-देहरादून रोड पर स्थित कस्बा है।

मैं तैयार हो गया, मेरी पत्नी भी इस रहस्य को जानना चाहती थीं। कार से हम गुरुजी के साथ अशोक को लेकर चल पड़े।

देहरादून रोड पर लगभग ६० किलोमीटर जाने पर दाहिनी तरफ एक कच्चा रास्ता जाता है, जो कि पावागढ़ पहुंचता है, इस सड़क से लगभग ३५ किलोमीटर है। रास्ता पक्का न होने पर भी उस पर कार आसानी से जा सकती है। पावागढ़ सन् ४७ से पहले ठाकुरों का गढ़ था। जब हम पावागढ़ पहुंचे तो लगभग दिन के दो बज रहे थे।

यह छोटा-सा कस्बा है और दस हजार की आबादी है। हमारी कार गांव के बीच गढ़ी के पास रुकी। गढ़ी के पास में ही तीन-चार बनियों की दुकानें हैं, एक दुकान के पास हम रुक गए और कार से नीचे उतरे। दुकान के बाहर ही एक वृद्ध चौधरी बैठे हुए थे, जिनकी उम्र लगभग ९० के आसपास होगी। इतनी उम्र होने के बावजूद उनकी कद-काठी

मजबूत थी।

हम सब चबूतरे पर सुस्ताने के लिए बैठ गए, लोग आश्चर्य से हमें देख रहे थे। मैंने शंका-समाधान के लिए कहा कि मैं ठाकुर साहब से मिलने के लिए आया हूं।

वृद्ध सज्जन ने पूछा—क्या भौमसिंह जी से ?

मैंने उत्तर दिया— हां।

उसने कहा—वे इस समय गढ़ी में ही खाट पर पड़े होंगे, उन्हें तो लकवा-सा हो गया है, इसलिए अधिकतर खाट पर ही पड़े रहते हैं।

श्रीमाली जी ने पूछा—आपने तो काफी उम्र जी है, क्या आपको भौमसिंह जी के पुत्र के बारे में कुछ जानकारी है ?

सुनते ही उस वृद्ध का मुंह कड़वा-सा हो गया, बोला—वर्तमान ठाकुर भौमसिंह के पुत्र का नाम अशोकसिंह था, पर आप उस दुष्ट का नाम न लें तभी अच्छा है, वह आदमी नहीं था, राक्षस था राक्षस, उसने गांव की एक भी बहू-बेटी को छोड़ा नहीं था, अच्छा हुआ आज से ३५ वर्ष पहले वह भरी जवानी में ही मर गया।

हम सब उसके मुंह से निकलते घृणा के शब्द सुन रहे थे, बात आगे बढ़ाते हुए वह बोला—वह दुष्ट तालाब के किनारे जाता और बन्दूक के छर्रों से नित्य लगभग एक हजार चिड़ियों को मारकर घर लाता तथा अपने रसोइये से उन चिड़ियों की जीभ का शोरबा बनवाकर उससे भोजन करता। इस प्रकार वह दुष्ट नित्य सैकड़ों चिड़ियों को मारकर उनकी जीभ का साग बनाकर क्षुधा शांत करता—और कहते-कहते उस वृद्ध ने घृणा से जमीन पर थूक दिया।

फिर बोला—वह जहां कहीं पैदा हुआ होगा सुखी नहीं होगा, उसके पेट में जितनी चिड़ियाएं गई हैं, उसके अनुसार जीवन-भर वह पेट की बीमारी से तड़पेगा या उसके सारे शरीर में कीड़े पड़ेंगे। इतना तो पक्का समझिए बाबूजी ! कि भगवान के यहां न्याय अवश्य है, वह तड़प-तड़प-करके ही मरेगा।

हमारे पास बैठा अशोक यह सब सुन रहा था और उसकी आंखों से टप-टप आंसू बह रहे थे, हम उन वृद्ध सज्जन को लेकर गढ़ी में गए, वहां ठाकुर भौमसिंह जी पलंग पर चित पड़े हुए थे। हम आसपास जाकर बैठ गए। कुशल-क्षेम के बाद जब उनके इकलौते दिवंगत पुत्र अशोकसिंह की चर्चा चली तो उनकी आंखों में आंसू अवश्य आ गए पर बोले—"अच्छा हुआ वह राक्षस मर गया," और आगे के शब्द उनके गले में ही रुंध

गए।

बारादरी में जहां ठाकुर साहब लेटे हुए थे, वहीं पर उनके परिवार के बड़े-बड़े फोटो लटके हुए थे, उन फोटुओं में से ही एक फोटो अशोकसिंह का था, उस वृद्ध चौधरी ने उंगली से इशारा करते हुए कहा—यही अशोकसिंह है, जिसकी मृत्यु बन्दूक साफ करते समय अचानक गोली छूट जाने की वजह से हो गई थी।

हम सब पास जाकर उस फोटो को देखने लगे और आश्चर्य की बात यह थी कि उस फोटो और वर्तमान अशोक में अत्यधिक साम्य था, फर्क इतना ही था कि फोटो में चेहरे पर मूंछें थीं, और वर्तमान अशोक का चेहरा सफाचट था, इसके अलावा नाक, कान आदि में कोई अन्तर नहीं था।

अशोक पश्चात्ताप और दुख से बेहाल-सा हो गया था, सारा चेहरा आंसुओं से तरबतर था। गढ़ी से बाहर निकलकर हम कार तक आए तब श्रीमाली जी ने अशोक के कंधे पर हाथ रखकर पूछा—क्या तुम्हें और कुछ प्रमाण चाहिए, कि तुम्हारे पेट में यह दर्द क्यों है और तुम क्यों इस दर्द को भुगत रहे हो?

भारी मन से हम सब कार में बैठ गए पर आज भी रह-रहकर मेरे मन में विचार आता है कि यह सब क्या था? वास्तव में ही इस जीवन के कई भोगों का सम्बन्ध अवश्य ही हमारे पूर्व जन्म के कृत्यों से होता है।

इसके बाद अशोक गुरुजी के बताए रास्ते पर चलकर सैंकड़ों मन अनाज अपने हाथों से चिड़ियों के झुण्डों पर बिखराता और बराबर दो वर्षों तक एक विशेष मन्त्र का जाप करता रहा, अब पिछले सात महीनों से उसे किसी प्रकार का पेट का दर्द नहीं रहा है, और वह भर पेट भोजन करने लगा है।

यह एक उदाहरण नहीं, ऐसे सैंकड़ों उदाहरण हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मृत्यु शरीर की समाप्ति का सूचक है, जीवन की समाप्ति का नहीं, जीवन का तो इसी प्रकार क्रमबद्ध विकास और गति बनी रहती है।

पिछले जीवन का जिनसे हमारा सम्बन्ध होता है, जब तक पुनः उनसे मिलना नहीं होता, तब तक आत्मा में एक विशेष छटपटाहट बनी रहती है, ऐसा लगता है, जैसे जीवन में सब कुछ होते हुए भी खाली-खाली-सा है, पर उनसे मिलते ही एक अपूर्व सुख, एक अनुपम शांति प्राप्त हो जाती है।

भारत में 'मदालसा साधना' कई वर्षों से प्रचलित है, जिसके माध्यम से अपने पूर्व जीवन को भली प्रकार देखा और पहिचाना जा सकता है। साधना के बाद जब हम उस जीवन को देखते हैं तो विश्वास नहीं होता कि वर्तमान जीवन के जो हमारे परिचित हैं, उनमें से कई व्यक्तियों से पिछले जीवन में भी सम्बन्ध रहे हैं। इसके बाद पश्चिम भी इस बात को स्वीकार करने लगा है कि जीवन स्वतन्त्र नहीं है, अपितु पिछले जीवन के कार्यों का प्रभाव इस जीवन पर भी अवश्य पड़ता है।

२

बुभुक्षित पारद जो लोहे को सोने में तुरन्त बदलता है

पारद संसार की श्रेष्ठतम और महत्वपूर्ण धातु है, जिसे प्राचीनकाल से आयुर्वेद-आचार्यों ने रस, प्राण या आत्म शब्द से सम्बोधित किया है, यह चंचल और अस्थिर प्रकृति का होते हुए भी अपने आपमें विशिष्ट गुण समेटे हुए हैं।

भगवद्पाद शंकराचार्य के गुरु श्रीमद्भगवद् गोविन्दपादाचार्य जैसे आध्यात्मिक योगीराज ने भी पारद को जीवन-मुक्ति का एक मात्र साधन मानते हुए इसे 'आत्म' शब्द से सम्बोधित किया है, उनके अनुसार :

१—पारद जीवन-मुक्ति का एक मात्र साधन है।
२—पारद आजीवन निरोग रहने की एकमात्र औषधि है।
३—पारद स्वर्ण बनाने की प्रक्रिया में प्रधान धातु है, इसलिए यह संसार का वैभव है।

परन्तु इसके लिए पारद को बांधना और उसे बुभुक्षित बनाना आवश्यक है। पारद के सोलह संस्कारों में एक संस्कार उसे बुभुक्षित बनाना भी है।

पारद जीवन का और समस्त सृष्टि का आधार है, जैसे शरीर में

आत्मा है, वैसे ही संसार में रस अर्थात् पारद है। जो इसको भली भांति समझ लेता है, वही संसार में विजय प्राप्त करता है। 'रसोपनिषद्' के पंचदश अध्याय में कहा है :

यथा रसस्तथाह्यात्मा, यथाह्यात्मा तथा रसः।
आत्म विद् रसविच्चैव:, द्वाविभौ सूक्ष्मदर्शिनौ ।।

रस को सिद्ध करने के लिए प्राचीनकाल से कार्य होता रहा है, और उन्होंने इसमें सफलता भी पाई है, क्योंकि यही एक ऐसी धातु है जो सर्वथा निर्लेप और निर्मुक्त रहती है, आसानी से इस धातु में दूसरी धातु का समावेश नहीं होता, परन्तु यदि इसके सोलह संस्कार किए जायें तो यह धातु संसार की अद्वितीय धातु बन जाती है :

धर्मार्थमुपभोगानां नष्टराज्यविवृद्धये।
आयुर्यौवनलाभार्थं मुक्त्यर्थं च मुमुक्षुणाम् ॥

अर्थात् यह पारद-विद्या जनता को धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति कराती है, धन के सदुपयोग के द्वारा सुख की वृद्धि देती है, राजाओं को नष्ट-राज्य की प्राप्ति कराती है, और राज्य-वृद्धि में भी सहायता प्रदान करती हैं, इसके अतिरिक्त रस-विद्या के द्वारा गृहस्थ व्यक्ति दीर्घायु प्राप्त कर अंतिम क्षण तक यौवनमय बना रहता है।

इससे यह स्पष्ट है कि रस-विद्या सामान्य विद्या नहीं है, क्योंकि एक ओर जहां यह न्यूनतम व्यय पर सोने या चांदी में परिवर्तित हो जाती है, वहीं दूसरी ओर आयुर्वेद की दृष्टि से यदि इसका उपयोग किया जाय तो इसके माध्यम से कायाकल्प किया जा सकता है, शरीर की रचना में परिवर्तन हो सकता है, बुढ़ापे को दूर कर शरीर को स्वस्थ यौवनमय बनाए रख सकता है, और संसार की समस्त बीमारियों को दूर करने में सहायक हो सकता है।

अर्थात् पारद समस्त रोगों को दूर करने से सहायक है, यहां तक कि यदि व्यक्ति मूर्च्छित या मृत हो गया हो, तब भी इसके द्वारा उसे पुनः जीवन प्रदान किया जा सकता है, इसके द्वारा 'खेचरी-विद्या' सिद्ध की जा सकती है, जिससे व्यक्ति अदृश्य रह सकता है, या वायुवेग से शरीर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जा सकता है, यह शम्भू-बीज है, अतः समस्त देवता, मुनि, साधकों और आयुर्वेद के आचार्यों द्वारा यह वन्दित है, जीवन की पूर्णता तथा भवसागर को पार करने के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों को एक साथ प्रदान करने में यह विद्या समर्थ है।

रस-मंजरी में लिखा है :

रस बन्धश्च स धन्यः प्रारम्भे यस्य सततमिव ।
करुणा रसे करिष्येमहीमहं निर्जरामरणाम् ।।

अर्थात् पारद के बन्धन को धन्य है, क्योंकि यह मृत होकर के ही पूरी पृथ्वी को प्राण दे सकता है, यह सिद्ध होकर पृथ्वी को जरा-मरण से मुक्ति दे सकता है । इसीलिए पारद को धन्य कहा गया है ।

इससे यह तो स्पष्ट है, कि प्राचीनकाल से ही पारद पर शोध होता रहा है, नागार्जुन के समय में आकर यह विद्या अपनी श्रेष्ठ स्थिति पर पहुंच गई, नागार्जुन ने पारद के सोलह संस्कार सिद्ध किए और पारद के द्वारा सोना और चांदी बनाने की प्रक्रिया स्पष्ट की, परन्तु कालान्तर में यह विद्या पुनः धीरे-धीरे लोप हो गई और इस संबंध में न तो प्रामाणिक साहित्य प्राप्त हो सका और न ऐसे रस-सिद्ध जानकार मिल सके जो इस विद्या में पूर्णता को प्राप्त हों ।

परन्तु यह विद्या सर्वथा लोप नहीं हुई, लोगों के मन में बराबर कशमकश बनी रही कि पारद को बांधना और सिद्ध करना जरूरी है, इसकी चंचल स्थिति को बांधने पर ही आगे के अष्टदश संस्कार सम्पन्न हो सकते हैं ।

अष्टदश संस्कार

पारद के कुल सोलह संस्कार सम्पन्न किए जाते हैं, जिनमें पहले आठ संस्कार तो रोग निवारणार्थं औषध-निर्माण, रसायन और धातुवाद के लिए आवश्यक हैं, और शेष आठ संस्कार खेचरी-सिद्धि, धातु-परिवर्तन, सिद्ध सूत और स्वर्ण बनाने में प्रयुक्त होते हैं ।

आचार्यों ने जो अट्ठारह संस्कार स्पष्ट किए हैं, वे इस प्रकार हैं :

१. स्वेदन, २. मर्दन, ३. मूर्छन, ४. उत्थापन, ५. पातन, ६. रोधन, ७. नियमन, ८. दीपन, ९. ग्रासमान, १०. चारण, ११. गर्भदुति, १२. जारण, १३. बाह्यदुति, १४. रंजन, १५. सारण और १६. क्रामण ।

कुछ आचार्यों ने इसके दो संस्कार और माने हैं, जिन्हें वैध और भक्षण कहा गया है ।

भारतवर्ष के अधिकतर आयुर्वेद आचार्यों और इस संबंध में जानकार व्यक्तियों को पूरे अठारह संस्कार के नाम ही मालूम नहीं हैं, संस्कार करना तो बहुत आगे की बात है, कोई इक्के-दुक्के आयुर्वेद आचार्य को ही पूरा पारद-संस्कार आता होगा । जहां तक मेरी जानकारी है, अधिक-

से-अधिक आठ संस्कार तक तो ये आचार्य सफल हुए हैं, परन्तु आगे के संस्कारों का ज्ञान उन्हें नहीं है।

अब मैं पारद के संस्कार स्पष्ट कर रहा हूं :

स्वेदन

पारद संस्कार में पहला स्वेदन होता है, उससे पारद का मलदोष दूर हो जाता है।

राई, सेंधा नमक, काली मिर्च, पीपर, चित्रक, अदरक और मूली—प्रत्येक को पारद का सोलहवां भाग लें, और इन सबको मिलाकर बीच में पारद को कपड़े की पोटली में बांधकर रख दें और नीचे मन्द-मन्द अग्नि दें, तो स्वेदन संस्कार सम्पन्न होता है, तथा पारद का मल दूर हो जाता है।

मर्दन

मर्दन संस्कार में पारद को थैली में डाल या कपड़े में ढीला बांधकर बार-बार गर्म जल में डुबाने और मसलने से पारद में रहा हुआ मल निकल जाता है और वह बाह्य मल से मुक्त हो जाता है।

मूर्च्छन

मूर्च्छन संस्कार में कुवांर, त्रिफला, और चित्रक को बराबर-बराबर लेकर मिला ले और उसमें पारद को खरल करे, तो एक घण्टे-भर खरल करने से पारद मूर्च्छित हो जाता है और वह सिद्ध पारद बन जाता है।

उत्थापन

मूर्च्छित पारद को कांजी के साथ या नींबू के रस में खरल करने से उत्थापित हो जाता है, ऐसा पारद सर्वथा विषरहित और पवित्र बन जाता है।

पातन

दो भाग पारद, एक भाग ताम्र तथा एक भाग नीला थोथा अथवा बच्छनाग मिलाकर अधोपातन क्रिया करने से पारद का पतन संस्कार हो जाता है, ऐसा संस्कार पूरा होने पर वह पारद विकारोत्पादक कंचुकों से सर्वथा मुक्त हो जाता है।

रोधन

जब पातन संस्कार युक्त पारद बन जाए तब उसे नपुंसकत्व दोष से मुक्त किया जाता है, इसी क्रिया को रोधन संस्कार कहते हैं, इसके लिए गोमूत्र, अजामूत्र, नरमूत्र, मनुष्य के वीर्य, स्त्री के आर्तव तथा सेंधव को बराबर भाग में मिलाकर उसमें पारद को रख दिया जाता है, फिर इन सबको कांच की शीशी में भरकर तीन दिन तक भूमि में दबा देने से वह समस्त प्रकार के नपुंसकत्व दोष से मुक्त हो जाता है, इसी क्रिया को रोधन संस्कार कहा जाता है।

रोधन संस्कार का एक दूसरा प्रकार भी है, इसके अनुसार पचास तोले सेंधा नमक, तीन सेर जल मिलाकर उसमें पारद रख दे तथा किसी कांच के बर्तन में भरकर जमीन या खात में दबाकर रख दिया जाता है, सात दिन तक जमीन में दबा रहने से वह रोधन युक्त हो जाता है।

इस संस्कार के पूर्ण होने पर पारद दिव्य-चेतनायुक्त बन जाता है, जो कि खेचरी साधना के लिए सहायक होता है।

नियमन

ताम्बूल, लहसुन, सेंधा नमक, भांगरा, ककोरी और इमली इन सबको बराबर-बराबर भाग लेकर उसमें रोधन संस्कार किया हुआ पारद रख दिया जाता है, तथा तीन दिन तक दोला-यन्त्र द्वारा स्वेदित किया जाता हैं, ऐसा करने पर पारद नियमन संस्कार युक्त हो जाता है।

नियमन संस्कार होने पर पारद की चंचलता समाप्त हो जाती है, और ऐसा पारद कायाकल्प करने में पूर्ण समर्थ होता है।

यदि नियमन संस्कार करने पर भी पारद की चंचलता कुछ रह जाए तो उसे पुनः नियमन करना चाहिए जिससे कि वह पूर्ण रूप से नियमन संस्कार युक्त हो जाय।

दीपन

फिटकरी, कांत्री, सुहागा, काली मिर्च, सेंधा नमक, राई और सहिजने के बीज बराबर-बराबर लेकर उन्हें कूटकर एक-सा बना लें, और उसमें उस पारद को रख दें, फिर हल्की आंच से पकावें, लगभग सात घंटे बाद पारद का दीपन संस्कार सम्पन्न हो जाता है और ऐसा पारद ग्रास ग्रहण करने में समर्थ होता है।

उपर्युक्त आठों संस्कार एक के बाद एक करने से पारद जब दीपन

संस्कार युक्त हो जाता है, तो वह संसार की अद्वितीय धातु बन जाता है, इसके बाद पारद को नौसादर और यवक्षार के साथ आठ घंटे तक खरल करने पर पारद निर्मल, निर्दोष और पूर्ण रूप से बुभुक्षित हो जाता है, ऐसे ही पारद को बड़वाग्नि सदृश क्षुधातुर कहा जाता है, दूसरे शब्दों में यही पारद बुभुक्षित पारद कहलाता है।

इस पारद को शिवलिंग का आकार देकर उसे नींबू का पानी डालने से वह स्थायी आकार ग्रहण कर लेता है, फिर इस पर यदि स्वर्ण रखा जाए, तो यह पारद उस स्वर्ण को निगल लेता है।

इस प्रकार के पारद पर यदि स्वर्ण के साथ अन्य धातु मिली हुई होती है, तो यह बुभुक्षित पारद उसमें से अन्य धातु को छोड़कर केवल स्वर्ण को ही निगलता है, कांच या जवाहरात अथवा अन्य धातु को ग्रहण नहीं करता।

कोई भी स्वर्ण या स्वर्ण से बनी वस्तु इस पर रखने से यह दस से पन्द्रह सेकेण्ड के भीतर-भीतर उस स्वर्ण को अपने आप में पचा लेता है, परन्तु इसके बावजूद इसका वजन नहीं बढ़ता, इस प्रकार यह जब स्वर्ण से तृप्त हो जाता है, अर्थात् इसकी क्षुधा समाप्त हो जाती है, तब यह पारद पत्थर कहलाने लगता है, इसके बाद यदि इस बुभुक्षित पारद को किसी लोहे से स्पर्श कराया जाय तो यह उस लोहे को दूसरे ही क्षण सोने में परिवर्तित कर देता है।

नागार्जुन ने बताया है कि ऐसा बुभुक्षित पारद सहस्रों बिजली की आभा के समान चमकता है, तथा इतना कठोर और मजबूत होता है कि लोहे की आरी या लोहे के घन से भी यह कटता नहीं है, इस प्रकार का पारद विश्व का अन्यतम पारद कहा जाता है।

इति दीपितो विशुद्धः प्रचलित विद्युल्लतासहस्राभः।
भवति यदा रसराजश्चार्यो दत्वा द्वितीयभिजम्॥

पीछे लेख में मैंने आवश्यक आठ संस्कार करने की विधि स्पष्ट की है, परन्तु इसी बुभुक्षित पारद को आगे आठ संस्कार से युक्त और सम्पन्न किया जा सकता है।

पारद का दसवां और ग्यारहवां संस्कार महत्वपूर्ण है क्योंकि ग्यारहवां संस्कार गर्भद्रुति संस्कार होता है, और इस प्रकार का संस्कार होने पर पारद से निरन्तर पाउडर के समान श्वेत पिष्ट झड़ता रहता है, यही पिष्ट 'सिद्ध सूत' कहलाता है।

सिद्ध सूत

सिद्ध सूत के बारे में रसायन शास्त्र के कई ग्रन्थों में विवरण मिलता है, यह पाउडर की तरह होता है, और इसे शीशी में भरकर रख दिया जाता है, एक सेर ताम्बे पर यदि एक रत्ती गर्भदुति संस्कार युक्त पारद की यह पिष्टी डाल दी जाय तो वह ताम्बा सोने में परिवर्तित हो जाता है। इस गर्भ दुति संस्कार युक्त पारद की यह विशेषता होती है कि इसमें से निरन्तर यह पिष्टी झड़ती रहती है, जिसे एकत्र कर शीशी में रख दिया जाता है।

काशी के विश्वप्रसिद्ध भगवान विश्वनाथ मन्दिर के द्वार, जो सोने के बने हुए हैं, उनका निर्माण इसी प्रकार गोविन्दाचार्य ने सिद्ध सूत्र के माध्यम से ही सम्पन्न किया था, और मात्र एक दिन में ही दोनों वजनी किवाड़ सोने में परिवर्तित कर दिये थे। अंग्रेजी काल में ये ऐतिहासिक किवाड़ वहां से हटा दिये गये, परन्तु विश्वनाथ के प्राचीन विवरणों में इसका स्पष्टता के साथ उल्लेख मिलता है।

इस क्रिया में ताम्बे को गर्म किया जाता है, और जब वह पूरी तरह से लाल सुर्ख हो जाता है, तो उस पर एक तिनके से लेकर सिद्ध सूत डालने से वह ताम्र उसी क्षण सोने में परिवर्तित हो जाता है।

इसके आगे बारहवां तथा तेहरवां संस्कार करने के बाद रंजन संस्कार किया जाता है, ऐसा संस्कार करने पर पारद में एक विशेष चेतना आ जाती है, और यह विशेषतः चतुर्वर्गात्मक पदार्थ को त्रिवर्गात्मक पदार्थ में परिवर्तित कर देता है।

देवता, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष आदि त्रिवर्गात्मक हैं, इनमें भूमि तत्व का सर्वथा अभाव होता है, फलस्वरूप ये इच्छा-शक्ति के द्वारा सशरीर एक स्थान से दूसरे स्थान तत्क्षण जा सकते हैं, त्रिवर्गात्मक होने के कारण ही इन पर गुरुत्वाकर्षण का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

मनुष्य पंचभूतात्मक और चतुवर्गात्मक है, मनुष्य के शरीर में भूमि तत्व का प्राधान्य होने के कारण वह जमीन पर स्थिर है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण वह वायु वेग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जा सकता। और न अदृश्य हो सकता है।

चौदह संस्कार होने पर पारद में यह विशेषता आ जाती है कि वह किसी भी मनुष्य या पदार्थ को त्रिवर्गात्मक बना देता है, फलस्वरूप उसका भूमि तत्व और गुरुत्वाकर्षण के साथ-साथ दृश्य-तत्व लोप हो जाता है।

इस प्रकार की गुटिका हाथ में या मुंह में रखते ही व्यक्ति अदृश्य हो जाता है। वह तो सभी लोगों को देख सकता है, परन्तु उसे कोई नहीं देख पाता, साथ-ही-साथ वह इस गुटिका के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर एक ही क्षण में जा सकता है।

चौदहवां रंजन संस्कार सम्पन्न पारद को 'खेचरी पारद' भी कहा जाता है, इस विद्या के जानकार भारतवर्ष में है, वाम मार्ग के कई साधकों को यह क्रिया सम्पन्न करते देखा है।

पारद के आगे के संस्कार अन्यतम हैं, सारण, क्रामण, वैध और भक्षण संस्कार ज्यादा कठिन नहीं हैं, परन्तु ऐसा करने पर वह पारद संसार का अद्वितीय पारद बन जाता है, जो कि लोहे को सोने में परिवर्तित कर लेता है, उसके द्वारा झड़ने वाले सिद्ध सूत्र से ताम्बे को सोने में रूपान्तरित किया जा सकता है, खेचरी-सिद्धि प्राप्त हो जाने की वजह से वह स्वयं अदृश्य रहकर कार्य सम्पन्न कर सकता है तथा वायु वेग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा सकता है, साथ-ही-साथ अट्ठारह संस्कार सम्पन्न पारद व्यक्ति के लिए देवदूत की तरह होता है, जो कि उसे असीम सिद्धियों का स्वामी बना देता है।

पारद शिवलिंग

पारद शिवलिंग संसार का एक अद्वितीय और देवताओं की तरह से मनुष्यों को मिला हुआ वरदान है। संसार में बहुत कम प्राप्य है, और प्रयत्न करने पर सब कुछ मिल सकता है, परन्तु मन्त्र-सिद्ध प्राण-प्रतिष्ठा युक्त रस-सिद्ध पारे से निर्मित पारद शिवलिंग प्राप्त होना सौभाग्य का ही सूचक है, इसके दर्शन से पूर्व जन्म के पाप क्षय हो जाते हैं, तथा सौभाग्य का उदय होने लगता है।

सामान्यतः पारद का शोधन अत्यन्त कठिन कार्य है, और इसे ठोस बनाने के लिए मूर्छित, खेचरित, कीलित, शम्भू, विजित और शोधित जैसी कठिन प्रक्रियाओं में से गुजरना पड़ता है, तब जाकर कहीं पारा ठोस आकार ग्रहण करता है और उससे शिवलिंग निर्माण होता है।

शिवलिंग निर्माण के बाद कई मांत्रिक क्रियाओं से गुजरने पर ही पारद शिवलिंग रस-सिद्ध एवं चैतन्य हो पाता है, जिससे वह पूर्ण सक्षम एवं प्रभावयुक्त बनता है। इसलिए तो कहा गया है कि जिसके घर में पारद शिवलिंग है, वह अगली कई पीढ़ियों तक के लिए ऋद्धि-सिद्धि एवं स्थायी लक्ष्मी को स्थापित कर लेता है।

जीवन में जो मनुष्य सर्वश्रेष्ठ बने रहना चाहते हैं, जो व्यक्ति सामान्य घर में जन्म लेकर, विपरीत परिस्थितियों में बड़े होकर सभी प्रकार की बाधाओं, कष्टों और समस्याओं के होते हुए भी जीवन में अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं, या जो व्यक्ति आर्थिक, व्यापारिक और भौतिक दृष्टि से पूर्ण सुख प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें अपने घर में अवश्य ही पारद शिवलिंग की स्थापना करनी चाहिए। संसार के सभी साधक और योगी इस बात को एक स्वर से स्वीकार करते हैं कि वे व्यक्ति जो पारद-शिवलिंग की पूजा करते हैं, उनके समान अन्य कोई व्यक्ति सौभाग्यशाली नहीं कहा जा सकता। पारद शिवलिंग के पूजन से जहां पूर्ण भौतिक सुख-सुविधाएं प्राप्त होती हैं, वहीं उसे जीवन में मोक्ष-प्राप्ति भी निश्चित रूप से सुलभ रहती है।

संसार के सुप्रसिद्ध योगी पूज्य गुरुदेव स्वामी सच्चिदानन्द जी ने कहा है कि जो साधक पारद शिवलिंग को अपने घर में रखकर उसकी पूजा करता है, या मात्र उसके दर्शन ही करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर अनेक सिद्धियां और धनधान्य को प्राप्त करता हुआ पूर्ण सुख प्राप्त करता है। संसार में जितने भी शिवलिंग हैं, उन सबकी पूजा का फल केवल मात्र पारद शिवलिंग के पूजन से ही प्राप्त हो जाता है।

शास्त्रों के अनुसार रावण रससिद्ध योगी था, उसने पारद शिवलिंग की पूजा कर शिव को पूर्ण प्रसन्न कर अपनी नगरी स्वर्णमयी बनाने में सफल हो सका था। बाणासुर ने पारद शिवलिंग की पूजा कर उनसे मनोवांछित वर प्राप्त किया था, यह विवरण 'रुद्र-संहिता' में स्पष्ट रूप से उल्लिखित है।

मैंने पिछले पांच वर्षों से इस प्रकार के रससिद्ध पारे को ठोस बनाकर गई शिवलिंग बनाये हैं, और जिन-जिन शिष्यों को या परिचितों को दिये हैं, वे सभी आज अच्छे स्तर पर हैं, और आश्चर्यजनक उन्नति की तरफ अग्रसर हैं, साधकों को इससे अपनी साधनाओं में पूर्ण सफलता मिली है, और व्यापारियों को इसकी वजह से जो आश्चर्यजनक उन्नति प्राप्त हुई है, वह उनके स्वयं के लिए भी चकित कर देने वाली है।

नीचे मैं कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थों के विवरण दे रहा हूं, जिससे स्पष्ट होता है कि पारद शिवलिंग कितना अधिक महत्वपूर्ण है :

१. योगशिखोपनिषद्

रसलिंगं महालिंगं शिवशक्तिनिकेतनम्।
लिंगं शिवालयं प्रोक्तं सिद्धिदं सर्वदेहिनाम्॥

अर्थात् रसलिंग ही महालिंग है, और इसे ही शिव शक्ति का घर या शिवालय कह सकते हैं, इसके प्राप्त होने से ही पूर्ण सिद्धि प्राप्त होती है।

२. सर्वदर्शनसंग्रह

अभ्रकं तव बीजं तु मम बीजं तु पारदः।
बद्धो पारद लिंगो यं मृत्यु दारिद्र्य नाशनम्॥

अर्थात् भगवान् शंकर स्वयं भगवती से कहते हैं कि पारद को ठोस-कर लिंगाकार स्वरूप देकर जो पूजन करता है, उसे जीवन में मृत्यु-भय व्याप्त नहीं होता, और किसी भी हालत में उसके घर में दरिद्रता नहीं आ पाती।

३. रसरत्नसमुच्चय

विधाय रसलिंगयो भक्तियुक्तः समर्चयेत्।
जगत्त्रितयलिंगानां पूजाफलमवाप्नुयात्॥

अर्थात् जो भक्ति के साथ पारद शिवलिंग की पूजा करता है, उसे तीनों लोकों में स्थित शिवलिंग की पूजा का फल प्राप्त होता है, तथा उससे समस्त महापाप नष्ट हो जाते हैं।

४. रसार्णव-तन्त्र

धर्मार्थकाममोक्षाख्या पुरुषार्थश्चतुर्विधा।
सिध्यन्ति नात्र सन्देहो रसराज प्रसादतः॥

अर्थात् जो व्यक्ति पारद शिवलिंग की एक बार भी पूजा कर लेता है, उसे इस जीवन में ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों प्रकार के पुरुषार्थों की प्राप्ति हो जाती है।

स्वयम्भू लिंग सहस्रैर्यत्फलं सम्यगर्चनात्।
तत्फलं कोटिगुणितं रसलिंगार्चनाद्भवेत्॥

अर्थात् हजारों प्रसिद्ध लिंगों की पूजा से जो फल मिलता है, उससे करोड़ गुना फल पारद-निर्मित शिवलिंग की पूजा से सहज में ही प्राप्त हो जाता है।

५. शिव निर्णय रत्नाकर

मृदः कोटिगुणं स्तर्णं, स्वर्णात्कोटि गुणं मणिः।
मणेः कोटिगुणं बाणो बाणात्कोटिगुणं रसः
रसात्परतरं लिंग न भूतो न भविष्यति ॥

अर्थात् मिट्टी या पत्थर से करोड़ गुना अधिक फल स्वर्ण निर्मित शिवलिंग के पूजन से मिलता है, स्वर्ण से करोड़ गुना अधिक मणि और मणि से करोड़ गुना अधिक फल बाणलिंग नर्मदेश्वर के पूजन से प्राप्त होता है, नर्मदेश्वर बाणलिंग से भी करोड़ गुना अधिक फल पारद शिवलिंग के पूजन या दर्शन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है, पारद निर्मित शिवलिंग से श्रेष्ठ शिवलिंग न तो संसार में हुआ है और न हो सकता है।

६. रस मार्तण्ड

लिंग कोटि सहस्रस्य यत्फलं सम्यगर्चनात्।
तत्फलं कोटिगुणित रसलिंगार्चनाद् भवेत्,
ब्रह्महत्यासहस्राणि गोहत्याशतानि च
तत्क्षणाद्विलयं यान्ति रसलिंगस्य दर्शनात्,
स्पर्शनात्प्राप्यते मुक्तिरिति सत्यं शिवोदितम् ॥

अर्थात् हजारों-करोड़ों शिवलिंगों की पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, उससे भी करोड़ों गुना फल पारद शिवलिंग के पूजन से प्राप्त होता है, हजारों ब्रह्महत्याओं और सैकड़ों गोहत्याओं का किया हुआ पाप भी पारद शिवलिंग के दर्शन करते ही दूर हो जाता है, स्पर्श करने से तो निश्चित रूप से मुक्ति प्राप्त होती है, यह स्वयं भगवान शिव का कथन है।

७. ब्रह्मपुराण

धन्यास्ते पुरुषः लोके येऽर्चयन्ति रसेश्वरम्।
सर्वपापहरं देव सर्वकामफलप्रदम् ॥
ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्यास्त्रियः शूद्रन्त्यजादयः
सम्पूज्य तं सुरवरं प्राप्नुवन्ति परां गतिम् ॥

अर्थात् संसार में वे मनुष्य धन्य हैं, जो समस्त मनोवांछित फलों को देने वाले पारद शिवलिंग का पूजन करते हैं। इसका पूजन ब्राह्मण, क्षत्रिय,

वैश्य, शूद्र, स्त्री या अन्त्यज कोई भी करके पूर्ण भौतिक सुख प्राप्त करता हुआ परम गति को प्राप्त कर सकता है।

८. ब्रह्मवैवर्त पुराण

पच्यते कालसूत्रेण यावच्चन्द्रदिवाकरौ।
कृत्वालिंग सकृत् पूज्य वसेत्कल्पशतं दिवि ॥
प्रजावान् भूमिवान् विद्वान् पुत्रबांधववांस्तथा।
ज्ञानवान् मुक्तिवान् साधुः रस लिंगार्चनाद् भवेत् ॥

अर्थात् जो एक बार भी पारद शिवलिंग का विधि-विधान से पूजन कर लेता है, वह जब तक सूर्य और चन्द्र रहते हैं, तब तक पूर्ण सुख प्राप्त करता है, उसके जीवन में धन, यश, मान, पद-प्रतिष्ठा, पुत्र, पौत्र, विद्या आदि में कोई कमी नहीं रहती और अन्त में वह निश्चय ही मुक्ति प्राप्त करता है।

९. शिव पुराण

गोघ्नश्चैव कृतघ्नाश्च वीरहा भ्रूणहापि वा।
शरणागतघाती च मित्र विश्रम्भघातकः।
दुष्टपापसमाचारी मातृपितृप्रहापि वा।
अर्चनात् रसलिंगेन तत्तत्पापात् प्रमुच्यते ॥

अर्थात् गौ हत्यारा, कृतघ्न, वीरघाती, गर्भस्थ शिशु की हत्या करने वाला तथा माता-पिता का घातक भी यदि पारद शिवलिंग की पूजा करता है, तो वह तुरन्त सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

१० वायवीय संहिता

आयुरारोग्यमैश्वर्यंयच्चान्यदपि वांछितम्।
रसलिंगार्चनादिष्टं सर्वतं लभते नरः ॥

अर्थात् आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य तथा और जो भी मनोवांछित वस्तुएं हैं, उन सबको पारद शिवलिंग की पूजा से सहज में ही प्राप्त किया जा सकता है।

इसके अलावा भगवान शंकर ने स्वयं कहा है कि मुझे वह व्यक्ति ज्यादा प्रिय है, जो द्वादश ज्योतिर्लिंग के दर्शन करने की अपेक्षा मात्र पारद-शिवलिंग के दर्शन कर लेता है।

पारद-शिवलिंग आर्द्रता रहित, निश्चल, छिन्नपक्ष रहित, श्वेतलिंगा-

कार होना चाहिए और ऐसा शिवलिंग शास्त्र-सम्मत होना आवश्यक है, क्योंकि शिवलिंग और उसके आकार का एक निश्चित परिमाण है, यह कार्य केवल 'विजय-काल' में ही सम्पन्न करना चाहिए, और इस प्रकार श्रेष्ठ समय में पारे को रस-सिद्ध करके उसे ठोस बनाने की प्रक्रिया करनी चाहिए, साथ-ही-साथ शिवलिंग का आकार भी विजय-काल में ही सम्पन्न करना चाहिए।

इसके बाद श्रेष्ठ मुहूर्त में पारद शिवलिंग को मुद्रा बन्ध, अर्चन, प्राण-प्रतिष्ठा, मन्त्र-सिद्ध, रस-सिद्ध करना चाहिए, ऐसा होने के बाद संजीवनी मुद्रा मन्त्र से उसे प्रभावपूर्ण बनाना चाहिए, ऐसा होने पर ही पारद शिवलिंग दुर्लभ शिवलिंग बनता है, भारत में बहुत ही कम सौभाग्यशाली व्यक्तियों के घर में ऐसा शिवलिंग पाया जाता है।

शास्त्रों के अनुसार पारद शिवलिंग को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है, मेरे जीवन में ऐसे हजारों अनुभव हैं, यदि उन्हें लेखनीबद्ध किया जाए, तो पूरा एक ग्रन्थ बन सकता है कि पारद शिव-लिंग के पूजन से उन लोगों ने उन असम्भव कार्यों को भी संभव कर दिखाया है, जो उनके लिए संभव नहीं थे। ऐसे व्यक्ति दरिद्र के घर में जन्म लेकर भी प्रसिद्ध उद्योगपति और लक्ष्मीपति होते देखे गए हैं। संसार में और सभी तन्त्र-मन्त्र झूठे हो सकते हैं, पर ऐसा एक भी उदाहरण प्राप्त नहीं है कि किसी घर में पारद शिवलिंग स्थापित हो और उसके जीवन में पूर्णता प्राप्त न हुई हो।

मेरे स्वयं के अनुभव के आधार पर मैं यह घोषणा करने में सक्षम हूं कि पारद शिवलिंग अपने आप में दुर्लभ शिवलिंग है, बिना प्रसिद्ध योगी या गुरु के इस प्रकार का शिवलिंग प्राप्त नहीं हो पाता और भाग्य से ही रस-सिद्ध पारद शिवलिंग घर में स्थापित हो पाता है।

आज के इस युग में भी पारद शिवलिंग एक चमत्कार है, एक श्रेष्ठ साधना है, एक आश्चर्यजनक सफलतादायक उपाय है।

वस्तुतः पारद हमारे जीवन की श्रेष्ठतम धातु है और यह हमारे लिए सौभाग्य की बात है कि नागार्जुन के बाद अब पुनः पारे के महत्व को और उसकी क्रियाओं को लोगों ने जाना है, तथा साधकों ने पुनः परिश्रम, प्रयत्न कर अठारहों संस्कार सम्पन्न करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है।

इस लुप्त विद्या का पुनर्जीवन अपने आप में इस शताब्दी की अन्य-तम घटना है और अब मुझे विश्वास है कि हमारे आगे की पीढ़ी इस विद्या को विस्मृत नहीं होने देगी।

पारद शिवलिंग आज से नहीं हजारों-हजारों वर्षों से संसार श्रेष्ठतम वरदायक प्रभुत्व रहा है और यह हमारी पीढ़ी का सौभाग्य कि हमें जीवन में इस प्रकार का पारद शिवलिंग प्राप्य है।

3

मेरा चैलेन्ज है कि कोई इन मन्त्रों को गलत सिद्ध कर दे

मन्त्र शाश्वत हैं और आज से हजारों वर्ष पूर्व हमारे पूर्वजों के मन्त्रों के द्वारा जो शक्ति थी, वह आज भी विद्यमान है, आवश्यकता मन्त्रों की मूल ध्वनि और उनकी मूल भावना को समझने की। जब मन्त्र के मूल स्वरूप को हम भली प्रकार से नहीं समझ लेंगे, तब तक का प्रभाव ही प्राप्त नहीं हो सकेगा। अच्छे-से-अच्छा हथियार भी नि और नौसिखिये व्यक्ति के हाथ में पड़कर अस्तित्व-हीन हो जाता है, प्रकार अनाड़ी और नौसिखिये साधक के पास मन्त्र का प्रभाव भी व्यर्थ जाता है।

लाखों मन्त्रों में से कुछ मन्त्र नीचे दिये जा रहे हैं, ये सभी मन्त्र के युग में भी इतने ही धार वाले और पैने हैं, जितने कि आज से हज वर्ष पूर्व थे।

देश में बहुत ही कम ऐसे लोग बच गये हैं, जो सही प्रकार से ज्ञाता हों, या जिन्हें मंत्र का प्रामाणिक ज्ञान हो। जब तक मन्त्र की आत्मा को नहीं समझा जायगा, तब तक मंत्र के प्रभाव को हम प्राप्त कर सकेंगे। हमने देखा है कि लोग किसी भी मन्त्र को बराबर जपते हैं, परन्तु पांच-दस लाख मन्त्र-जप के बाद भी वे इच्छित लाभ प्राप्त कर पाते और ऐसी स्थिति आने पर वे निराशा में डूब जाते हैं। उन एक ही कथन होता है कि अब मन्त्रों में वह प्रभाव नहीं रहा जो कि वास में होना चाहिए।

वस्तुतः मन्त्र 'गुरु-मुख ध्वनि' है, पुस्तकों से लेकर मंत्र का जप

और बेमानी है, जैसा कि मैंने ऊपर बताया कि मन्त्र के मूल रहस्य को जब तक नहीं समझेंगे, तब तक किसी भी मन्त्र का लाभ कोई भी व्यक्ति या साधक नहीं उठा सकेगा।

मन्त्र का मूल रहस्य

चाहे मन्त्र वेदोक्त हो या अघोर मन्त्र हो, चाहे सामान्य मंत्र हो या साबर मंत्र हो, प्रत्येक मंत्र की मूलतः तीन भावनाएं सिद्ध की जाती हैं, और उन तीनों भावनाओं को सिद्ध करने के बाद ही मंत्र का प्रभाव अनुभव होने लगता है, इसके लिए जब तक मंत्र की मूल भावना और चेतना को नहीं समझा जायगा, तब तक चाहे हम एक करोड़ भी मंत्र जप लें, उसका कोई भी लाभ नहीं होने वाला है।

अंग व्याप्तिकरण

साधक के मुंह से ही मंत्र-ध्वनि निकलने से मन्त्र सिद्ध नहीं हो पाता, मन्त्र तो उसके रोम-रोम मे निःसृत होना चाहिए, इसीलिए मन्त्र ग्रन्थों में बताया है कि साधक को अनुष्ठान करने से पूर्व शारीरिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से निर्मल होना आवश्यक है, बाहरी रूप में तो स्नान आदि करके शुद्ध और पवित्र वस्त्र धारण करना आवश्यक है, आभ्यन्तरिक शुद्धि के लिए पंचगव्य—गो-मूत्र, गोबर, दूध, दही, घृत—लेना आवश्यक है। एक तोला पंचगव्य एक बार में लेने का विधान है, इस प्रकार मन्त्र जप करने से पूर्व तीन बार पंचगव्य लेना चाहिए, इससे शरीर का आन्तरिक पक्ष पूर्णतः पवित्र और शुद्ध हो जाता है और शरीर मन्त्र को पचाने तथा निःसृत करने में सक्षम हो पाता है, ऐसा होने पर ही मंत्र साधक के रोम-रोम से निःसृत हो सकता है।

देह-मन्त्र-स्थापन

मंत्र सिद्ध करने की दूसरी गोपनीय विधि यह है कि मन्त्र के प्रत्येक वर्ण को अपने शरीर में स्थापन कर ले, जिसे दूसरे शब्दों में अंगन्यास और करन्यास कहा जाता है। प्रत्येक मन्त्र का अंगन्यास और करन्यास अलग-अलग होता है, इस अंगन्यास और करन्यास के माध्यम से साधक उस मन्त्र के प्रत्येक वर्ण को अपने शरीर के सभी अंगों में स्थापित करता है और ऐसा करने पर वह साधक स्वयं, मन्त्रमय हो जाता है। इस प्रकार वह साधक नहीं रहता, अपितु स्वतः मन्त्र बन जाता है। इसके बाद जब वह मन्त्र जप करता है, तो केवल मुंह से ही मन्त्र-ध्वनि उच्चारित नहीं

होती, अपितु शरीर के रोम-रोम से मन्त्रध्वनि उच्चारित होने लगती और यही समग्र प्रभाव एक विशेष वातावरण की सृष्टि करने में सक्ष होता है, जिससे कि साधक को थोड़े समय में ही मन्त्र का वांछित फ प्राप्त हो जाता है।

मूल ध्वनि प्रयोग

मन्त्र सामान्य रूप से रीडिंग नहीं है, अपितु मन्त्र समग्रतः ध्वनि प्रधान है, जब तक मन्त्र की ध्वनि, उसके आरोह-अवरोह और मन्त्र उतार-चढ़ाव को हम नहीं समझेंगे, तब तक मन्त्र का उच्चारण भली प्रका से सम्भव ही नहीं है, इसीलिए शास्त्रों में कहा गया है कि पुस्तकों मन्त्र प्राप्त कर जो साधना करता है, वह मृत मन्त्र की साधना ही कह जाती है, क्योंकि पुस्तक मन्त्र तो बता सकती है, परन्तु मन्त्र की ध्वनि और उसके आरोह-अवरोह को गुरु ही बता सकता है कि मन्त्र में कह पर कितना रुकना है, किस अक्षर पर कितना जोर देना है, किस शब्द क कितना उच्चारित करना है, किस पर बलाघात करना है और किस शब को हल्के से उच्चारित करना है, क्योंकि पूरा-का-पूरा मन्त्र एक ही ध्वनि में उच्चारित नहीं होता। मन्त्र के प्रत्येक शब्द का अपने आप में अल अस्तित्व है, उसमें किसी शब्द पर जोर देना होता है तो किसी शब्द क अत्यन्त ही धीमी गति से उच्चारित करना होता है।

इस प्रकार मन्त्र को सही प्रकार से उच्चारण करने के लिए य आवश्यक है कि मन्त्र की ध्वनि को भली प्रकार सीखें और निरन्त अभ्यास के बाद जब हम आश्वस्त हो जायें कि हम जो उच्चारित कर र हैं, वह सही है, तभी उस मन्त्र की साधना करनी चाहिए और ऐसा कर पर निश्चय ही उसे शीघ्रातिशीघ्र सफलता प्राप्त होती है।

ये तीनों रहस्य मुझे एक उच्चकोटि के मन्त्र-अध्येता ने बताये जो वास्तव में ही विद्वान् थे और जिन्होंने साधना के क्षेत्र में अद्भु सफलताएं प्राप्त की थीं, उनके बारे में कहा जाता है कि मन्त्र उनके साम थिरकते थे।

इससे पहले मैंने अपनी जिन्दगी के बीस वर्ष साधना में व्यतीत क दिये थे और किंचित् मात्र भी सफलता नहीं मिली थी। इस प्रकार से अन्दर-ही-अन्दर टूट गया था और मुझे विश्वास हो गया था कि आज युग में मन्त्र केवल पुस्तकों की शोभा बनकर रह गये हैं, उनमें कोई भ दम-खम या प्रभाव नहीं रहा है, परन्तु उपर्युक्त मन्त्र-अध्येता से मिलने

बाद और उनके द्वारा बताई हुई विधि के अनुसार जब मैंने साधना की, तो पहली बार में ही मुझे आश्चर्यजनक सफलता मिल गई। इसके बाद तो मैंने जितनी भी साधनाएं की हैं, जितने भी प्रयोग सम्पन्न किये, उनमें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई।

वास्तव में ही उपर्युक्त तीनों तथ्य एक प्रकार से अब तक गोपनीय रहे हैं, इन तथ्यों के द्वारा ही मन्त्र चैतन्य हो पाता है, यदि उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर मंत्र साधना की जाय, तो मेरा चैलेंज है कि साधक किसी भी साधना में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है।

ब्रह्मत्व प्राप्ति का शाश्वत मन्त्र

मनुष्य स्वयं ब्रह्म का ही दूसरा रूप है या यों कहा जाय कि स्वयं ब्रह्म है। "अहं ब्रह्माऽस्मि" इसी भावना को प्रदर्शित करता है। जब वह ब्रह्म से छिटकता है, तभी वह मनुष्य-योनि में जन्म लेता है। वह जीवन में पूर्णता तभी प्राप्त कर सकता है, जब वह पुनः उसी परम सत्ता ब्रह्म में लीन हो जाय। इस ब्रह्म में लीन करने का संसार में एक ही मन्त्र है, जिसे हमारे शास्त्रों में 'गायत्री मन्त्र' शब्द से सम्बोधित किया है। मूलतः गायत्री ३२ अक्षरों से युक्त है, पर जनसाधारण में चौबीस अक्षरों से युक्त गायत्री ही प्रचलित है, इस मन्त्र के द्वारा व्यक्ति निश्चय ही उस परम तत्व को प्राप्त कर सकता है, जो कि समस्त ब्रह्माण्ड की सर्वोच्च सत्ता है।

गायत्री मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्

उपर्युक्त मन्त्र चौबीस अक्षर का है, परन्तु इसकी विशेषता यह है कि लिखते समय यह मन्त्र 'वरेण्यम्' लिखा जाता है, परन्तु उच्चारण करते समय 'वरेणियम्' शब्द उच्चारित होता है, यह आधे 'ण' के स्थान पर लघु 'णि' उच्चारित करने पर ही पूर्ण चौबीस अक्षर बनते हैं।

यदि जीवन में शीघ्र पूर्णता चाहे तो साधक को ३२ अक्षरों से युक्त गायत्री मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए, इसमें गोपनीय जो आठ अक्षर हैं, वे निम्न प्रकार से हैं :

"शिवो रजसे शिवातुं

इस प्रकार यदि साधक ३२ अक्षरों से युक्त गायत्री-मन्त्र का नित्य

जाप करे, तो इसके समान अमोघ मन्त्र नहीं है। निश्चय ही यह मंत्र पापी व्यक्ति को भी पूर्ण शुद्ध कर उसे ब्रह्मत्व तक पहुंचाने में सक्षम है।

जब तक व्यक्ति आंतरिक रूप से पूर्ण, शुद्ध और परिस्कृत नहीं हो जाता, जब तक उसकी अन्तर्वृत्तियां उजागर नहीं हो जातीं और जब तक शरीर में स्थित चक्रों का प्रस्फुटन नहीं हो जाता, तब तक चाहे लाखों मन्त्रों का जप करे वह सब व्यर्थ है, कुण्डलिनी जागृत होने पर ही व्यक्ति आंतरिक रूप से ब्रह्मत्व तक पहुंचने का अनुगामी हो सकता है, कुण्डलिनी जागरण का अन्तिम सोपान सहस्रार जागरण है, इसलिए जिसने मनुष्य जीवन में आकर कुण्डलिनी जागृत नहीं की, उसका जन्म ही व्यर्थ है और दूसरे शब्दों में उसकी योनि 'कूकर-योनि' से ज्यादा महत्व नहीं रखती।

यद्यपि कुण्डलिनी और सहस्रार जागरण का विधि-विधान योग ग्रन्थों में उल्लिखित है तथा योग की कठिन क्रियाओं को करने से ही कुण्डलिनी जागरण सम्भव है, परन्तु, यह लम्बा और थका देने वाला प्रयास है, समस्त ग्रंथों में केवल एक ही मन्त्र चेतना-मन्त्र है, जो मात्र ध्वनि के माध्यम से कुण्डलिनी जागरण करने में सक्षम है। अब यह गोपनीय मन्त्र पहली वार पाठकों के सामने स्पष्ट हो रहा है।

चेतना-मन्त्र

ओ३म् ह्लीं मम प्राण देह रोम प्रतिरोम चैतन्य जाग्रय ह्लीं ओ३म् नमः।

यह केवल एक मन्त्र ही नहीं है, अपितु अपने आप में मानव उत्थान की पूरी क्रिया समेटे हुए है, यह अकेला मन्त्र ही इतना अधिक क्षमतावान् है कि सामान्य से सामान्य मानव के भी आंतरिक जीवन को प्रकाशित कर उसकी कुण्डलिनी जाग्रत् कर देता है।

वस्तुतः यह गोपनीय मन्त्र संसार के आश्चर्यमय मन्त्रों में सर्वोपरि है।

जब जीवन होगा तो इसमें समस्याएं भी होंगी और जब समस्याएं होंगी, तो उसमें घात-प्रतिघात, शत्रु, भय, कष्ट, व्याधि, पीड़ा, दुख आदि भी होंगे ही, परन्तु जब तक हम इस विपरीत परिस्थितियों पर विजय प्राप्त नहीं कर लेंगे, तब तक हम सहज गति से अपने गंतव्य स्थल तक नहीं पहुंच पायेंगे। संसार में एक 'बगलामुखी मन्त्र' ही ऐसा मन्त्र है, जो इन समस्त तूफानों से टक्कर लेकर साधक को पूर्णता तक पहुंचा सकता है, यह मन्त्र अपने-आप में दहकता हुआ आग का गोला है, जो

अंधेरी घटाटोप रात्रि में भी प्रज्वलित है, यह एक ऐसा मन्त्र है, जो कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी खरा उतरता है। यह मन्त्र नहीं है, अपितु अपने आपमें हजारों-हजारों शक्तियों का तेज-पुंज है, जिसमें छोटी-मोटी समस्याएं स्वतः ही जलकर भस्म हो जाती हैं, केवल मात्र मन्त्र जप करने से ही मनुष्य विपत्तियों पर विजय और अपने शत्रुओं पर हावी होकर जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है।

आज तक इस मंत्र को कोई चैलेंज नहीं दे सका। आज तक इस मन्त्र को और इसके प्रभाव को असत्य सिद्ध नहीं कर सका। आज तक एक भी ऐसा उदाहरण नहीं है, कि इस मंत्र का प्रभाव साधक को प्राप्त न हुआ हो, इसीलिए तो इसे "तूफानों से टक्कर लेने वाला मन्त्र" कहा गया है।

बगलामुखी मन्त्र

ओ३म् ह्लीं बगला मुखि सर्व दुष्टानां वाचं मुखं पदं।
स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धि विनाशय ह्लीं ओ३म् स्वाहा ॥

संसार के समस्त मंत्रों में यह सर्वाधिक चैतन्य व प्रज्वलनशील और अमोघ मन्त्र है, कहा जाता है कि जहां सारे मंत्र फेल हो जायं, वहां यह मंत्र ताल ठोककर खड़ा रहता है और कार्य-सिद्धि कराने में समर्थ रहता है। वस्तुतः यह मंत्र मानव-जाति के लिए वरदानस्वरूप है, जिसमें कि वह शत्रुओं पर पूरी क्षमता के साथ विजय प्राप्त कर सके और अपने जीवन को शत्रु-रहित बनाकर सफलता प्राप्त कर सके।

अमोघ रक्षा और सुरक्षा प्रदान करने वाला नवार्ण मन्त्र

व्यक्ति तभी शत्रुओं पर हावी हो सकता है, जबकि वह स्वयं पूरी तरह से सुरक्षित हो। वह जीवन में बाधाओं से तभी संघर्ष ले सकता है, जब वह अपने आपमें भयमुक्त हो। इसके लिए पूरे विश्व में एक ही मंत्र है, जिसे शास्त्रों में 'नवार्ण मन्त्र' सम्बोधित किया है। यह नौ अक्षरों का छोटा-सा मंत्र है, परन्तु इसमें अद्‌भुत शक्ति छिपी हुई है। समस्त प्रकार की व्याधियों, बाहरी आक्रमणों और घात-प्रतिघातों से बचाने वाला यह एक मात्र मंत्र है, जिसे सिद्ध करने पर मानव को न शत्रुओं से भय रहता है और न किसी प्रकार की आधि-व्याधि, कष्ट-पीड़ा का डर रहता है। इस मंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह मानव को सभी दृष्टियों से सुरक्षा प्रदान करता है। ऐसे व्यक्ति पर किसी भी प्रकार का कोई तांत्रिक प्रभाव व्याप्त नहीं रहता।

नर्वाण-मन्त्र

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै ।

सिद्धाश्रम प्राप्ति का अद्वितीय मन्त्र

'सिद्धाश्रम' शब्द ही अपने आपमें इतना पवित्र और दिव्य है कि जिसे उच्चरित करते ही मन-प्राण एक सुखद फुहार से भीग जाता है । ऐसा लगता है जैसे इस घटाटोप अंधेरी रात से निकलकर एक सुगन्धित उन्मुक्त वातावरण में पहुंच गये हों । यह एक ऐसा दिव्य आश्रम है, जहां सैकड़ों वर्षों से योगी तपस्यारत हैं, जहां शास्त्रों से वर्णित कल्पवृक्ष विद्यमान है, जिसके नीचे जो भी भौतिक वस्तु की याचना की जाती है, वह तत्क्षण पूरी हो जाती है । यही एक मात्र ऐसा स्थान है, जहां न किसी प्रकार का भय है न दुख, न चिन्ता है न क्लेश, न किसी प्रकार की बीमारी है और न मृत्यु-भय । यहां पहुंचने-वाला व्यक्ति तन और मन से पूर्ण स्वस्थ रहता है और मृत्यु उसे स्पर्श नहीं कर पाती ।

यहां आश्रम तक बिरला ही पहुंच पाता है । जिसके पूर्व जन्मों के पुण्य उदय होते हैं, जो आठों जन्म पार करने की सामर्थ्य रखता है, जो उत्तम कोटि की साधनाओं में निष्णात होता है, वही इस प्रकार के आश्रम तक पहुंचने की क्षमता रख पाता है ।

परन्तु इसके साथ-साथ एक गोपनीय मंत्र भी उच्चकोटि के योगियों में व्याप्त है, जो मानव को इस आश्रम तक पहुंचाने में सक्षम है । यद्यपि यह मंत्र अभी तक गोपनीय रहा है और बहुत ही कम योगियों को इसका ज्ञान है परन्तु पाठकों को पहली बार इस अद्वितीय मंत्र से परिचित कराया जा रहा है, जिससे कि उनका सौभाग्य जाग्रत हो और वे इस जीवन में ही सिद्धाश्रम पहुंचकर अपने जीवन को पूर्णता दे सकें ।

दिव्य मन्त्र

ओ३म् सं नं रं यं ऐं दप्ताय दिव्याय गुरवै नमः ।

ब्रह्माण्ड को नियंत्रित करने वाला तेजस्वी 'वनोपमन्त्र'

आगे की पंक्तियों में जो मैं मंत्र देने जा रहा हूं, वह अब तक गोपनीय और रहस्यमय मंत्र रहा है, यह अकेला मंत्र पृथ्वी ही नहीं अपितु पूरे ब्रह्माण्ड-को नियंत्रित करने में सक्षम है, इसे सिद्ध करने के बाद उसकी उंगलियों के इशारे पर देवता, गन्धर्व, किन्नर नाचते हैं । इस मंत्र से सिद्ध

योगी हवा में उड़ सकते हैं, पानी के भीतर कई वर्षों तक समाधि लगा सकते हैं, कई-कई पूर्व जन्मों को देख सकते हैं और आने वाले जन्मों को पहिचान सकते हैं, उसके लिए भूत-भविष्य सहज सुलभ है।

यह मंत्र सर्वथा गोपनीय, दुर्लभ, अमोघ और अद्वितीय रहा है, यदि यह कहा जाय कि पूरे संसार में केवल मात्र उंगलियों पर गिने जाने वाले साधकों को ही मंत्र का ज्ञान है, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं। इस प्रकार से देखा जाय तो संसार में जितने भी मंत्र हैं, उन सब मंत्रों में यह सिरमौर है, इस मन्त्र के द्वारा अन्य सभी प्रकार के मन्त्रों को नियंत्रित किया जा सकता है, इस मंत्र की साधना के बाद अन्य किसी भी मंत्र की साधना करने की जरूरत नहीं।

यह मंत्र नहीं अपितु 'मंत्र-राज' है, मन्त्र-शिरोमणि है, मन्त्र की पराकाष्ठा है, सिद्धाश्रम से भी जो श्रेष्ठ स्थिति पर पहुंचते हैं, उन्हें ही इस मन्त्र की साधना करने की स्वीकृति दी जाती है।

पहली बार पाठकों को यह अद्वितीय मन्त्र सुरक्षित थाती के रूप में भेंट-स्वरूप वरदान के रूप में दिया जा रहा है।

ओ३म् अस्य श्री नवदुर्गामहामन्त्रस्य किरातरूपधर ईश्वरः ऋषिः अनुष्टुप् छन्द अन्तर्यामो नारायणः किरातरूप धरेश्वरी नवदुर्गागायत्री देवता ओ३म् बीजं स्वाहा शक्तिः क्लीं कीलकं मम धर्मार्थमोक्षार्थे जपे विनियोगः॥ हंसिनी ह्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः॥ शंखिनी ह्लीं तर्जनीभ्यां नमः॥ चक्रिणी ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ गदिनी ह्लीं अनामिकाभ्यां नमः॥ शरिणी ह्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। त्रिशूल धारिणी ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ अथ हृदयादि॥ हंसिनी ह्लीं हृदयाय नमः॥ शंखिनी ह्लीं शिरसे स्वाहा। चक्रिणी ह्लीं शिखायै वषट्॥ गदिनी ह्लीं कवचाय हुम्॥ शरिणी ह्लीं नेत्रत्रयायं वोषट्॥ त्रिशूलधारिणी ह्लीं अस्त्राय फट्॥ ओ३म् भूर्भुवः स्वरोम् इति दिग्बन्धः॥ अथ ध्यानम्॥ अरिशंखकृपाणखेटबाणान्सुधनुष्क-शूलमय कर्तरीं दधाना॥ भजता महिषोत्तमांगसंस्था नवदूर्वासदृशी श्रिये स्तु दुर्गा॥ हेमपक्ष्मामिन्दुखण्डान्तर्मालिशंखांरिष्टाभीतिहस्तां त्रिनेत्राम्॥ हेमाब्जस्थां पीतवर्णां प्रसन्नां देवी दुर्गां दिव्यरूपां नमामि॥ ओ३म् सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ ओ३म् लं पृथिव्यात्मने गन्धं समर्पयामि॥ ओ३म् हं आकाशा-त्मने पुष्पं समर्पयामि॥ ओ३म् यं वायवात्मनेधूपंसमर्पयामि॥ ओ३म् रं आग्न्यात्मने दीपं समर्पयामि॥ ओ३म् वं अमृतात्मने अमृतनैवेद्यं सम-र्पयामि॥ ओम् ऐं ह्लीं श्रीं उत्तिष्ठ पुरुष किं स्वपिषि भय मे समु-

पस्थितम् ॥ यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय शमय स्वाहा ॥ ओ३म् नमश्चण्डिकायै नमः ॥ हेतुकं पूर्वपीठे तु आग्नेध्यां त्रिपुरान्तकम् ॥ दक्षिणे चाग्निर्बैतालं निर्ऋत्यां यमनिह्लकम् ॥ कालाख्यं वारुणे पीठे वायव्यां तु करालिनम् ॥ उत्तरे एकपादं ईशान्यां भीमरूपिणम् आकाशे तु निरालम्बं पाताले बडवानलम् ॥ यथा ग्रामे तथारण्ये रक्ष मां बटुकस्तथा ॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ओ३म् ह्लीं श्रीं दुं दुर्गायै नमः । जयन्तीपुरलाहिवाराहिण्यं नमः अष्टमहाकालि माहेश्वर्यै नमः चित्रकूट इन्द्राण्यै नमः । त्रिपुरब्रह्मचारिण्यै नमः । एकवृक्षशुभिण्यै महालक्ष्म्यै नमः ॥ त्रिपुरब्रह्माण्डनायक्यै नमः । एतानि क्षं क्षं त्रैलोक्यवशंकराणि । बीजाक्षराणि ओ३म् ह्लीं कुरु कुरु हुंफट् स्वाहा । ओ३म् एं ह्लीं श्रीं शकलदेशमुखभ्रमरीम् ॥ ओ३म् क्लीं ह्लीं सकल राजमुखभ्ररीम् ॥ ओ३म् क्रां सां सकलदेवतामुखभ्रमरीम् । ओ३म् क्लीं सकलकामिनी मुख भ्रमरीम् ॥ ओ३म् ईं सौः सकलदशमुखभ्रमरीम् ॥ हं सं कं फ्रैं त्रैलोक्यचित्तभ्रमरीम् ॥ ओ३म् क्षं क्षां क्षिं क्षीं क्षुं क्षूं क्षें क्षों क्षौं क्षं क्षः ॥ अग्रभैरवादिभूतप्रेतपिशाच चित्तभ्रमरी हुं क्षुं हुं क्लीं राजमन्त्रभ्रमरी हुं क्षुं क्लीं सिद्धमन्त्र यन्त्रतन्त्रंभ्रमरीं हुं क्षुं हुं क्लीं साध्यमन्त्रयन्त्रतन्त्रभ्रमरीं सकलसुरासुरसर्वमन्त्रयन्त्रतन्त्रभ्रमरी सर्वक्षोभिणी सर्वक्लेदिनी सकलमनोन्मादकरी आं ह्लीं क्रीं परमकल्याणी महायोगिनी । ओ३म् महाविद्यां प्रयक्ष्यामि महादेवेन निर्मिताम् । चिन्तितां किरातरूपेण मारणां हृदयनन्दिनीम् । उत्तमा सर्वविद्यानां सर्वभूतवशंकरी । सर्वपाप क्षयंकरी सर्वशत्रुनिवारिणी । ओ३म् कुलकरी गोत्रकरी धनकरी धान्यकरी बलकरी यशकरी विद्याकरी उत्साहबलवर्धिनी भूतानां विजृम्भिणी स्तम्भिनी मोहिनी द्राविणी सर्वमन्त्रप्रभञ्जिनी सर्ववि[illegible]प्रमोदिनी सर्वज्वरोत्सादकरी ऐकाहिकं द्वयाहिकं त्र्याहिकं चातुर्थिकमर्द्धं मासिकं द्विमासिकं त्रिमासिकं षाण्मासिकं सांवत्सरिकं वातिकं पैत्तिकं श्लैष्मिकं सान्निपातिकं सन्ततज्वरं शीतज्वरम् उष्णज्वरं विषमज्वरं तापज्वरं च गण्डमालालूततालु वर्णानां त्रासिनी सर्पाणां त्रासिनी सर्वान् त्रासिनी शिरः शूलाक्षिशूलकर्णशूलदन्तशूलबाहुशूल हृदयशूलकुक्षिशूलपक्षशूलगुदशूलगुल्मशूलर्लिगशूलयोनिशूलपादशूलसर्वांगशूल विस्फोटकादि इति आत्मरक्षा परोक्षरक्षा प्रत्यक्षरक्षा अग्निरक्षा अघोररक्षा वायुरक्षा उदकरक्षा महान्धकारोल्काविद्यूदनिलचरोशस्त्रास्त्रे मां रक्ष रक्ष स्वाहा ॥ महादेवस्य तेजसां भयंकराविष्टदेवता बन्ध्यामि पन्था मुगतचौराद्रक्षते बन्धकस्य कण्टकं बन्ध्यामि महादेवस्य पंचशीर्षेण पाणिनी महा

देवस्य तेजसा सर्वशूलान् कहपिंगलेन कण्टक मयरुद्राणीं ओ३म् ओं औं मातंगी स्वर स्वर ब्रह्मदण्ड विश्वारुद्रदण्ड प्रज्वल वायुदण्ड प्रहर प्रहर इन्द्रदण्ड भक्ष भक्ष निर्ऋतिदण्ड हिलि हिलि यमदण्ड नित्योपवादिनि हंसिनी शंखिनी चक्रिणी गदिनी शूलिनी त्रिशूलधारिणी हुंफट् स्वाहा। आयुर्विद्यां च सौभाग्यं धान्यं च धनमेव च। सदा शिवं पुत्रवृद्धि देहि मे चण्डिके शुभे।

वस्तुतः यह मंत्र अपने आपमें अद्भुत तेजस्वी और करोड़ों परमाणु बमों से भी ज्यादा विध्वंसकारी तथा रक्षात्मक दोनों ही रूपों में है, इस मन्त्र के एक प्रयोग से ही व्यक्ति समस्त प्रकृति को अपने नियंत्रण में ले सकता है, उसके लिए संसार की कोई भी वस्तु अलभ्य नहीं होती, उसकी कोई भी इच्छा अपूर्ण नहीं रहती।

इससे बड़ी बात यह है कि यह मन्त्र पूर्णतः सौम्य और सर्वोपयोगी है, जो जीवन में पूर्ण भौतिक, आध्यात्मिक सुख प्रदान करता हुआ अन्त में ब्रह्मत्व लीन होने में सहायक है।

४

अज्ञात तन्त्रों की खोज में

तन्त्र शब्द को सही प्रकार से समझने की जरूरत है, इससे भड़कने की आवश्यकता नहीं है, तन्त्र तो व्यवस्थित ज्ञान को कहते हैं। सही प्रामाणिक, व्यवस्थित और जनोपयोगी साधना को तन्त्र कहा जाता है।

श्री हिरण्मय ने जीवन के बहुमूल्य वर्ष इन अज्ञात तन्त्रों की खोज में व्यतीत किये हैं और इस खोज में उन्हें बहुमूल्य सामग्री उपलब्ध हुई है, प्रस्तुत लेख में उन्होंने 'क्रियोड्डीश तन्त्र' की खोज के बारे में जो विवरण दिया है, वह रोमांचित कर देने वाला है।

संजीवनी विद्या की एक मात्र जानकार साधिका भैरवी का साक्षात्कार तो दिल दहला देने वाला है, पर साधकों को इस प्रकार के खतरे पग-पग पर उठाने पड़ते हैं—पढ़िये लेखक के ही शब्दों में उनकी खोज-कथा:

तन्त्र के प्रति मेरा रुझान बचपन से ही रहा है, मेरे पिता स्वयं एक अच्छे तांत्रिक थे, उनसे भी मुझे कुछ सीखने को मिला था, मगर वह सब सतही था, ज्यों-ज्यों मैं बड़ा होता गया, त्यों-त्यों इसके प्रति आकर्षण बढ़ता गया। सयाना होने पर पिताजी ने मेरी शादी कर दी और नौकरी में लगा दिया, परन्तु मेरा मन नौकरी में नहीं लग रहा था, मैं तो हर क्षण तंत्र के बारे में ही सोचता रहता था। एक दिन मेरा मित्र कात्यायन मेरे घर आया और बात तंत्र पर चल पड़ी तो उसने कहा—तंत्र तो हजारों हैं, परन्तु अभी तक भी कई ऐसे तंत्र अज्ञात हैं, जो जन-साधारण के सामने नहीं आ सके हैं, और उनका लाभ इस संसार को नहीं मिल सका है, इस पर मैंने कहा कि क्यों न हम कुछ समय अज्ञात तंत्रों की खोज में ही व्यतीत करें और उन तंत्रों को ढूंढ़ निकालें, जो सर्वथा लुप्त और अज्ञात हैं।

मेरा मित्र तो चला गया परन्तु यह बात मेरे मानस में घुमड़ती रही और मैं एक दिन अपने पिताजी से जबरदस्ती जाने की बात कर, बिना उनकी सलाह की परवाह किये अपने मित्र के साथ घर से निकल पड़ा। चलते समय सोचा था कि इस कार्य में दो-तीन, पांच या दस वर्ष भी लग सकते है, ऐसा भी हो सकता है कि वापिस नहीं भी आना हो।

और मैंने अपने मित्र के साथ इन अज्ञात तंत्रों की खोज में लगभग आठ वर्ष व्यतीत कर दिये। इन आठ वर्षों में न तो मैं घर आया और न घर से किसी प्रकार का सम्पर्क ही रखा, इन्हीं आठ वर्षों में मुझे क्रियोड्डीश तन्त्र प्राप्त होने का जो अनुभव प्राप्त हुआ, वह मैं प्रस्तुत कर रहा हूं।

गर्मियों के दिन थे और हम दोनों ऋषिकेश से आगे पहाड़ों की तरफ बढ़ रहे थे। हमने ऋषिकेश में ही गंगा के किनारे एक तांत्रिक से खिरना गांव के पास पहाड़ी पर रहने वाली भैरवी के बारे में सुना था और उससे यह भी पता चला था कि उसके पास क्रियोड्डीश तन्त्र का प्रामाणिक ग्रन्थ है।

यह स्थान ऋषिकेश से लगभग पौने दो सौ किलोमीटर दूर जंगल की ओर है। कुछ समय तक एक ट्रक की सहायता से बद्रीनाथ जाने वाली सड़क पर आगे बढ़े, परन्तु हिरमना गांव के पास से सड़क छोड़ देनी पड़ती है और बाईं तरफ को जो पगडंडी जाती है, वह खिरना गांव पहुंचती है।

हिरमना से जब हम पैदल चले तो मई की तेज धूप सीधी हम पर पड़

रही थी। पहाड़ों का रास्ता ऊबड़-खाबड़ होता ही है और पग-पग पर खतरे भरे रहते हैं, हिरमना से लगभग १३ किलोमीटर पर मीरा गांव आता है, वहां पर हमने रात्रि-विश्राम किया और दूसरे दिन प्रातःकाल ही खिरना के लिए चल पड़े।

पसीने से लथपथ, भूख से बेहाल जब हम खिरना के पास पहुंचे तब तक हमारा सारा साहस चुक गया था। फिर भी अपनी मंजिल के पास पहुंचने पर जो प्रसन्नता मन में हुई उससे थोड़ा साहस का संचार हुआ। यह लगभग ३०० घरों का छोटा-सा गांव है, और गांव से सटी हुई ही एक पहाड़ी है, जिसे घोड़ाचाढ़ कहते हैं। गांव में हमने कुछ समय विश्राम किया, तब तक सुबह के ग्यारह बज गये थे। जब हमने पहाड़ी पर रहने वाली तांत्रिका के बारे में जानकारी चाही तो गांव वाले आश्चर्य से मेरी ओर ताकने लगे, उन्होंने जो कुछ बताया वह रोमांचित कर देने वाला था। गांव के लगभग सभी लोग कुछ-न-कुछ उसके बारे में बता रहे थे, और सभी के विवरण आश्चर्यचकित कर देने वाले थे—कि वह राक्षसनी है, और रोज कहीं से मुर्दा लाकर खाती है, कि वह नंगी ही रहती है, और पागल है, कि वह व्यक्ति को देखते ही उस पर झपट पड़ती है, और एक ही क्षण में उसकी गर्दन मरोड़कर सारा खून गटगट पी जाती है, और ये सभी विवरण हमारे हौसले पस्त करने के लिए काफी थे। मैं तो कुछ ठिठक-सा गया था, और वापस लौटने के बारे में सोचने लगा, परन्तु मेरे मित्र ने साहस भरा कि जब यहां तक पहुंच गये हैं, तो पहाड़ी के ऊपर भी जायेंगे, देखा जायगा, वहां जो कुछ भी होगा। और हम दोनों पहाड़ी की ओर बढ़ गये।

पहाड़ी की सीधी चढ़ाई है, और एक मामूली-सी पगडंडी-सी दिखाई देती है। एक-एक पग पत्थर पर जमा-जमाकर चढ़ना पड़ता था, क्योंकि पत्थर ऊबड़-खाबड़ थे, और थोड़ा-सा भी पैर फिसलने पर बाईं तरफ की गहरी खाई में गिरने का भय बराबर बना रहा था।

जब हम ऊपर पहुंचे उस समय लगभग दिन के तीन बजे थे। हमने देखा कि पहाड़ के पत्थरों को ही चुनकर दो कमरे-से बना दिये हैं, और तीसरा एक ओर अलग कमरा-सा बना हुआ है जिसमें किसी भैरव की लम्बी मूर्ति है। हम उस तीसरे कमरे के सामने जाकर खड़े हो गये, अन्दर थोड़ा-सा अंधेरा था, और आदमकद भैरव की मूर्ति अनघड़ पत्थर की खड़ी हुई थी जिस पर सिन्दूर और घी चुपड़ा हुआ था, वहां इसके अलावा भैरवी या अन्य किसी के भी दर्शन नहीं हुए।

तीनों कमरे ऊबड़-खाबड़-अनगढ़ पत्थरों से बने हुए थे, और किसी प्रकार का जोड़ या प्लास्टर आदि दिखाई नहीं दे रहा था। मन्दिर से हटकर हम दूसरे कमरे की ओर बढ़े तो अन्दर एक मानव-आकृति बैठी हुई दिखाई दी। कमरे के अन्दर अंधेरा होने के कारण स्पष्ट रूप से तो उसे देखना सम्भव नहीं हुआ, परन्तु एक क्षण में जो कुछ देखा, वह भयानक अवश्य था।

तभी हमें देख अन्दर बैठी हुई नारी-मूर्ति वाहर आ गई। लम्बा कद, वड़ी-बड़ी आंखें और सिर पर इतने लम्बे केश कि पैरों के घुटनों को भी ढक सके, सर्वथा नग्न-सी यह भैरवी हमें देखते ही जोरों से खो-खो करके हंस पड़ी, और मंदिर में जाकर सिन्दूर से लगे हुए अपने तिलक पर और सिन्दूर का तिलक लगाकर बाहर आ गई, और मन्दिर के बाहर ही एक चट्टान पर बैठकर हम दोनों निरीह चूहों की ओर देखने लगी।

हम चुपचाप खड़े थे, किसी नारी को इतना लम्बा पहली बार देखा था। उसकी आंखें लाल भभूका हो रही थीं, ऐसा लग रहा था कि वह कोई वामाचार साधना करके अभी-अभी वाहर आयी है।

कुछ क्षणों तक वह हम दोनों को घूरती रही, फिर अचानक झपट्टे के साथ उठी और एक ही हाथ से धक्का देकर मेरे मित्र को गिरा दिया। उसके धक्के के वेग से मेरा मित्र कात्यायन लगभग पांच-छः फीट दूर जाकर गिरा। मैं बाल-बाल बच गया, मैंने दौड़कर कात्यायन को उठाया और हम रक्षा के लिए हाथ में पत्थर लेकर खड़े हो गये। वह वहीं पर खड़ी-खड़ी उसी प्रकार ताकती रही जैसे कि शेरनी अपने शिकार पर झपट्टा मारने से पहले ताकती है।

परन्तु अब हम डटकर खड़े रहे तो उसने पहाड़ी भाषा में कुछ पूछा, पर वह भाषा हमारी समझ में नहीं आई। संकेत से इतना ही पता लग सका कि वह पूछ रही है कि हम कौन हैं? और क्यों आये हैं?

मैंने भाषा और संकेतों से अपने आने का कारण बताया तो वह अविचलित भाव से उसी प्रकार खड़ी रही और अन्दर आकर शराब जैसी ही कोई बोतल लाकर एक ही घूंट में गट-गट कर पी गई।

सारा ही दृश्य भयानक और रोमांचक-सा था, पर हम भी निश्चय करके वहां खड़े रहे। यदि इस बार इसने झपट्टा मारा तो हम पत्थरों से अवश्य ही प्रहार करेंगे, फिर जो कुछ भी होगा देखा जाएगा।

परन्तु वह हमारी दृढ़ता से प्रभावित-सी हो गई थी। वह तीसरे कमरे में जाकर दो क्षण रुकी, और जब बाहर आयी तो उसके साथ लम्बे

शेरनी भी थी। शेरनी को देखकर हम वास्तव में ही घबरा गये, हमें यह भरोसा नहीं था कि यह पालतू शेरनी हम पर कब छलांग लगा दे, और हमारा जीवन समाप्त कर दे। पर वह भैरवी अत्यन्त शांत होकर उसके झूलते हुए बालों पर हाथ फेर रही थी।

तब तक शाम के पांच बज गए। पहाड़ों पर रात जल्दी घिरती है। हम निर्णय नहीं कर पा रहे थे कि वहां पर रुकें या वापिस पहाड़ी के नीचे उतर जाएं। तभी उस अघोर साधना में रत भैरवी ने संकेत से मुझे पास बुलाया, मेरी हिम्मत उसके और उसके हाथ के पास खड़ी शेरनी के पास जाने की नहीं हो रही थी। अब की बार उसने पहाड़ी मिश्रित हिन्दी में पूछा कि यहां क्या देखने या जानने के लिए आये हो ? तो मेरे मित्र ने बताया कि हमने सुना है आपके पास क्रियोड्डीश तंत्र की प्रामाणिक प्रति है, और आपने इस पूरे तंत्र को साधा है।

यह सुनकर वह जोरों से हंस पड़ी, ऐसा लगा जैसे बांस का जंगल खड़खड़ा गया हो। उसकी हंसी में एक भयानकता थी, फिर भी हमें ऐसा लग रहा था कि उसके हृदय में और आंखों में हिंसा के स्थान पर स्नेह और मधुरता उत्पन्न हो रही है।

फिर तो किसी प्रकार उसने रुक जाने के लिए कहा और किस प्रकार उसका स्नेह तथा अपनत्व मिला, यह एक लम्बी कहानी है। हम वहीं पहाड़ी पर रुक गये, यद्यपि उस पहली रात में हम दोनों बारी-बारी से उठकर पहरा देते रहे, कि न मालूम कब क्या स्थिति बन जाय, परन्तु भैरवी की तरफ से कोई भी अप्रिय घटना घटित नहीं हुई।

चौथे दिन उसने उसी कमरे से क्रियोड्डीश तंत्र की हस्तलिखित प्रति हमें लाकर दी, जिसमें शेरनी बंधी हुई थी। पन्ने काफी जर्जर हो गये थे, और प्राचीनकाल के किसी पेड़ की छाल पर लिखे हुए थे।

क्रियोड्डीश तंत्र अपने आपमें श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण तंत्र है, इसके बारे में तांत्रिकों के मन में जिज्ञासा तो बराबर बनी रही है, परन्तु प्रामाणिक प्रति पूरे भारतवर्ष में एक मात्र वहीं पर सुलभ है। हम वहां लगभग बीस दिन रहे और पूरे क्रियोड्डीश तंत्र को पन्नों पर उतारते रहे। इसमें कोई दो राय नहीं है कि वह क्रियोड्डीश तंत्र की श्रेष्ठतम जानकार है, इसके अलावा भी उसे असीम सिद्धियां प्राप्त हैं।

क्रियोड्डीश तंत्र का प्रारम्भ शंकर-पार्वती के संवाद से होता है। यह चौबीस पन्नों की पुस्तिका है, और जिस छाल पर लिखा हुआ है, वह छाल डेढ़ फीट चौड़ी तथा एक फीट लम्बी है। दूसरे पन्ने पर किसी

भी प्रकार की बीमारी या रोग को समाप्त करने का फल दिया गया है। थोड़ा-सा जल लेकर ग्यारह बार इस मंत्र को पढ़कर वह जल यदि रोगी को पिला दिया जाय तो किसी भी प्रकार का ज्वर समाप्त हो जाता है। पाठकों के लाभार्थ इस मंत्र को दे रहे हैं।

मंत्र

ओ३म् नमो भगवती वज्रश्रृंखले हनतु भक्षतु खदतु अहो रक्तं पिब पिब नरवक्षास्थिरक्तपटे भस्मांगिभस्मलिप्तशरीरे वज्रायुधे वज्रप्राकारा- निचितै पूर्वां मुंचतु दक्षिणां दिशं मुंचतु पश्चिमां दिशं मुंचतु उत्तरांदिशं मुंचतु नागार्थं धनग्रहपति वन्धतु नागपीठ वन्धतु यक्ष राक्षसेपिशाचान् वन्धतु प्रेत भूतगंधर्वादयो ये केचिद् उपद्रवास्तेभ्यो रक्षतु ऊर्ध्वं रक्षतु अधो रक्षतु श्येनिकां मुंचतु ज्वल महाबले एह्येहितु मोटि मोटि सटावलि वज्राग्नि वज्रप्राकारे ऐं फट्ह्रीं ह्रीं श्रीं फट् ह्रूं हं फुं फें फः सर्व ग्रहेभ्यः सर्व व्याधिभ्यः सर्वदुष्टोपद्रवेभ्यः ह्रीं अशेषेभ्यों मां रक्षतु।

इसके आगे शिव-पूजा विधान बताया है कि किस प्रकार से सर्व- व्याधि-विमोचन इस तंत्रोक्त विधान से किया जा सकता है। पुस्तक में आं माला विधान, आह्व विधान बताने के साथ-साथ जिन स्त्रियों की 'सन्तान गर्भ में ही समाप्त हो जाती है, उसका प्रयोग बताया है। इसके अनुसार प्रयोग करने पर कभी भी किसी भी हालत में गर्भ समाप्त नहीं होता। चौथे पेज पर रुद्र कवच दिया है, जो कि अद्‌भुत और आश्चर्यजनक प्रभावयुक्त है, यह रुद्र कवच अभी तक अज्ञात था। पहली बार इस पुस्तक के माध्यम में वह सुलभ हो सका है। आगे के पृष्ठों में वशीकरण प्रयोग दिये हैं, और यह बताया है कि इस प्रयोग से पत्थर के समान हृदय रखने वाले पुरुष या स्त्री को भी वश में किया जा सकता है। इसी प्रकार से शत्रु को स्तम्भन करने की विधि भी समझाई है।

पुस्तक में वशीकरण से सम्बन्धित अद्वितीय प्रयोग हैं और प्रत्येक प्रयोग इतने सरल व उच्चकोटि के हैं कि उनकी तुलना नहीं की जा सकती। साथ-ही-साथ अभिचार क्रिया द्वारा मारण और उच्चाटन प्रयोग भी दिये हैं।

दसवें पृष्ठ पर बटुक भैरव प्रयोग है, साथ-ही-साथ न्यास, ध्यान आदि देकर बताया है कि भैरव प्रयोग से किस प्रकार आर्थिक समृद्धि प्राप्त की जा सकती है। इस प्रयोग से मात्र एक दिन में ही भैरव को साध्य कर उसके प्रत्यक्ष दर्शन करना सम्भव है और उसके बाद भैरव को

जो भी कहा जायगा कुछ ही क्षणों में वह कार्य सम्पन्न होगा। दूरस्थ व्यक्ति से सम्बन्धित समाचार प्राप्त करना, लाखों मील दूर बैठे व्यक्ति को देखना या गोपनीय-से-गोपनीय स्थान पर रखी हुई सामग्री को ले आना आदि इस प्रयोग से सम्भव है, साथ-ही-साथ यह वटुक भैरव प्रयोग इतना सरल है कि सामान्य साधक भी इसको सिद्ध कर अतुलनीय शक्ति प्राप्त कर सकता है।

इसके बाद स्वतः अग्नि प्रज्वलित करने का भद्रकाली प्रयोग दिया है। यह प्रयोग एक रात्रि में ही सम्पन्न करने का विधान है, इस प्रयोग के बाद भद्रकाली को आज्ञा देने पर कहीं पर भी स्वतः अग्नि प्रज्वलित की जा सकती है। यदि एक से अधिक स्थानों पर अग्नि प्रज्वलित करनी हो तो यह सब मात्र एक मंत्र से ही संभव है। यदि साधक चाहे तो यह सब मात्र एक मंत्र से ही संभव है, यदि साधक चाहे तो अग्निपुंज आकाश से प्राप्त कर सकता है और वह आकाश से अग्नि-पुंज उतरता हुआ ऐसा अनुभव होता है जैसे कोई मशाल ऊपर से लेकर आ रहा हो, इसे एक नहीं लाखों, करोड़ों व्यक्ति अपनी आंखों से देख सकते हैं, और सबके देखते-देखते वह अग्नि-पुंज निश्चित और निर्दिष्ट स्थान पर स्थापित हो जाता है। इस प्रकार की अग्नि को जलाए रखने के लिए किसी प्रकार की लकड़ी या अन्य द्रव्य की आवश्यकता नहीं होती। सार्वजनिक रूप से यज्ञ करते समय लाखों लोगों के सामने यज्ञ-कुण्ड में इस प्रकार से देवाग्नि मंगाकर स्थापित की जा सकती है, विशेषता यह है कि यह अग्नि महीनों तक बिना किसी साधन के जलती रहती है।

इसके बाद महाकाल भैरव साधना के साथ-साथ मृत्युंजय मंत्र और प्रयोग दिया है, जिसके द्वारा मृत व्यक्ति को भी चेतनायुक्त बनाया जा सकता है।

इस ग्रन्थ की सबसे बड़ी उपलब्धि संजीवनी विद्या है। यह विद्या सर्वथा लोप हो गई थी, प्राचीनकाल में शुक्राचार्य ने अपने सभी मरे हुए अनुयायियों को इसी विद्या से जीवित किया था। भरवी इस विद्या की अन्तिम साधिका है, जिसे यह विद्या सिद्ध है। इसके अलावा विश्व में और किसी को यह विद्या सिद्ध हो, मैं कह नहीं सकता परन्तु इस ग्रन्थ में यह विद्या पूरी प्रामाणिकता के साथ स्पष्ट रूप से उल्लिखित है, जिसे कोई भी साधक सिद्ध कर सकता है।

प्रयोग

अतः परं देवि शृणु मृत संजीवनी तथा॥ आदो प्रासादबीज तदनु

मृतिहरं तारकं व्याहृति च प्रोच्चार्य त्र्यम्बकं यो जपति च सततं संपुटं चानुलोमम्। त्र्यम्बकमिति मृत्युंजयमंत्रस्य जपात् सर्वसिद्धिर्भवति। एतन्मन्त्रं जपेदाशु व्याधिमुक्तो भवेद्ध्रुवम्।

इसके बाद इस ग्रन्थ में भूतनी-साधन, योगिनी-साधन, आप्ता-विभूषणी-साधन, पराकुण्डलिनी-साधन, सिन्दूर-हारिणी-साधन, सिंहिनी-साधन, हंसिनी-साधन, नटी-साधन, चैंटि-साधन, कामेश्वरी-साधन, यज्ञ-साधन आदि प्रयोग दिए हैं। ये सारे प्रयोग एक से बढ़कर एक हैं और इतनी प्रामाणिकता के साथ दिए हुए हैं कि पढ़कर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है, इसके बाद पुनः मृत्युंजय विधान, त्र्यम्बक मृत्युंजय कवच, रक्षा विधान आदि प्रयोग दिए गए हैं।

इस प्रकार यह छोटा-सा ग्रन्थ अपने आप में श्रेष्ठतम ज्ञान लिए हुए है। यह एक मात्र ग्रन्थ है जिसमें मृतसंजीवनी विद्या को प्रामागिकता के साथ स्पष्ट किया है, जिसके प्रयोग से साधक मरे हुए व्यक्ति में प्राण संचार कर सकता है।

इन बीस दिनों में जहां हमने इस तंत्र को प्रामाणिकता के साथ लिखा, वहीं भैरवी से स्थान-स्थान पर समझा भी, यही नहीं इनमें से कुछ प्रयोग तो हमने सिद्ध भी किए।

जब हम बीस दिनों के बाद विदा लेने की इच्छा प्रकट कर रहे थे तो हमारे कदम पहाड़ी से नीचे उतरने की इच्छा नहीं रखते थे। इन बीस दिनों में वह शेरनी हमसे हिल-मिल गई थी और जब हम साधना या कार्य से थक जाते तो उसके साथ किलोल करते रहते थे। मां भैरवी का इन दिनों में जो मातृस्वरूप और वात्सल्य अनुभव किया, वह तो शब्दों से परे है।

५

अघोरियों के साथ तीस दिन

'अघोरी' शब्द का उच्चारण करते ही मन में एक झुरझुरी-सी आ जाती है, अघोरियों के बारे में जो कुछ पढ़ा, सुना है, वह रोमांचित कर

देने वाला है। सुनते आ रहे थे कि अघोरी निर्दयी होते हैं, वे मनुष्य को मारकर खा जाते हैं, अधिकतर श्मशान में ही रहते हैं, वे इतने गंदे होते हैं कि उनके शरीर से बदबू-सी आती है और इस प्रकार की कई बातें हवा में तैरती रहती हैं।

सदानन्द के द्वारा बताई हुई प्रामाणिक और सत्य घटना, जो उनके साथ घटित हुई, एक प्रामाणिक दस्तावेज—अघोरियों के बारे में।

मैं जीवन में प्रारम्भ से ही साधनामय रहा हूं, मेरा अधिकांश समय उत्तर प्रदेश में देहरादून के पास व्यतीत हुआ। माता-पिता ने मेरा विवाह कर दिया, परन्तु गृहस्थ जीवन में मानसिक रूप से मैं कभी भी जुड़ नहीं सका। नौकरी मैं अनमने भाव से करता रहा हूं और आज भी नौकरी में मुझे कोई रस नहीं है।

यद्यपि मैंने वेदों का अध्ययन किया है, साथ-ही-साथ कई साधनाएं भी सम्पन्न की हैं, शुरू में टाट बाबा के साथ भी रहा और थोड़ी-बहुत विद्याएं भी सीखीं परन्तु मेरे मन में संतुष्टि नहीं मिली। मेरा एक ही उद्देश्य रहा है कि मैं अपने जीवन में ही सिद्धाश्रम के दर्शन कर लूं और उसमें प्रवेश पा लूं। हम गृहस्थ लोगों को सिद्धाश्रम के बारे में कितनी जानकारी है यह मैं नहीं कह सकता परन्तु इतना अवश्य है कि उच्चकोटि के साधुओं, संन्यासियों और योगियों में सिद्धाश्रम प्रवेश की जितनी लगन, उत्कट इच्छा और तीव्र लालसा होती है वह शब्दों से परे है। वे किन्हीं भी परिस्थितियों से समझौता करने को तैयार रहते हैं, कठिन-से-कठिन साधनाएं करने को उत्सुक रहते हैं। अपने शरीर की बोटी-बोटी चील-कौओं को खिलाने में भी उन्हें हिचकिचाहट नहीं होती, बशर्ते उन्हें सिद्धाश्रम जाने का अवसर प्राप्त हो जाय, पर उन्हें कोई मार्गदर्शक नहीं मिलता, उन्हें ऐसा कोई गुरु उपलब्ध नहीं है जो उन्हें सही तरीकों से साधनाएं सम्पन्न करा सके, सिद्धाश्रम तक ले जा सके।

उन संन्यासियों के मुंह से सिद्धाश्रम के बारे में इतनी उत्सुकता और लगन देखकर मेरे मन की भी एक ही इच्छा तथा जीवन का एक ही लक्ष्य रह गया था कि मैं जल्दी-से-जल्दी सिद्धाश्रम पहुंच जाऊं। मेरे सौभाग्य से मुझे ऐसे गुरु भी प्राप्त हो गए, जो इस क्षेत्र के अन्यतम अध्येता हैं। परन्तु जब से मैंने यह सुना कि वे शीघ्र ही गृहस्थ छोड़कर संन्यास स्वीकार कर हिमालय में जाने के लिए कृत-संकल्प हैं, तब से मेरी लालसा अत्यधिक बढ़ गई। मेरे पास इस दृष्टि से समय बहुत कम है और मैं इस कम-से-कम समय में महाविद्याएं सिद्ध कर सफलता प्राप्त कर लेना

चाहता हूं।

इसी बीच मैंने जवलपुर से आगे भेड़ा घाट के पास स्वामी अजानानंद जी के बारे में सुना। मैंने उनका नाम सुन रखा था, इसलिए मैं उनके दर्शन करने के लिए घर से निकल पड़ा। मेरा विचार यह था कि एक या दो दिन उनके साथ रहकर देख लूंगा, इसलिए पांच दिन का अवकाश लेकर मैं जबलपुर के लिए रवाना हो गया।

जब मैं जबलपुर पहुंचा तो दिन के तीन वज चुके थे, मैंने वहां से वस द्वारा उसी दिन भेड़ा घाट जाने का निश्चय किया और जब मैं भेड़ा घाट पहुंचा तब लगभग शाम के छः वज चुके थे।

नर्मदा यहां पर बहुत ऊंचाई से गिरती है और एक ऐसा प्रपात बनाती है, जो आंखों को अत्यधिक सुखकर प्रतीत होता है। मैंने ऐसा निश्चय किया कि आज की रात मैं किसी होटल या धर्मशाला में बिताकर, प्रातः ही स्वामी जी के आश्रम तक जाने की कोशिश करूंगा।

तभी मुझे एक योगी-सा दिखाई दिया, जिसने गेरुए वस्त्र पहन रखे थे, लम्बी जटाएं थीं परन्तु वे सलीके से संवारी हुई थीं, लम्बा-चौड़ा शरीर, वलिष्ठ भुजाएं और हाथ में कमण्डल—सव मिलकर एक अच्छा प्रभाव मन पर डाल रहे थे। मैंने उन्हें प्रणाम किया तो उन्होंने आशीर्वाद की मुद्रा में कहा—आप जिनसे मिलने के लिए आये हैं, मैं वहीं चल रहा हूं यदि आप मेरे साथ चलना चाहें तो चल सकते हैं।

मैं-आश्चर्य-चकित था कि इन्हें कैसे पता चल गया कि मैं किसी महत्वपूर्ण संन्यासी से मिलने के लिए इतनी दूर से आया हूं, फिर भी मैंने सावधानीवश पूछा, 'आप किससे मिलने की वात कह रहे हैं?'

उन्होंने कहा, 'आप अजानानंद जी से मिलने के लिए आए हैं, मैं उनका शिष्य हूं, और उन्होंने मुझे आपको लेने के लिए भेजा है।'

मेरे लिए यह अत्यधिक आश्चर्यजनक था कि इस भीड़भरी दुनिया में कोई मेरे बारे में सोच रहा है। मैंने यहां आने की वात न तो किसी को वतायी थी और न किसी से कहा ही था, कि मैं अजानानंद जी से मिलने के लिए यहां तक आया हूं, फिर इतनी दूर बैठे स्वामी जी को मेरे जैसे तुच्छ व्यक्ति के बारे में कैसे पता चल गया और इस संन्यासी ने भी इस भीड़ में सीधे ही मुझे कैसे पहिचान लिया?

फिर भी मेरा मन मान नहीं रहा था, किसी एक कोने से आवाज आ रही थी कि यह सब धोखा है, कहीं-न-कहीं छल है, तुम्हें सावधानी के साथ कार्य करना चाहिए, परन्तु दूसरी तरफ जो हकीकत थी, वह भी मैं देख

रहा था। इस ऊहापोह में ही काफी समय बीत गया।

मैं प्रारम्भ से ही जोखिम लेने की भावना रखता हूं, मेरे गुरु का भी यह कहना है, यदि समुद्र के किनारे बैठे रहोगे तो घोंघे ही हाथ आयेंगे, पर यदि तुमने समुद्र के बीच कूदने की क्षमता और हिम्मत है, तो निश्चय ही तुम्हें मोती मिल सकेंगे। इसमें यह भी हो सकता है, कि तुम किसी मगरमच्छ से टकरा जाओ या मृत्यु के मुख में चले जाओ।

इसलिए मैं जीवन में समुद्र के किनारे बैठे रहने वाला व्यक्ति नहीं रहा हूं, समुद्र के बीच छलांग लगाने की प्रवृत्ति बराबर बनी रही है, और इसी प्रवृत्ति की वजह से कुछ उच्चकोटि की साधनाएं भी प्राप्त हो सकी हैं।

खैर, मैंने मन-ही-मन उस संन्यासी के साथ जाने का निश्चय कर लिया, आगे जो कुछ होगा, देखा जायगा। मेरे मन में हमेशा यह भावना रही है कि मैं शिष्य हूं, तो प्रतिक्षण गुरुदेव मेरे साथ होंगे ही, फिर मुझे चिन्ता करने की क्या जरूरत है? और मैं संन्यासी के साथ चलने के लिए खड़ा हो गया।

भेड़ा घाट के आगे जंगल की तरफ संन्यासी बढ़ गये और मैं बराबर उनके पीछे चल रहा था। न तो मैंने यह पूछा कि आश्रम कहां है, और न उन्होंने बताया, परन्तु इतना निश्चित था कि इन संन्यासी को सारे रास्ते परिचित थे, इसलिए वे सवेग आगे बढ़ रहे थे, और मैं भी उनके पीछे-पीछे बराबर चलता जा रहा था।

लगभग पांच या छः मील जाने पर जब मैं थक-सा गया तो मैंने पूछा, 'कितनी दूर है, और अजानानंद जी के बारे में भी मैं कुछ जानने के लिए उत्सुक हूं,' तो संन्यासी ने मेरी तरफ ताका, उस समय उसकी आंखें लाल सुर्ख हो रही थीं, उसने कहा, 'आश्रम तो अभी साठ-सत्तर कि० मी० दूर है, पर आज ही रात वहां पहुंच जाना है, अजानानंद जी पूर्ण अघोरी हैं, और हम सब अघोर-विद्या में दीक्षित हैं।'

अघोरी शब्द सुनते ही मेरे सारे शरीर में झुरझुरी-सी आ गई, एक-बारगी मैं पीपल के पत्ते की भांति कांपकर रह गया। मैं अन्य सभी प्रकार की साधनाएं करता हूं, परन्तु अघोर-विद्या तथा विशेषकर अघोरियों से मुझे भय-मिश्रित घृणा रही है। वे बड़े निर्दयी और निर्मम होते हैं तथा इनकी कुछ साधनाएं मेरी प्रकृति के अनुकूल नहीं हैं, इसलिए मैंने जीवन में कभी न तो अघोर साधना को महत्व दिया, और न मैं अघोरियों से मिला, परन्तु इस समय जब मैंने संन्यासी की तरफ ताका तो मैंने

देखा कि उसकी आंखें लाल सुर्ख हैं, और उसका चेहरा अजीब सा हो गया है। मैं अन्दर-ही-अन्दर घबरा गया और बिना उसको कहे उल्टे पांव मुड़ गया।

तभी उसने पीछे मुड़कर मेरा कसकर हाथ पकड़ लिया, और बोला 'तुम्हें वापिस नहीं जाना है, मुझे तो अजानानंद जी तक तुम्हें पहुंचाना है और यही मुझे आज्ञा हुई है।'

उस समय मेरी क्या स्थिति हुई होगी, यह सोचा जा सकता है, परन्तु अब और कोई चारा नहीं था। जिनसे मैं अधिक घृणा करता था, उन्हीं के साथ मजबूरी से चलना पड रहा है, मैंने एक स्थान पर दृढ़ता से खड़े होकर कहा, 'आप मुझे जबरदस्ती नहीं ले जा सकते। मैं आपके साथ चलने के लिए तैयार नहीं हूं।'

परन्तु उसने मुझे जबरदस्ती एक पत्थर की शिला पर बैठा दिया मेरा सामान जो झोले में था, वह मेरे कंधे पर लटका हुआ था, उसने एक हाथ से मेरी आंखें जबरदस्ती बंद कर लीं, मुझे दो-तीन मिनट तक कुछ ऐसी सरसराहट-सी महसूस हुई जैसे कि मैं उड़ रहा हूं, या भाग रहा हूं परन्तु मेरा दाहिना हाथ जमीन पर टिका हुआ था, और मैं महसूस कर रहा था, कि मैं उसी पत्थर की चट्टान पर बैठा हूं, पर संन्यासी ने कसकर मेरी आंखें बंद कर रखी थीं।

इस प्रकार लगभग पांच मिनट बीत गये, उसने अपना हाथ मेरी आंखों से हटाया, मैंने एक मिनट तो आंखें मलने और वस्तुस्थिति को समझने का प्रयास किया, दूसरे ही क्षण मैंने देखा कि उसी चट्टान पर बैठा हुआ हूं, सामने ही एक आश्रम-सा बना हुआ है, बाहर ही पत्थर की चौकी पर एक भव्य आकृति बैठी हुई है, सम्भवतः यही स्वामी अजानानंद जी होंगे। उनके आसपास तीस-चालीस अघोरी बैठे हुए थे, और कुछ स्त्रियां भी, पर अधिकतर ये सभी नग्न-से थे, स्त्रियों ने घास के पूआल से अपने आपको थोड़ा-बहुत ढक रखा था, परन्तु उन्हें किसी प्रकार का भय, लज्जा या संकोच नहीं था, पन्द्रह-बीस स्थानों पर धूनियां जल रहीं थीं और अघोरी उन धूनियों के आसपास बैठे हुए थे। सारा दृश्य रोमांचक था।

मैं मुश्किल से सात-आठ मील चला था, संन्यासी किसी विशेष साधना के बल पर चट्टान के साथ मुझे वायु-वेग से यहां ले आया था और इस समय भी मैं स्वामी जी के सामने उसी चट्टान पर बैठा हुआ था।

स्वामीजी ने संकेत से मुझे अपने पास बुलाया, मैं यंत्र-चालित-सा खड़ा हुआ, झोले को उसी चट्टान पर रख दिया, जिस पर मैं बैठा हुआ था, और जो 'अघोर विद्या' से उस संन्यासी के द्वारा उठाकर यहां लाई थीं।

स्वामी अजानानन्द एक बड़े व्याघ्र-चर्म पर बैठे हुए थे, सामने धूनी में कुछ जल रहा था, जिसकी दुर्गन्ध नथुनों में भर रही थी। मैंने दूर दृष्टि डालकर देखा तो किसी मुर्दे के जलने की गन्ध और रोशनी दिखाई दे रही थी। मैंने ऐसा महसूस किया कि स्वामी अजानानन्द का यह आश्रम श्मशान के किनारे है या श्मशान के मध्य में है।

चारों तरफ कई अघोरी बैठे हुए थे। एक-दो अघोरियों के गले में नर-मुण्डों की मालाएं पड़ी हुई थीं, कुछ अघोरियों ने अपने सामने खप्पर खोलकर रख दिया था और उसमें सिंदूर से पुती हुई मानव की खोपड़ी स्पष्ट दिखाई दे रही थी। सात-आठ अघोरी नशे में चूर झूम रहे थे, जिनके शरीर पर श्मशान की राख लपेटी हुई थी, चारों तरफ का वातावरण एक विशेष प्रकार का डरावना, भयानक और बीभत्स था।

मैं साधक था और साधना में मैं अपने आपको इतना तैयार कर चुका था कि इन छोटी-मोटी बातों से घबराऊं नहीं, पर यहां पहली बार में मुझे घबराहट अनुभव हो रही थी। मैं यंत्र-चालित-सा अजानानंद के सामने जाकर खड़ा हो गया।

'बैठ जाओ'—उन्होंने आदेश के स्वर में कहा। कहते-कहते उनकी आंखें ऊपर उठ आई थीं, उनकी आंखें लाल सुर्ख हो रही थीं, मैं उनके सामने बैठ गया।

'तुम्हें मैंने विशेष उद्देश्य के लिए बुलाया है, तुम्हारे घर से ही मैंने तुम्हें यह भावना दी थी, कि जिससे तुम जबलपुर तक आ सको। मैं तुम्हें अघोर-विद्या में दीक्षित करना चाहता हूं।' अजानानंद स्पष्ट, पर दृढ़ शब्दों में धीरे-धीरे कह रहे थे।

'पर मुझे अघोर-विद्या में दीक्षित नहीं होना है, और न मुझे अघोर-विद्या सीखनी है,' मैंने जैसे-तैसे हिम्मत बटोरकर अपनी बात का खुलासा किया।

'प्रश्न यह नहीं है कि तुम सीखना चाहते हो या नहीं, प्रश्न तो यह है कि मुझे अपना ऋण उतारना है, पिछले जन्म में भी तुम मेरे शिष्य रहे हो, मैं तो वही अजानानंद हूं, पर तुमने अपनी देह बदल ली परन्तु देह बदलने से क्या होता है, पिछले जीवन में तुमने मेरी बहुत सेवा की है और

एक प्रकार से वह ऋण मुझ पर अभी तक कायम है। पिछली बार तुमने अघोर दीक्षा लेने के लिए प्रार्थना की थी, और मैं किसी-न-किसी प्रकार से टालता जा रहा था, इस बीच अचानक तुम्हारा शरीर शांत हो गया और तुमने एक दूसरे स्थान पर जाकर जन्म ले लिया, पर जिस क्षण से तुमने प्राण छोड़ा है, उस क्षण से मैं बराबर तुम्हारी आत्मा के सम्पर्क में रहा हूं। जब तुमने जन्म ले लिया तब भी मुझे इसका ज्ञान था, और मैं बराबर तुम्हारे बड़े होने का इंतजाम करता रहा हूं। अब वह समय आ गया है कि मैं अपने ऋण से उऋण हो सकूं और मैं तुम्हें अघोर-विद्या में दीक्षित कर श्रेष्ठतम विद्याएं सिखा सकूं।

'इस समय सभी तैयारियां लगभग पूरी हैं, और तुम्हें आज ही रात दीक्षा लेनी है। सामने वाले कुण्ड में जाकर स्नान कर लो और मेरे पास आ जाओ, मैं वामाचार पद्धति करूंगा।'

मैं इसके लिए बिलकुल तैयार नहीं था, और न मैं वामाचार पद्धति से दीक्षित होना चाहता था, परन्तु यहां पर तो मेरी वैसी ही हालत हो गई थी, जैसे कि पचास सिपाहियों के बीच कैदी की होती है। मैं अपने भाग्य पर क्रन्दन कर उठा, आंखों में से आंसू बह निकले, परन्तु मैं विवश था, और अपने आपको असमर्थ-सा अनुभव कर रहा था।

दो अघोरी मुझे वहाँ से उठाकर सामने स्थित पोखर तक ले गये। यह लम्बा-चौड़ा तालाब था, जिसमें स्वच्छ पानी भरा हुआ था। एक तरफ कहीं से झरना-सा बहता हुआ आ रहा था, और उसी के पानी से यह लम्बा-चौड़ा तालाब तैयार हुआ था।

तालाब तक आते-आते मैंने अपने मन पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया, कि डरने और घबराने से कुछ होगा नहीं, जो कुछ भी होगा देखा जाएगा। यों आखिर 'अघोर-विद्या' भी तो साधना ही है, चाहे वह वामाचार पद्धति से युक्त हो, परन्तु अब यदि ऐसी स्थिति आ ही गई है, तो मुझे हिम्मत और हौसले के साथ देख लेना चाहिए।

उन अघोरी संन्यासियों के कहने से मैंने अपने सभी कपड़े उतार लिए और सर्वथा नग्न-सा होकर पोखर में घुसकर स्नान कर लिया। भीगे शरीर से बाहर निकला तो उन संन्यासी शिष्यों के संकेत पर चलता हुआ मैं श्मशान में उस स्थान पर पहुंचा जहां अभी-अभी चिता जलकर ठण्डी हुई थी। वे अघोरी शिष्य दूर खड़े थे, और मुझे बिना स्पर्श किये समझा रहे थे कि मैं उस चिता की राख लेकर अपने पूरे शरीर पर मल लूं।

मैंने उस राख को लेकर अपने पूरे शरीर पर मला और पुनः मन में

साहस संजोकर स्वामी अजानानंद के सामने जाकर बैठ गया।

लगभग सभी संन्यासी शिष्य और शिष्याएं चारों तरफ बैठ गये, सामने अजानानंद बैठे हुए थे, मरघट की शांति चारों तरफ व्याप्त थी, ऊपर आकाश में चन्द्रमा धीरे-धीरे गतिशील था, और मैं श्मशान-भस्म से स्नान किया हुआ सर्वथा नग्न उनके सामने बैठा हुआ था।

थोड़ी देर तक स्वामी अजानानंद ने अघोर-विद्या से संबंधित मंत्र पढ़े और फिर मुझे अपने पास बिठाकर मेरे सामने किसी मनुष्य की खोपड़ी रख दी, जो सिंदूर से पुती हुई थी, उसी खोपड़ी पर से थोड़ा-सा सिन्दूर अंगूठे पर लेकर अजानानंद ने मेरे ललाट पर तिलक किया और मेरे सिर पर हाथ रखकर विशेष मंत्रोच्चार करने लगे।

धीरे-धीरे मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे मैं स्वामी अजानानंद के साथ शून्य में विचरण कर रहा हूं। हम दोनों हवा में तैरते हुए उड़े जा रहे हैं, उन्होंने कसकर मेरा दाहिना हाथ पकड़ रखा है। सामने ही ऊंची-ऊंची पर्वत-चोटियां हैं, और उनके पीछे मुझे साक्षात् भगवान शंकर बैठे हुए दिखाई दे रहे हैं। धीरे-धीरे हम उस पर्वत की परिक्रमा करते हुए वापस लौटे और कुछ ही मिनटों बाद हम दोनों धीरे-धीरे वायु में से नीचे धरती पर उतर रहे थे। मेरा सारा शरीर हवा मे भी हल्का हो गया, मैं बहुत आसानी से हवा में तैर रहा था।

कुछ मिनटों बाद जब मेरे सिर से हाथ हटा तो मेरी आंखें खुल गईं। मैंने देखा कि सामने स्वामी अजानानंद आंखें बंद किये बैठे हैं और उनके मुंह से बराबर अजस्र मंत्रोच्चार हो रहा है।

उन्होंने आंखें खोलीं और पूछा, 'भगवान अघोरेश्वर के दर्शन कर आये, अब तुम मन से और शरीर से पूर्णत: पवित्र हो, अत: वामाचार पद्धति से मैं तुम्हें दीक्षित कर रहा हूं,' ऐसा कहकर उन्होंने वह मानव खोपड़ी, जो सिन्दूर से पुती हुई मेरे सामने रखी हुई थी, उठाकर मेरे सिर पर रख दी। इसके बाद विशेष दीक्षा-मंत्र पढ़ने शुरू हुए। स्वामी जी के साथ-साथ उनके दो-तीन संन्यासी शिष्य भी उन मंत्रों का उच्चारण कर रहे थे। ये सारी क्रियाएं मैंने किसी पुस्तक में पढ़ रखी थीं। शायद गोरखनाथ कृत 'मुण्डी' ग्रंथ में यह सब विवरण हो। परन्तु यह स्पष्ट था कि यह पद्धति गोरखनाथ सम्प्रदाय से संबंधित थी, यद्यपि अजानानंद ने उसमें कुछ परिवर्तन कर दिया था, जो कि उनका अनुभव-गम्य रहा होगा।

धीरे-धीरे ऐसा लगा जैसे. सिर की खोपड़ी बीच में से तड़ककर दो

टुकड़ों में विभक्त हो रही हो। मेरा दर्द बढ़ गया था और मैं बड़ी मुश्किल से दांत भींचकर उस दर्द को सहन कर रहा था। इस प्रकार लगभग आधा घण्टा व्यतीत हो गया, अब मुझे धीरे-धीरे ऐसा लग रहा था कि वह मानव-खोपड़ी मेरे सिर में से होकर शरीर में समाहित हो रही है।

कुछ समय बाद मैंने दर्द को सहन करते हुए आंखें खोलीं और जब मैंने अपने ललाट पर और कंधों पर हाथ फेरा तो मुझे अपनी ही खोपड़ी में से निकलते हुए रक्त की चिपचिपाहट अनुभव हुई। इससे यह स्पष्ट था कि मंत्रों के द्वारा मेरी खोपड़ी चीरी गई है और उसी बीच यह रक्त निकला है।

यह दीक्षा पद्धति-क्रम लगभग एक घण्टे तक चला, अब मेरा दर्द भी धीरे-धीरे कम हो रहा था। मैंने अपने सिर के ऊपर हाथ रखा तो ऐसा लगा जैसे वह खोपड़ी मेरे सिर में ही समा गई है और वापिस मेरा ललाट और सिर का मध्य भाग ज्यों-का-त्यों जुड़ गया है।

इसके बाद स्वामी अजानानंद ने मेरे ललाट को चूमकर कहा—आज से तुम अघोर-साधना में दीक्षित हो, अघोरेश्वर तुम्हारे इष्ट हैं और मैं तुम्हारा गुरु हूं, मैंने तुम्हारी खोपड़ी को चीरकर उसमें नर-मुण्ड स्थापित कर दिया है, धीरे-धीरे तुम स्वतः ही इन सब सिद्धियों को प्राप्त कर सकोगे, जो कि संसार की अद्वितीय साधनाएं कही जाती हैं।

इसके बाद मुझे एक विशेष मंत्र दिया जिसे 'अघोर-मंत्र' कहा जाता है, फिर उसे श्मशान में जाकर जपने के लिए निर्देश दिया।

मैं वहां से उठ गया, मैं अपने शरीर में एक विशेष प्रकार का बल, चुस्ती और स्फूर्ति अनुभव कर रहा था, मेरे सारे शरीर का संताप मिट गया था, और मैं अपने आपको बहुत अधिक हल्का अनुभव कर रहा था।

मेरा भय पहले से ही दूर हो गया था, मैं श्मशान में जाकर बैठ गया, और मुझे जो अघोर-मंत्र दिया गया था, उसका सतत जाप करने लगा। इस प्रकार मैं पूरे सात दिन तक मंत्र को जप कर उसमें सिद्धि प्राप्त कर ली। इसके लिए मुझे कोई विशेष प्रयास नहीं करना पड़ा, न तो मुझे भूख-प्यास लगती और न मुझे निद्रा का ही अनुभव होता। शायद यह दीक्षा का ही परिणाम था कि मैं बिना रुके बराबर एक ही आसन पर स्थिर बैठकर निश्चित मंत्र जप पूरा कर सका।

इस अघोर-मंत्र को सिद्ध करने से छोटी-मोटी सिद्धियां तो मुझे स्वतः ही प्राप्त हो गई थीं पर एक परिवर्तन जो विशेष रूप से मुझ में आया था, वह यह था कि मैं अब जब भी चाहे स्वतः ही सशरीर एक स्थान से

दूसरे स्थान पर आ-जा सकता था, इसके लिए मुझे इस अघोर-मंत्र का 'लोम-विलोम क्रियाकरण' करना पड़ता था। इसके लिए मुश्किल से दो या तीन मिनट लगते थे, साथ-ही-साथ मैं इसी क्रियाकरण-पद्धति से बहुत दूर के दृश्य या घटित होने वाली घटनाएं देख सकता था। मैं जहां पर भी, जो भी देखना चाहूं देख सकता था, ये दोनों सिद्धियां यद्यपि अत्यधिक कठिन मानी जाती हैं, परन्तु इस अघोर-साधना से मुझे स्वतः ही प्राप्त हो गई थीं।

धीरे-धीरे मैं अन्य अघोर संन्यासी-संन्यासिनियों से मिलने लगा, मेरी झिझक दूर हो गई थी, और मैं उनसे उन विद्याओं को भी सीखने लगा, जो अपने आपमें अत्यधिक विलक्षण और असीम शक्तिसम्पन्न हैं।

मैंने देखा कि ऊपर से ये अघोरी अत्यधिक रूखे, कठोर और निर्दयी अनुभव होते हैं, परन्तु इनके हृदय में भी दया, ममता, स्नेह और अपनत्व का सागर लहराता है। दूसरे संसारी व्यक्तियों की अपेक्षा ये ज्यादा संवेदनशील हैं, और अकारण किसी को भी तकलीफ नहीं देते।

एक दिन मेरा सिर जोरों से दर्द करने लगा तो दो-तीन अघोरी संन्यासी और संन्यासिनियां बराबर मेरा सिर दबाती रहीं और तब तक मुझसे अलग नहीं हटीं, जब तक मैं पूरी तरह से स्वस्थ नहीं हो गया। यदि मैं कभी उदास भी होता, तो वे सभी मिलकर हंसी-मजाक कर तब तक दूर नहीं जाते जब तक कि मैं मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ नहीं हो जाता। यही नहीं, अपितु इन साधकों, संन्यासियों में ऐसा गरूर या घमण्ड भी नहीं कि वे अपने आपको महान समझें, श्रेष्ठतम अघोर-विद्या के साधक और सामान्य साधक सभी एक साथ रहते, एक साथ बोलते, खाते, पीते, हंसते, गाते, नाचते और जीवन-यापन करते हैं। इनमें परस्पर ऊंच-नीच, भेद-भाव जैसी कोई बात नहीं है। दूसरे साधकों की तरह से अपनी गोपनीय विद्याओं को छिपाते भी नहीं, यदि कोई सीखना चाहता है, तो ये मनोयोगपूर्व सिखा देते हैं, और ऐसा ही व्यवहार करते हैं, जैसा एक मित्र मित्र के साथ करता है।

वस्तुतः हम संसारियों की अपेक्षा ये ज्यादा संवेदनशील हैं। ये ज्यादा भावुक और सहृदय हैं, एक-दूसरे को सहयोग देने की भावना इनमें जरूरत से ज्यादा है। यद्यपि इनकी साधना-पद्धति अपने आपमें अलग हटकर है, परन्तु इस साधना की विशेषता यह है कि कम-से-कम समय में इस साधना के द्वारा महत्वपूर्ण सफलता मिल जाती है। अन्य पद्धतियों में जहां

साधना जटिल होती है, वहां इस पद्धति में कुछ ही दिनों में सफलता प्राप्त हो जाती है।

जिस संन्यासी शिष्य के द्वारा मैं यहां आया था, वह आगे चलकर मेरा अभिन्न मित्र बन गया, यद्यपि साधना में वह अभी मुझसे काफी आगे था, परन्तु उसने एक दिन भी ऐसा महसूस नहीं होने दिया कि जैसे वह महत्वपूर्ण हो या श्रेष्ठ हो।

नित्य सायंकाल हम सभी गुरुदेव के चरणों में उपस्थित होते और वे अघोर-विद्या की उन जानकारियों को हमें प्रदान करते, जो अभी तक गोपनीय हैं। ये ऐसी साधनाएं हैं, जो अपने आपमें आश्चर्यचकित कर देने वाली हैं। वस्तुतः अजानानंद जी भारतवर्ष के अघोर-साधना में श्रेष्ठ सिद्ध हैं, जिनके पास सिद्धियों का भण्डार सुरक्षित है।

एक दिन उन्होंने श्मशान से मुर्दा मंगवाया और उसे जमीन पर लिटा दिया। वह एक प्रकार से लावारिस लाश थी, जो किसी के द्वारा वहां लाकर छोड़ दी गई थी, फिर जमीन पर श्मशान की राख बिछाकर उस पर मुर्दे को लिटाकर अजानानंद जी ने 'संजीवनी-क्रिया' पद्धति भली प्रकार से समझाई कि किस प्रकार से इस संजीवनी-साधना के द्वारा मरे हुए व्यक्ति को जीवित किया जा सकता है, और उन्होंने लगभग पन्द्रह-सोलह मिनट में उस मुर्दे को पूर्णतः जीवित कर दिया।

मैं वहां से वापस आना नहीं चाहता था, परन्तु गुरु-आज्ञा से ऊंचा कोई नियम नहीं होता, इसलिए मैंने उनकी आज्ञा-पालन में ही अपना कर्त्तव्य समझा।

दूसरे दिन प्रातःकाल लगभग चार बजे स्वामी अजानानंद जी ने मुझे जाने की आज्ञा दी और कहा, 'अब तुम वायुगमन प्रक्रिया और संजीवनी-क्रिया में सिद्ध साधक हो। अघोर-विद्या तो जीवन की महत्वपूर्ण साधना-पद्धति है, हमने भ्रमवश इसको तुच्छ और घृणित समझ लिया है, तुम्हें जीवन में बहुत आगे बढ़ना है और सफलता प्राप्त करनी है।'

फिर उन्होंने कहा, 'तुम शीघ्र ही त्रिजटा अघोरी से भी मिलोगे, वे मेरे गुरु हैं और मैंने उनके चरणों में बैठकर यह सब सीखा है। मुझे विश्वास है, एक दिन तुम अवश्य ही मेरे परमपूज्य गुरुदेव के दर्शन कर सकोगे और जीवन में सभी दृष्टियों से सफलता प्राप्त कर सकोगे।'

फिर उन्होंने कहा, 'अब मैं तुम्हारे साथ संन्यासी को नहीं भेजूंगा, जो कि तुम्हारी आंख बन्द कर जबलपुर तक ले जा सके, तुम स्वयं वायु-साधना से उस स्थान पर पहुंच सकोगे और वहां से अपने गंतव्य स्थल तक

सुखपूर्वक जा सकोगे।'

मैंने देखा कि उस कठोर चट्टान की तरह सुदृढ़ गुरुदेव अजानानंद जी की आंखें नम थीं, मेरी आंखों से भी अश्रुकण छलक रहे थे। मैंने अपना झोला उठाया और उसी प्रस्तर-खण्ड पर बैठ गया जो मेरे साथ ही वायु-साधना के द्वारा यहां आ गया था। मैंने देखा सभी अघोरी भाई-बहिन मुझे घेरकर खड़े हैं, उनकी आंखें छलछला रही हैं, वे सभी सुबक रहे हैं, और मैंने भरे गले से सुबकते हुए अपनी आंखें बंद कर लीं और मन ही मन लोम-विलोम क्रिया से वायु मंत्र का जप शुरू कर दिया।

मेरी आंखें खुली थीं और मैं शून्य में उड़ा जा रहा था। लगभग दो या तीन मिनट में ही मैं भेड़ा घाट पर खड़ा था, जो कि मेरा गन्तव्य स्थल था, जहां से नर्मदा ऊपरी भाग से गिरती है। उसके एक तरफ वह काला बड़ा-सा प्रस्तर खण्ड आज भी पड़ा हुआ है जो अन्य सभी पत्थरों से अलग हटकर है। वह अकेला ही ऐसा पत्थर है जो दूसरे पत्थर के मेल का नहीं है। यह वही पत्थर है, जिस पर बैठा हुआ मैं शून्यसाधना के द्वारा भेड़ाघाट तक पहुंचा था। यह प्रस्तर-खण्ड मेरी साधना की यादगार है।

६

सूर्य नमस्कार

दिव्य चेतना पुंज का एक अप्रतिम स्रोत

प्रत्येक साधना को जीवन में पवित्रता, दिव्यता, श्रेष्ठता, सफलता, एवं पूर्णता प्राप्त करने के लिए शरीर एवं मन दोनों को साधना आवश्यक है, और इस आवश्यकता पूर्ति में 'सूर्य नमस्कार' श्रेष्ठतम वरदान स्वरूप है, जिससे एक तरफ शरीर के समस्त जोड़ खुल जाते हैं, आन्तरिक संरचना में कमल-चक्रों का प्रस्फुटन होने लगता है, पूरा शरीर एक विशेष सांचे में ढल जाता है, वहीं दूसरी ओर कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया का प्रारम्भ हो जाता है। योग-शास्त्र में वर्णित हजारों आसनों में से चुने

हुए इन बारह आसनों से प्रतिपादित सूर्य नमस्कार एक अद्वितीय वरदान है।

लेखक निर्मोही ने इस लेख के माध्यम से शरीर विज्ञान, योग, स्वर एवं मन्त्र विज्ञान का परस्पर तारतम्य जोड़ते हुए स्पष्ट किया है कि साधना का प्रातःकाल सूर्य नमस्कार से प्रारम्भ हो, जिससे उसकी निरन्तर चतुर्मुखी प्रगति वनी रह सके।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता आपके चरण चूमे, इस मंगलकामना के साथ इन पंक्तियों में मैं सूर्य नमस्कार पद्धति का शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूं। सूर्य नमस्कार का शाब्दिक अर्थ है, "सूर्य को प्रणाम करना"। यह सूर्य से सीधे, सहज एवं सरल रूप से प्राण ऊर्जा प्राप्त करने की एक प्रामाणिक विद्या है।

यजुर्वेद आदि प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर हमारे मनीषी ऋषियों ने सूर्य नारायण की इस प्राण संजीवनी को स्वयं में समाहित करने के लिए सूर्य नमस्कार जैसी सहज प्रामाणिक पद्धति का निरूपण किया, जिसके अभ्यास से सूर्योपासना को व्यावहारिक रूप देकर शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक जगत के उन आयामों को प्राप्त किया जा सके, जो मानव की पूर्णता के लिए आवश्यक है।

आधारभूत तत्व

प्रामाणिक रूप से सूर्य नमस्कार के तीन आधारभूत तत्व हैं, प्रथम शरीर विन्यास, जो बारह महीनों के सांकेतिक चिह्नों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

आसन संख्या	आसन	मन्त्र	बीज मंत्र	ध्यान केन्द्र	श्वास
१.	प्रणामासन	ओ३म् मित्राय नमः	ओ३म् ह्राम्	अनाहत चक्र	रेचक
२.	हस्तउत्तानासन	ओ३म् रवये नमः	ओ३म् ह्रीम्	विशुद्ध चक्र	पूरक
३.	पाद हस्तासन	ओ३म् सूर्याय नमः	ओ३म् ह्राम्	स्वाधीन चक्र	रेचक

४. अश्व संचालनासन	ओ३म् भासवे नमः	ओ३म् ह्रैम	आज्ञा चक्र	पूरक
५. पर्वतासन	ओ३म् खगाय नमः	ओ३म् ह्रौम्	विशुद्ध चक्र	रेचक
६. अष्टांगासन	ओ३म् पुष्णं नमः	ओ३म् ह्राः	मणिपूर चक्र	बहिर्कुम्भक
७. भुजंगासन	ओ३म् हिरण्य गर्भाय नमः	ओ३म् ह्राम्	स्वाधिष्ठान चक्र	पूरक
८. पर्वतासन	ओ३म् मरीचये नमः	ओ३म् ह्रीम्	विशुद्ध चक्र	रेचक
९. अश्वसंचालनासन	ओ३म् आदित्याय नमः	ओ३म् ह्रूम्	आज्ञा चक्र	पूरक
१०. पादहस्तासन	ओ३म् सविते नमः	ओ३म् ह्रैम	स्वाधिष्ठान चक्र	रेचक
११. हस्तउत्तानासन	ओ३म् अर्काय नमः	ओ३म् ह्रौम	विशुद्ध चक्र	पूरक
१२. प्रणामासन	ओ३म् भास्कराय नमः	ओ३म् ह्रः	अनाहत चक्र	रेचक

द्वितीय है, शारीरिक गति के साथ सम्पन्न की जाने वाली श्वास-प्रक्रिया।

तृतीय एवं सर्वोत्तम महत्वपूर्ण है—प्रत्येक विशिष्ट शरीर-विन्यास के साथ मानसिक मन्त्रोच्चारण करते हुए एकाग्रता एवं जागरूकता।

सूर्य-नमस्कार एक ऐसा परिपूर्ण यौगिक अभ्यास है, जो योग में न आते हुए भी प्रायः सभी आसन, प्राणायाम एवं ध्यान के लाभ अपने आप में संजोये हुए है, इस अभ्यास के लिए उम्र या लिंग सम्बन्धी सीमा नहीं है। कम अवधि में ही इसके लाभ अभ्यासकर्ता को मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। १५ से २० मिनट का दैनिक अभ्यास इसके लिए पर्याप्त है। सूर्योदय का समय अभ्यास के लिए सर्वोत्तम माना गया है अन्यथा संध्या समय भोजन के पूर्व भी किया जा सकता है। व्यावहारिक अभ्यास के लिए निर्देशों का उचित पालन करते हुए आप मार्ग-दर्शक की अनुपस्थिति में भी स्वतः अभ्यासरत रहते हुए पूर्ण रूपेण लाभान्वित हो सकते हैं।

सूर्य नमस्कार के लाभ

इस अभ्यास से मानवीय प्रकृति का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रह जाता। यह सभी दृष्टियों से हर मनुष्य के लिए कल्याणकारी है, क्योंकि एक ओर सूर्य नमस्कार से यदि हमारे भौतिक शरीर को लाभ पहुंचता है, तो दूसरी ओर मानसिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों का विकास भी होता है। नियमपूर्वक एकाग्रता एवं शिथिलीकरण की क्रिया सहित इसका अभ्यास मानसिक अशांति को दूर कर शांति प्रदान करता है। इससे अनेक रोग स्वतः ही समाप्त हो जाते हैं। शारीरिक अंग और मांसपेशियां पुष्ट होने लगती हैं। अतः अभ्यास से स्वास्थ्य में सुधार स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता है, चेहरा एक नई कान्ति लिए हुए होता है। इस प्रकार सूर्य नमस्कार खोई हुई शक्ति वापिस लाकर नवस्फूर्ति, नवजीवन प्रदान करता है। शरीर के सब संस्थानों के लिए सूर्य नमस्कार का अभ्यास अति उत्तम साधन है।

विभिन्न संस्थानों एवं उनसे सम्बन्धित रोगों पर सूर्य नमस्कार का शीघ्र एवं हितकर प्रभाव पड़ता है, शरीर की मांसपेशियां, अस्थि-संस्थान, उत्सर्जन सस्थान, स्नायु संस्थान, अन्तः स्रावी ग्रन्थि-संस्थान आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित होकर अभ्यासकर्ता को शनैः-शनैः संबंधित रोगों से मुक्त कर देते हैं, शरीर में एक विशेष प्रकार के बल एवं लोच का आभास होने लगता है, पेट एवं नितम्ब की अतिरिक्त चर्बी घटने लगती है। पाचन क्रिया बलवती होकर जठराग्नि को प्रदीप्त कर देती है। जिससे अपचन, आंव, वायु, यकृत दोष आदि से मुक्ति मिल जाती है, फेफड़ों के प्रत्येक भाग से विषैली वायु का निष्कासन होकर उसके स्थान पर ताजी शुद्ध आक्सीजन प्राणों में भर देता है। रक्त का शुद्धीकरण हो जाता है, स्मरण शक्ति तेज होकर शरीर का आलस्य एवं सुस्ती समाप्त हो जाती है। क्षय जैसी भयंकर बीमारी भी नियन्त्रित हो जाती है। सूर्य नमस्कार से पीठ एवं रीढ़ प्रदेश का व्यायाम इस प्रकार से होता है कि दबाव वृक्कों (गुर्दों) पर पड़ता है और उनमें रक्त-संचार की क्रिया तीव्र हो जाती है जिससे उनका कार्य व्यवस्थित हो जाता है। इस अभ्यास से शरीर के अनावश्यक पदार्थों का निष्कासन होता है तथा रक्त-प्रवाह अच्छी तरह होने लगता है। महिलाओं के लिए सूर्य नमस्कार कायाकल्प का काम करता है। मासिक धर्म सम्बन्धी अनियमितता एवं दोषों को दूर करता है। प्रसव-वेदना के कष्टों का निवारण करता है। जननेन्द्रिय संबंधी अनेक रोगों की रोकथाम कर सूर्य नमस्कार पुरुषों-महिलाओं दोनों के

लिए वरदान साबित हुआ है, इसके अभ्यास से सम्पूर्ण नाड़ी-संस्थान विकसित एवं जाग्रत है। सम्पूर्ण मस्तिष्क पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है।

सूर्य नमस्कार प्रक्रिया एवं आवश्यक निर्देश

सूर्य नमस्कार के व्यावहारिक अभ्यास के लिए क्रमशः शारीरिक स्थिति, श्वास-नियन्त्रण, मानसिक मंत्र जप, एकाग्रता के बिन्दु (विभिन्न चक्र) को भली प्रकार समझना नितान्त आवश्यक है।

सर्थप्रथम अभ्यास के अन्तर्गत आने वाले शारीरिक विन्यास का ज्ञान कर लेना चाहिए। उस स्थिति विशेष में श्वास का योग किस प्रकार करना है, यह मानव में स्पष्ट होना चाहिए। प्रारम्भ में यह क्रिया कठिन मालूम हो सकती है, पर अभ्यास के उपरान्त प्रत्येक शारीरिक स्थिति के अनुरूप श्वास-क्रिया प्राकृतिक रूप में सम्पन्न होने लगती है। श्वास-क्रिया का मूल सिद्धान्त यह है कि जब आप पीछे की ओर मुड़ते हैं तो फेफड़ों का प्रसारण होता है अर्थात् फेफड़े फैल जाते हैं, ऐसी स्थिति में पूरक क्रिया कर सांस अन्दर भरी जाती है। इसके विपरीत जब सामने की ओर झुकते हैं तो फेफड़ों का संकुचन होता है, जिसके फलस्वरूप रेचक क्रिया होती है। अर्थात् सांस बाहर निकलता है। केवल छठी स्थिति में बहिर्कुम्भक लगाया जाता है, अर्थात् क्रिया के बाद सांस को बाहर रोका जाता है। सूर्य नमस्कार की बारह स्थितियों—अर्थात् बारह आसनों पर श्वास-क्रिया सहित दक्षता प्राप्त हो जाने पर उनके साथ सूर्य के बारह मन्त्रों को संयुक्त करना चाहिए। मन्त्रों का जप प्रत्येक आसन के साथ मानसिक रूप में हो। उसकें बाद अभ्यास की अन्तिम सीढ़ी पर पहुंच प्रत्येक अभ्यासी को विशिष्ट एकाग्रता बिन्दु का ज्ञान आवश्यक है। सूर्य नमस्कार अभ्यास के उपरान्त शिथिलीकरण क्रिया या शवासन अनिवार्य है, जोकि इस प्रक्रिया का एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण अंग है, क्योंकि इससे शरीर का तनाव दूर होकर नई शक्ति प्राप्त होती है, मन पूर्णतायुक्त, तनाव रहित एवं शान्त हो जाता है।

सीमाएं

इस अभ्यास के लिए उम्र का कोई बन्धन नहीं। स्त्रियों को मासिक धर्म के साथ इसका अभ्यास वर्जित है। गर्भावस्था के प्रथम चार माह तक इसका अभ्यास किया जा सकता है।

उपयुक्त समय एवं स्थान

सूर्योदय के समय वातावरण में अपूर्व शांति रहती है। यह समय सूर्य नमस्कार के लिए उत्तम माना गया है। शरीर के अन्दर जीवनतत्व के निर्माण में अल्ट्रा वायलेट किरणों का विशेष महत्व है। नित्य-क्रियाओं के उपरांत स्नान कर खुली हवा में अभ्यास करना उत्तम होता है। किन्हीं परिस्थितियों में सन्ध्याकाल में रात्रि भोजन के पूर्व भी अभ्यास किया जा सकता है।

आवृत्ति संख्या

प्रारम्भिक अभ्यासी के लिए तीन आवृत्तिया पर्याप्त हैं बहुत अधिक थकावट होने पर अभ्यास रोक देना चाहिए। अभ्यास की गति धीमी रखनी चाहिए। धीरे-धीरे आवृत्तियों की संख्या बारह की जा सकती है। उच्च अभ्यासी इच्छानुसार २४ से ५२ आवृत्तियों तक अभ्यास कर सकता है। अभ्यास की आवृत्ति संख्या धीरे-धीरे बढ़ाते रहना चाहिए।

सूर्य नमस्कार प्रक्रिया

स्थिति १. प्रणामासन

सूर्य की ओर मुंह करके खड़े हो जाइए, दोनों पैर मिले हों, हाथों को जोड़कर प्रार्थना की स्थिति में छाती के सामने रखिए, कुछ क्षणों के लिए आंखों को बन्द कीजिये, मानसिक स्थिरता एवं शांति का अनुभव करते हुए शरीर एवं मन को पूर्णतः शिथिल कीजिये। धीरे-धीरे सांस बाहर निकालते हुए फेफड़ों की समस्त वायु बाहर निकाल रेचन कीजिये। "ओ३म् मित्रायनमः" मन्त्र से अपने सर्वश्रेष्ठ मित्र सूर्य के प्रति कुछ क्षणों के लिए जागरूक होइये, अनाहत चक्र पर ध्यान केन्द्रित कीजिये, बीज मंत्र "ओ३म् ह्रां।"

स्थिति २. हस्तउत्तानासन

प्रत्येक गतिविधि के प्रति पूर्ण जागरूकता रखते हुए दोनों हाथों को ऊपर उठाइये और पीछे झुकिये, हाथ एवं पीठ इस स्थिति में तनी हुई रहे सिर भी पीछे झुका हुआ हो, हथेलियां ऊपर की ओर खुली हों, हाथ

को ऊपर उठाते हुए पूरी सांस फेफड़ों में भरिये, अर्थात् लम्बा पूरक करिये "ओ३म् स्वयँ नमः" मन्त्र से अपने शरीर को प्रकाश-पुंज की ओर प्रसारित करते हुए विशुद्ध चक्र पर ध्यान केन्द्रित करिये। वीज मन्त्र "ओ३म् ह्लीम"।

स्थिति ३. पादहस्तासन

दोनों हाथों को नीचे ले जाते हुए कमर प्रदेश से सामने की ओर झुकिये—पैर और हाथ एकदम तने हुए रहें, हथेलियों को सीधे जमीन पर टिकाने का प्रयत्न कीजिए, सिर को अन्दर की ओर झुकाते हुए नासिका से घुटनों को छूने का प्रयास कीजिये, नियमित अभ्यास से यह आसन शरीर में लचीलापन ला देता है एवं अभ्यास सरल हो जाता है, सामने की ओर झुकते समय सांस पूरी बाहर निकालनी चाहिए, पेट जितना हो सके भीतर की ओर दबाना चाहिए और "ओ३म् सूर्याय नमः" मन्त्र से क्रियाशील सूर्य भगवान का ध्यान स्वाधिष्ठान चक्र में करना चाहिए। बीज मन्त्र "ओ३म् ह्लम्"।

आध्यात्मिक चेतना पुंज

नाम	स्थान	तत्व	गुण-धर्म
मूलाधार चक्र	पुरुषों में, गुदाद्वार एवं मूत्रेन्द्रिय के मध्य सीवन प्रदेश में। स्त्रियों में योनि के पृष्ठ भाग में	पृथ्वी	मूल शक्ति अर्थात् कुण्डलिनी शक्ति का केन्द्र
स्वाधिष्ठान चक्र	मेरुदण्ड का आधार या पुच्छस्थि में	जल	एकीकृत, अचेतन, पशुवृत्ति
मणिपूर	मेरुदण्ड में, नाभि केन्द्र के पीछे	अग्नि	चेतन तत्व, ताप एवं शक्ति का केन्द्र
अनाहत चक्र	मेरुदण्ड में, हृदय के समीप छाती के पीछे	वायु	जीव,,आत्मा एवं उच्चस्तरीय संवेदना का केन्द्र
विशुद्ध चक्र	मेरुदण्ड में, ग्रीवा के पीछे	ईश्वर	शुद्धिकरण तथा प्रकटीकरण का केन्द्र

आज्ञा चक्र	मेरुदण्ड का सबसे ऊपरी भाग, दोनों भौंहों के मध्य	मानस	अन्तर्दृष्टि, दिव्य-ज्ञान का केन्द्र तथा आध्यात्मिक जागृति
सहस्रार	सिर का शिखर प्रदेश	अन्तर	सत् चित्, आनन्द का केन्द्र, शिव का निवास-स्थान

स्थिति ४. अश्वसंचालनासन

चौथी स्थिति में दाहिने पैर को पीछे पूर्ण रूप से फैलाइये, बायां पैर एवं दोनों हाथों की स्थिति पूर्ववत् रहे, दाहिने पैर का टखना एवं घुटना भूमि पर स्पर्श करे, सिर को ऊपर उठाये तथा मेरुदण्ड को मोड़ते हुए अर्धवृत्ताकार अवस्था में लाने का प्रयास करे, दोनों तने हुए हाथों पर शरीर का पूरा भार रहे, इस अवस्था में मुंह ऊपर उठाते हैं तथा गर्दन एवं पीठ की अवस्था घोड़े की नाल के समान बन जाती है, इसमें सिर को ऊपर उठाकर "ओ३म् भानवे नमः" मंत्र से "अखिल ब्रह्माण्ड के गुण हमें सदा क्रियाशील रहने की शक्ति दें" प्रार्थना करते हुए आज्ञा चक्र में ध्यान केन्द्रित करते हैं, बीज मन्त्र—"ओ३म् ह्रैम्"।

स्थिति ५. पर्वतासन

हाथों एवं दाहिने पैर को पूर्व स्थिति में रखते हुए पांचवीं स्थिति में सिर को नीचे झुकायें तथा बायें पैर को पीछे सीधा लेकर दाहिने पैर के बाजू में रखें, दोनों पैरों की स्थिति समान रहेगी, नितम्ब प्रदेश को ऊपर उठायें, सिर को दोनों हाथों के बीच नीचे रखें, शरीर की अवस्था लम्बवत् हो जायगी, नाभि की ओर दृष्टि रखें, दोनों एड़ियों को जमीन पर स्थिर रखने का प्रयास करें, पेट को अन्दर दबाते हुए सारी वायु तीव्र गति से बाहर निकाल दें, अपनी शारीरिक एवं मानसिक प्रगति के लिए सूर्य भगवान से 'ओ३म् खगाय नमः' प्रार्थना करते हुए विशुद्ध चक्र में ध्यान केन्द्रित करें, बीज मन्त्र 'ओ३म् ह्रौम्'।

स्थिति ६. अष्टांगासन

हाथों एवं पैरों को पूर्व अवस्था में रखते हुए दोनों घुटनों को भूमि पर टिकाइये, हाथों के सहारे छाती एवं ठोड़ी को नीचे कीजिये, नितम्ब व पेट का भाग पृथ्वी से ऊपर उठा रहेगा, इस स्थिति में सांस नहीं ली जाती,

वरन बाहर ही सांस को सामर्थ्यानुसार रोके रखा जाता है, "ओ३म् पूष्णे नमः" मन्त्र से अष्टांग मुद्रा में हम अपने को समस्त शक्ति के स्रोत सूर्य भगवान के चरणों में पूर्णतः समर्पित करते हैं, ध्यान मणिपूर चक्र पर केन्द्रित किया जाता है, बीज मंत्र—"ओ३म् ह्रः"।

स्थिति ७. भजंगासन

हाथों-पैरों को उसी स्थिति में रखे हुए सिर को ऊपर की ओर उठाते हुए हाथों को सीधा कीजिये, धड़ वाले भाग को ऊपर उठाकर सिर एवं कमर को पीछे की ओर मोड़ते हुए अर्धवृत्ताकार स्थिति बनाइये, सिर को ऊपर उठाते समय जितनी सांस अन्दर लेकर भर सकें, भरकर दीर्घ पूरक करें, "ओ३म् हिरण्यगर्भाय नमः" मन्त्र से बीज शक्ति रूप सूर्य को नमन करते हुए स्वाधिष्ठान चक्र पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, बीज मंत्र—"ओ३म् ह्म"

स्थिति ८. पर्वतासन

सिर को नीचे झुकायें तथा नितम्ब प्रदेश को ऊपर उठाते हुए स्थिति पांच में आ जाइये, इस स्थिति में सांस बाहर निकालते हुए रेचक किया जाता है, "ओ३म् मरीचये नमः" मन्त्र को ब्रह्म मुहूर्त के देवता को प्रणाम करते हुए मृगतृष्णा से रक्षा की प्रार्थना करें तथा ध्यान विशुद्ध चक्र पर केन्द्रित करें, बीज मंत्र—"ओ३म् ह्लीम्"।

स्थति ९. अश्वसंचालनासन

बायें पैर को सामने वापिस ले आयें, उसे दोनों हाथों के मध्य रखते हुए नितम्ब प्रदेश को नीचे लाएं, सिर व रीढ़ की हड्डी को पीछे मोड़ते हुए स्थिति चार की भांति अर्धवृत्ताकार बनायें, दृष्टि आकाश की ओर हो, ऐसा करते समय पूरी सांस अन्दर की ओर लेते हुए पूरक करें, "ओ३म् आदित्याय नमः" मंत्र से महाशक्ति को प्रणाम करते हुए आज्ञा चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें। बीज मंत्र—"ओ३म् ह्लम्"।

स्थिति १०. पादहस्तासन

सिर को नीचे कीजिये, दाहिने पैर को सामने लाइये, नितम्ब वाले भाग को उठाते हुए पैरों को सीधा कीजिये, स्थिति तीन की तरह नासिका से घुटनों का स्पर्श करें, तथा वायु को बाहर निकालते हुए पूर्ण रेचक करें,

"ओ३म् सविते नमः" मन्त्र से सूर्य के मातृ रूप कल्याणकारी भाव से विनती करते हुए स्वाधिष्ठान चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें। बीज मन्त्र— "ओ३म् ह्रैम्"।

स्थिति ११ हस्तउत्तानासन

इस स्थिति में धड़ को ऊपर उठायें, हाथों को ऊपर उठाते हुए पीछे की ओर झुकें, हथेलियां ऊपर खुली रहें, दूसरी स्थिति की तरह शरीर को पीछे तनी हुई स्थिति में रखें, धड़ को ऊपर उठाते समय सांम अन्दर की ओर लेते हुए पूरक करें, "ओ३म् अर्काय नमः" मन्त्र से शक्ति प्रणेता सूर्य को नमस्कार करते हुए ध्यान विशुद्ध चक्र पर केन्द्रित करें। बीज मंत्र—"ओ३म् ह्रौम्"

स्थिति १२. प्रणामासन

प्रथम स्थिति की भांति शरीर को सीधा रखते हुए दोनों हाथों को जोड़कर हृदय के सामने प्रार्थना मुद्रा में नेत्र बन्द करें, और सांस बाहर छोडते हुए रेचक कर सामान्य अवस्था में आवें, "ओ३म् भास्कराय नमः" मन्त्र से मुक्ति मार्ग प्रशस्त करने वाले दिव्य प्रकाश पुंज भगवान सूर्य नारायण को प्रणाम करते हुए अनाहत चक्र पर ध्यान क्रेन्द्रित करें, बीज मंत्र—"ओ३म् ह्रः"।

शवासन : शिथिलीकरण क्रिया

अभ्यास पूरा होने पर शवासन यौगिक विधि से चेतनापूर्ण शिथिलीकरण करके सम्पूर्ण शरीर को सजगता के साथ प्राण के ग्रहण योग्य बनाया जाता है, इससे साधक तनाव रहित होकर नव स्फूर्ति अनुभव करता है। कम्बल पर चित लेटकर शरीर को शव स्थिति में (पूरा ढीला छोड़कर नेत्र बन्द करके बिना किसी प्रकार की हलचल से) सम्पन्न किया जाता है, अपनी चेतना को पैरों के पंजों से लेकर क्रमशः सिर तक ले जाकर पूर्ण शिथिलता की भावना देकर तनाव रहित अनुभव किया जाता है, और इस प्रकार कुछ मिनटों में ही सारा शरीर तरोताजा-स्फूर्तिवान् हो जाता है। इस प्रामाणिक सूर्य नमस्कार विधि का जीवन में नियमित अभ्यास कर सहस्रार जाग्रत करते हुए मंगलमय बनें और शारीरिक, मानसिक, आत्मिक सभी दृष्टियों से पूर्णता प्राप्त करें।

७

गोपनीय सिद्ध साबर मन्त्र

साधकों के लिए होली और दीवाली एक विशेष पर्व हैं, क्योंकि होली और दीवाली की रात्रि साधना के लिए श्रेष्ठ तिथियां हैं। और इनसे अच्छा समय और कोई नहीं कहा जा सकता।

होली के इस अन्यतम पर्व की रात्रि को सम्पन्न करने के लिए कुछ विशिष्ट गोपनीय साबर मन्त्रों को पहली बार प्रकाशित कर रहे हैं श्री जोगी निर्मल चैतन्य, जो साबर मन्त्रों के श्रेष्ठ साधक हैं। साबर मन्त्र कलियुग में शीघ्र प्रभावोत्पादक और तुरन्त फल देने वाले माने गये हैं।

नीचे होली की रात्रि को किये जाने वाले कुछ विशिष्ट मंत्र और प्रयोग विधि दे रहा हूं, जो तुरन्त प्रभावयुक्त हैं।

पूर्ण पौरुष प्राप्त करने के लिए

यह 'अनंग साधना' या अनंग-मंत्र है; व्यक्ति चाहे कमजोर हो, काम-कला से शक्तिहीन हो अथवा नपुंसक हो इस मन्त्र के द्वारा वह पूर्ण पौरुष-वान् बन जाता है, बुढ़ापे में भी चुस्ती, स्फूर्ति और पूर्ण पौरुष प्राप्त करने में यह मंत्र बेजोड़ है।

होली की रात्रि को भोजपत्र पर चंदन, कस्तूरी, कपूर और कुमकुम चारों को बराबर लेकर उसकी स्याही से यह मन्त्र लिखें और फिर उसी रात्रि को पचास मालाएं मन्त्र जाप कर लें, ऐसा मन्त्र जाप मूंगे की माला से होना चाहिए, जब मन्त्र जप पूरा हो जाय, तब इस भोज-पत्र को किसी तावीज में रख कर दाहिनी भुजा पर बांध लें तो वह व्यक्ति आगे पूरे जीवन भर पूर्ण पौरुषवान् बना रहता है।

इस साधना में दीपक या अगरबत्ती जलाने की जरूरत नहीं है, और न कोई विशिष्ट वस्तुओं की अनिवार्यता है।

मन्त्र

ओ३म् क्लीं ऐं सौ ग्लो हूंइं कं कंदर्पशक्तिसकलकलाकलापनिपुणे इक्षुशरासनपञ्च बाणान्विते, सकल रोगविनाशिने, खगान् मारय मारय, क्लीं रसाम्बाये एहि एहि स्वाहा।

शत्रु उत्पीड़न मंत्र

यदि कोई शत्रु बहुत अधिक परेशान कर रहा हो और स्वयं के जीवन पर खतरा उपस्थित हो गया हो तो इस प्रयोग को सम्पन्न किया जा सकता है।

होली की रात्रि को श्मशान की रेत तथा एक मुट्ठी मुर्दे की भस्म लाकर पिण्ड बनावे और उस पिण्ड को सिन्दूर से पोत दें, उस पिण्ड पर आक की लकड़ी से शत्रु का नाम लिख दे, और फिर सर्प की हड्डियों की माला से निम्नलिखित मंत्र का पचास हजार जप करे, तो निश्चय ही शत्रु परेशान हो जाता है।

मंत्र जप पूरा होने के बाद उस पिण्डी को किसी स्थान पर जमीन में गाड़ देनी चाहिए, जब तक वह पिण्डी गड़ी रहेगी तब तक शत्रु कई कारणों से परेशान रहेगा और धीरे-धीरे उसका शरीर सूखता चला जायगा।

मन्त्र

ओ३म् हं हं हं ध्रूं सिं हुं कालि कालरात्रि अमुकं (शत्रु का नाम) पशु ग्रह्य हुं फट् स्वाहा।

जब इस झंझट से शत्रु को मुक्त करना हो तो उस पिण्डी को बाहर निकाल तोड़ कर तालाब में विसर्जित कर दे तो उस व्यक्ति पर किया हुआ प्रभाव समाप्त हो जाता है।

वश में करने का प्रयोग

किसी भी प्राणी प्रेमी, प्रेमिका, पति या पत्नी अथवा किसी को भी पूर्णतया अपने नियन्त्रण में या वश में करने के लिए यह प्रयोग अत्यन्त ही प्रभावपूर्ण है।

होली की रात्रि को एक हजार गुलाब पुष्प लेकर रख दें और सामने अग्नि-कुण्ड में एक मन्त्र पढ़कर एक गुलाब पुष्प शहद के साथ हवन करें, इस प्रकार एक हजार पुष्पों का हवन करने से निश्चय ही सम्बन्धित

व्यक्ति पूरी तरह से वश में हो जाता है और जीवन पर्यन्त उसका कहा मानता है।

मन्त्र

ओ३म् क्लीं सकलजगन्मोहिनी पञ्चभूतसमन्वितत्वे चतुर्तिश्जीवान् मोहय आणो पगुतले चभेनु वाघो वश्य करो न करे तो हनुमत की काण, कालभैरव की आण तेरी शक्ति मेरी शक्ति फुरो मन्त्र का (ल) रुद्र।

यह प्रयोग परीक्षित है और इससे कठोर-से-कठोर व्यक्ति भी पूरी तरह वश में हो जाता है।

समस्त प्रकार के रोग मिटाने का प्रयोग

होली की रात्रि को निम्न मंत्र की पचास मालाएं जपे, इसके बाद आक की सूखी लकड़ियों से एक हजार जप करे, ऐसा करने पर व्यक्ति का रोग समाप्त हो जाता है, साथ-ही-साथ उस पर यदि कोई तांत्रिक प्रयोग या अन्य प्रयोग होता है, तो वह भी दूर हो जाता है।

मन्त्र

ओ३म् नमो भगवतेशरभसातुवाय सकलरोगसंहारिणे चटको इछेंदकराय पैशाचिनीदारणाय धे धे शरभाय ग्रसि शरभ सालुवा ग्लौ शरभाय निरोग-माड़ु मुईल्ल दिद्दरे महामायि आशे, महेश्वरे पाणे प्रलयकालरुद्र पाणे काल-भैरव पाणे, निरोग माड़ु दिद्दरे निनग कैलासपति पाणे। ओ३म् गुरु-प्रसादश्।

इस प्रयोग को करने में आक की सूखी लकड़ियों के टुकड़ों को घी में डुबोकर आहुति दी जाती है।

व्यापार एवम् लक्ष्मी-वर्द्धक प्रयोग

होली की रात्रि को किसी कागज पर केसर से निम्न यंत्र एक कुलड़ी में रख दें, उसके साथ थोड़ा धनिया-हल्दी की गांठ, एक रुपया तथा सुपारी रख कर दुकान की गद्दी के नीचे गाड़ दें तो व्यापार चलता है।

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि दुकान में जहां व्यापारी बैठता हो उस स्थान के नीचे ही इसे रखकर या गाड़कर उस पर गद्दी बिछाकर व्यापारी को बैठना चाहिए।

ऐसा करने पर व्यापार बढ़ता रहता है, और आर्थिक दृष्टि से उसके जीवन में कोई अभाव नहीं रहता।

यन्त्र

२४	३२	८	७
६	३	३८	२७
३१	२५	८	१
४	५	२६	३०

प्रत्यक्ष वीर प्रयोग

होली की रात्रि को साधक श्मशान में बैठकर निम्न मंत्र का सर्प की हड्डियों की माला के द्वारा जप करे। तीन हजार मंत्र जप होते ही वीर प्रत्यक्ष होता है, तब अपने साथ रखी हुई खीर का भोग दे, ऐसा करते पर वीर वश में हो जाता है, और भविष्य में वह जो भी कार्य सौंपता है, वह पूरा करता है।

मन्त्र

ओ३म् नमो भगवती काल रात्रि कर्मम निलये कांधेश्वरी वीर भद्र वीरमान यात्र आगच्छ आगच्छ हुं।

यह मंत्र सिद्ध है, परन्तु मजबूत छाती वाला और हिम्मतवान साधक को ही साधना करनी चाहिए।

८

लक्ष्मी प्राप्ति के लिए साबर मंत्र सिद्धि

दीपावली का पर्व लक्ष्मी प्राप्ति के लिए श्रेष्ठतम पर्व है, इस अवसर पर आर्थिक उन्नति, व्यापार वृद्धि एवं लक्ष्मी प्राप्ति से सम्बन्धित साधक अपनी साधनाएं सम्पन्न करते हैं; परन्तु इन सारी साधनाओं में साबर साधनाएं अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं शीघ्र प्रभावपूर्ण होती हैं। नवरात्रि

के प्रारम्भ से लगाकर कार्तिक शुक्ला पंचमी तक का समय लक्ष्मी-साधना से सम्बन्धित महत्वपूर्ण समय कहलाता है।

साधकों को चाहिए कि वे समय का सदुपयोग करे और निम्न साधनाओं में से एक-दो साधनाएं तो अवश्य ही सम्पन्न करें, जिससे कि वे अपने जीवन में इन मन्त्रों का प्रभाव अनुभव कर सकें, और साथ ही साथ ऐसी साधनाएं सम्पन्न कर लाभ उठा सकें।

१. स्वर्णवती साधना

(आकस्मिक धन प्राप्ति के लिए बेजोड़ प्रयोग)

यह तीन दिन का प्रयोग है, और किसी भी बुधवार से प्रारम्भ किया जा सकता है।

जो साधक इस प्रयोग को करना चाहता है, उसे चाहिए कि वह बुधवार की रात्रि को लगभग ९ बजे उत्तर दिशा की ओर मुंह कर बैठ जाय, पीले रंग का आसन बिछा ले, और स्वयं भी पीली धोती पहनकर बैठे।

सामने लक्ष्मी का चित्र और मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त सियार सिंगी रख दे, यह अपने आपमें एक अद्वितीय वस्तु होती है, जो कि इस प्रकार के प्रयोग के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण देखी गई है।

सियार सिंगी को किसी पात्र में रखकर उस पर केसर का तिलक करे और फिर सामने अगरबत्ती व दीपक लगा ले, दीपक तेल का होना चाहिए।

ऐसा करने के बाद साधक शंख माला से या स्फटिक माला से निम्न-लिखित मंत्र की २१ मालाएं फेरे।

यह मन्त्र पूर्ण प्रभावयुक्त और अपने आपमें अद्वितीय है, तथा कई साधकों ने इसका प्रयोग किया है।

मन्त्र

ओ३म् ह्रीं ह्रीं ह्रीं स्वर्णावती ममगृहे आगच्छ आगच्छ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ओ३म् नमः।

जब मन्त्र जप पूरा हो जाय तब वह माला सियार सिंगी पर पहना दे, दूसरे दिन भी इसी प्रकार रात्रि को मन्त्र जप करे, तीन दिन तक ऐसा प्रयोग करने पर वह सियार सिंगी और साधना सिद्ध हो जाती है, तब उस सियार सिंगी को किसी अलग डिब्बी में रख दें।

२. कनकावती साधना

(व्यापार वृद्धि के लिए आश्चर्यजनक साधना)

नवरात्रि के प्रारम्भ से दीपावली तक इस प्रयोग को किया जा सकता है, जो भी व्यक्ति व्यापार करता हो या व्यापार में रुचि रखता हो अथवा मन में व्यापार प्रारम्भ करने की इच्छा रखता हो उसे अवश्य ही इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहिए।

इस प्रकार से वर्तमान में व्यापार से संबंधित बाधाएं दूर होती हैं, तथा निकट भविष्य में ही व्यापार में सफलता मिलने की सम्भावना बढ़ जाती है।

यह तीस दिन का प्रयोग है, और कभी भी बुधवार से इस प्रयोग को प्रारम्भ किया जा सकता है।

प्रातःकाल उठकर स्नान कर पीले वस्त्र पहिनकर अपने सामने पात्र में कनकावती यन्त्र रख दे, जो मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो, उस पर केसर से तिलक करे, सामने अगरबत्ती-दीप लगावे, और स्फटिक माला अथवा शंख माला से ११ मालाएं निम्न मन्त्र की फेरे।

यह मन्त्र अपने आपमें बेजोड़ है, और इसके माध्यम से व्यापारियों को आश्चर्यजनक सफलता मिली है, मंत्र निम्न प्रकारेण है :

मन्त्र

ओ३म् दारिद्र्य विनाशिनी अष्टलक्ष्मी कानकावती सिद्धि देहि देहि नमः।

इस प्रकार तीन दिन तक इस मंत्र का जप करे, तत्पश्चात् इस यंत्र को अपनी दुकान में या फैक्ट्री में स्थापित कर दे, और दीपावली तक नित्य इसके सामने अगरबत्ती व दीपक लगावे तो निश्चय ही उसे व्यापार में सफलता मिलती है, और निरन्तर उन्नति होती है।

३. भाग्य लक्ष्मी प्रयोग

(समस्त प्रकार से भाग्योदय के लिए अतुलनीय प्रयोग)

यह साधना एक महत्वपूर्ण और सफलतादायक साधना है, तथा प्रत्येक साधक के लिए यह आवश्यक है, क्योंकि इस साधना को सम्पन्न करने पर जीवन में जो इच्छा होती है, वह सम्पन्न होती है, तथा उसे सफलता मिलती है, नौकरी में प्रमोशन, उन्नति, आर्थिक सफलता, भाग्योदय आदि अनेक कार्यों में यह प्रयोग सफलतादायक कहा गया है।

नवरात्रि के प्रारम्भ से दीपावली तक किसी भी दिन इस प्रयोग को प्रारम्भ किया जा सकता है, यह केवल तीन दिन का प्रयोग है, और साधक को चाहिए कि पीले वस्त्र पहनकर प्रातःकाल साधना के लिए बैठ जाय और सामने सियार सिंगी रख तत्पश्चात् उस सियार सिंगी पर केसर का तिलक कर सामने तेल का दीपक-अगरबत्ती लगाकर स्फटिक माला से निम्न मन्त्र का जप प्रारम्भ करे, इसमें नित्य नौ मालाएं फेरने का विधान है।

मन्त्र

ओ३म् नमः भाग्य लक्ष्मी च विद्महे अष्ट लक्ष्मी च धीमहि तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्।

इस प्रकार तीन प्रयोग सम्पन्न करने के बाद उस सियार सिंगी को किसी पवित्र स्थान पर रख दे और नित्य उसके दर्शन करे। उसके बाद ही काम पर जावे, ऐसा करने पर शीघ्र ही भाग्योदय होता है, और उसे प्रत्येक कार्य में सफलता मिलती है।

वस्तुतः यह प्रयोग सर्वसिद्धिदायक एवं प्रभावयुक्त माना गया है।

फेत्कारिणी प्रयोग

(किसी भी प्रकार के तांत्रिक प्रयोग आदि को दूर करने की सफल साधना)

शत्रु और ईर्ष्यालु दूसरों की उन्नति नहीं देख सकते। जब वे परिश्रम कर उस प्रकार से सफलता प्राप्त करने में सफल नहीं हो पाते तब वे किसी अन्य उपाय से उसको नुकसान पहुंचाने की चेष्टा करते हैं, इसमें वे तंत्र-मंत्र का सहारा लेते हैं, और इसके माध्यम से व्यक्ति को बीमार बना लेना, घर में निरन्तर कलह रहना, पति-पत्नी में मतभेद, परिवार के सदस्यों की अकाल मृत्यु, व्यापार में हानि होना, समय पर कार्य सम्पन्न न होना, भाग्योदय में बाधाएं आदि प्रयोगों से व्यक्ति का जीवन छिन्न-भिन्न हो जाता है।

ऐसी स्थिति में यह प्रयोग राम बाण की तरह कार्य करता है, इस प्रयोग को करने से यदि उस पर या उसके सदस्यों पर अथवा व्यापार पर किसी प्रकार का कोई प्रयोग किया हुआ होता है, तो वह दूर हो जाता है, और उसकी वापिस उन्नति होने लग जाती है।

मेरी राय में तो प्रयोग प्रति वर्ष साधकों को कर लेना चाहिए, जिससे

कि किसी प्रकार का कोई विपत्ति या बाधा न रहे। यह प्रयोग मात्र तीन दिन का है। किसी भी शनिवार से इस प्रयोग को प्रारम्भ करना चाहिए। प्रातःकाल उठकर स्नान-सन्ध्यादि से निवृत होकर सामने मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हत्या जोड़ी रख दे, और उस पर कुंकुम से तिलक करे और फिर हाथ में जल लेकर कहे कि मैं यह साधना सम्पन्न कर रहा हूं, मुझ पर या मेरे परिवार अथवा व्यापार पर किसी प्रकार का दोष, तांत्रिक प्रयोग या पितृ दोष आदि हो तो वह समाप्त हो जाय और मेरी पुनः उन्नति प्रारम्भ हो।

तत्पश्चात् मूंगे की माला से निम्न ११ मालाएं फेरे :

मन्त्र

ओ३म् क्लीं मम समस्त शत्रूणां दोषान् निवारय क्लीं फट् स्वाहा ॥

इस प्रकार तीन दिन तक मंत्र प्रयोग करें और उसके बाद वह माला और हत्या जोड़ी घर के बाहर किसी स्थान पर गड्ढा खोदकर जमीन में गाड़ दें।

ऐसा करने पर वह दोष दूर हो जाता है, और उसके जीवन में पुनः उन्नति होने लग जाती है। यह प्रयोग अपने आपमें अत्यधिक महत्वपूर्ण है, इससे साधक को और उसके परिवार को सफलता मिलने लगती है।

५. अखण्ड लक्ष्मी प्रयोग

(जीवन में समस्त प्रकार की उन्नति के लिए श्रेष्ठ साधना)

जीवन में स्वस्थ शरीर, बैंक बेलेन्स, साहस, शक्ति, भवन, संतान, पत्नी सुख, दीर्घायु, भाग्योदय, व्यापार वृद्धि, नौकरी में उन्नति, विदेश यात्रा और अन्य कई प्रकार की पूर्ति को "अखण्ड लक्ष्मी प्रयोग" कहा जाता है।

नवरात्रि के प्रारम्भ से दीपावली तक यह प्रयोग सम्पन्न किया जा सकता है, यह प्रयोग मात्र तीन दिन का है, और अपने आपमें आश्चर्यजनक सफलता देने में सहायक है।

किसी भी बुधवार से इस प्रयोग को प्रारम्भ किया जा सकता है, प्रातःकाल उठकर साधक स्नान आदि कर सामने किसी पात्र में अखण्ड लक्ष्मी यन्त्र रख दे, जो मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो, फिर जल से स्नान कर यन्त्र को पोंछे और उस पर केसर से तिलक करे, इसके बाद स्फटिक माला से निम्न मन्त्र का जप करे।

मन्त्र

ओ३म् ह्रीं अष्ट लक्ष्म्यै नमः ।

नित्य ११ मालाएं फेरनी आवश्यक हैं, इस प्रकार तीन दिन तक इस मन्त्र का जप करे, जप साधना सम्पन्न हो जाय तो इस यन्त्र को घर में अच्छे स्थान पर या अपनी तिजोरी में रख दें, ऐसा करने पर साधना संपन्न होती है, और उसे जीवन में पूर्ण भौतिक तथा सभी प्रकार के सुख प्राप्त होने लगते हैं ।

८

दीपावली की रात्रि को किये जाने वाले महत्वपूर्ण गोपनीय प्रयोग

नीचे मैं कुछ ऐसे महत्वपूर्ण गोपनीय प्रयोग पहली बार प्रस्तुत कर रहा हूं, जो कि अपने आपमें महत्वपूर्ण है; अभी तक ये प्रयोग सर्वथा गोपनीय रहे हैं, और किसी पुस्तक में इस प्रकार के प्रयोग दिखाई नहीं दिये ।

साधकों को चाहिए, कि वे इनमें से एक या दो प्रयोग तो अवश्य ही सम्पन्न करें, क्योंकि इस प्रकार का महत्वपूर्ण पर्व पुनः एक साल भर बाद ही प्राप्त होता है, अतः प्रयोग की पहले से ही तैयारी कर लेनी चाहिए और इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहिए ।

१. आश्चर्यजनक व्यापार वृद्धि प्रयोग

यह प्रयोग दीपावली की रात्रि को सम्पन्न किया जाता है।

सामग्री—जल, पात्र, अगरबत्ती, घी का दीपक, व्यापार सिद्ध यन्त्र केसर ।

मन्त्र—ओ३म् ह्रीं धनधान्य समृद्धि दरिद्रविनाशिनी महालक्ष्मी मम गृहे आगच्छ आगच्छ ह्रीं ह्रीं ओ३म् नमः ।

विधि—साधक या प्रयोगकर्त्ता आसन बिछाकर पूर्व की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने पात्र में 'व्यापार सिद्धि यन्त्र' रख दे, पहले उसे जल से धो ले फिर पोंछकर उस पर केसर का तिलक करे और स्थापित कर उसके सामने दूध का बना प्रसाद रखे और अगरबत्ती तथा घी का दीपक प्रज्वलित करे, फिर स्फटिक माला से उपर्युक्त मंत्र की पांच मालाएं फेरे।

इसके बाद प्रातःकाल होने पर इस यन्त्र को अपने घर के पूजा स्थान में, दुकान पर अथवा फैक्ट्री में स्थापित कर दें।

ऐसा करने पर उसके व्यापार में निरन्तर उन्नति होती रहती है, और जब तक वह यन्त्र दुकान में, कार्यालय या फैक्ट्री में अथवा घर में स्थापित रहेगा तब तक उसे निरन्तर सफलता प्राप्त होती रहेगी।

२. जुए में जीतने का प्रयोग

दीपावली की रात्रि को कहीं-कहीं पर जुआ खेलने का प्रचलन है, प्राचीनकाल में भी रात्रि को जुआ खेलने का विधान था, प्राचीन ग्रन्थ में इससे संबंधित जो प्रयोग प्राप्त हुआ है, वह मैं पाठकों के लाभार्थ दे रहा हूं :

सामग्री—जल पात्र, केसर, लघु नारियल (मन्त्र सिद्ध), नैवेद्य, अगरबत्ती, दीपक।

मन्त्र—ओ३म् क्लीं पिशाचि आकस्मिक धन देहि देहि फट् स्वाहा।

दीपावली के दिन इस प्रयोग को सम्पन्न करने था सबसे अच्छा समय प्रातः १० बजकर २ मिनट से ११ बजकर १४ मिनट तक का है, यह प्रयोग दिन में करने के लिए है।

सर्वप्रथम साधक सामने किसी पात्र में लघु नारियल स्थापित कर दे, और उस पर कुंकुम या केसर का तिलक करे फिर उससे हाथ जोड़कर प्रार्थना करें कि मैं अमुक नाम का व्यक्ति यह महत्वपूर्ण प्रयोग जुए में सफलता प्राप्ति के लिए कर रहा हूं।

फिर मूंगे की माला से उपर्युक्त मन्त्र का जप करे और मालाएं फेरे, ऐसा करने के बाद जब जुआ खेलने के लिए जावे तब उस लघु नारियल को अपनी जेब में रखकर जावे।

ऐसा करने पर उसे जुए में सफलता मिलती है, और वह विशेष आर्थिक लाभ प्राप्त करने में समर्थ हो पाता है।

३. स्थिर लक्ष्मी प्रयोग

सामग्री—दक्षिणावर्ती शंख, केसर, जलपात्र, अगरबत्ती, दीपक, लाल वस्त्र।

मन्त्र—ओ३म् ह्रीं ह्रीं ह्लीं महालक्ष्मी धनदा यक्षिणी कुबेराय मम गृह स्थिरो ह्लीं ओ३म् नमः।

इस प्रयोग को सम्पन्न करने का समय दोपहर को २ बजे से ३ बजकर २५ मिनट के बीच है, यह समय इस दृष्टि से अत्यधिक सफलतादायक है।

साधक अपने सामने लाल वस्त्र बिछा कर उस पर दक्षिणावर्ती शंख रख दे, जो कि मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो और उस पर केसर से स्वस्तिक बना ले तथा कुंकुम से तिलक कर दे।

ऐसा करने के बाद स्फटिक माला से उपर्युक्त मन्त्र की तीन मालाएं फेरे, ऐसा करने पर यह प्रयोग सिद्ध हो जाता है, मन्त्र प्रयोग पूरा होने के बाद लाल वस्त्र में शंख को बांधकर घर में किसी अच्छे स्थान पर रख दे, जब तक वह शंख घर में रहेगा तब तक उसके जीवन में निरन्तर उन्नति होती रहेगी।

४. दरिद्रता विनाशक प्रयोग

यह प्रयोग भी दीपावली के दिन ही सम्पन्न करने का विधान है, प्रातः जल्दी उठकर इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहिए, ज्योतिष की दृष्टि से प्रातः ६ बजकर ५ मिनट से ६ बजकर १५ मिनट तक का समय इस प्रयोग के लिए विशेष महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

सामग्री—दारिद्र्य विनाशक श्रीफल (मन्त्र सिद्ध), जल पात्र, अगरबत्ती, घी का दीपक।

मन्त्र—ओ३म् क्रीं तालिके दरिद्र विनाशिन्ये हुं फट्।

विधि—सर्वप्रथम साधक पूर्व की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने किसी पात्र में मन्त्र-सिद्ध दरिद्रता विनाशक श्रीफल रख दे और उस पर केसर से अपना नाम लिख दे फिर उपर्युक्त मन्त्र की पांच मालाएं फेरें। इसके लिए मूंगे की अथवा स्फटिक की माला का प्रयोग किया जा सकता है।

जब मन्त्र जप पूरा हो जाय तब प्रयोगकर्त्ता स्वयं उस दरिद्रता विनाशक श्रीफल को दक्षिणा के साथ किसी गरीब या भिखारी को दान में दे दे। कहा जाता है कि ऐसा करने से उस श्रीफल के साथ ही साथ

दरिद्रता भी दान में चली जाती है, और उसके घर में भविष्य में किसी
प्रकार की दरिद्रता का वास नहीं रहता।

यदि भिखारी नहीं मिले तो प्रयोगकर्त्ता स्वयं किसी मन्दिर में जाकर
दक्षिणा के साथ उस श्रीफल को भेंट कर दे।

५. गृहस्थ सुख प्रयोग

यह भी दीपावली के दिन ही करने का प्रयोग है, गृहस्थ में किसी
प्रकार की कोई बाधा या परेशानी हो, पति-पत्नी में मतभेद, तनाव, पु
का आज्ञाकारी न होना या पुत्र को अपने लक्ष्य में सफलता प्राप्त न होन
घर में सन्तान न होना या अन्य किसी भी प्रकार की गृहस्थ बाधा हो
इस प्रयोग से दूर की जा सकती है।

इस प्रयोग को सम्पन्न करने का श्रेष्ठ समय दिन को १२ बजे
१२ बजकर ४७ मिनट तक का समय है, इस अवधि में इस प्रयोग
सम्पन्न किया जा सकता है।

सामग्री—गृहस्थ बाधा निवृत्ति यन्त्र, दीपक, अगरबत्ती।

मन्त्र—ओ३म् श्रीं मम गृहे तुष्टिं भव कंकावत्ये शिरो भव
स्वाहा।

विधि—साधक ठीक १२ बजे आसन पर बैठ जाय और मन में
चिन्तन करे कि मैं यह प्रयोग गृहस्थ की सभी बाधाओं को दूर करने
लिए कर रहा हूं, तत्पश्चात् मूंगे की माला से उपर्युक्त मन्त्र की इस अव
में ही तीन मालाएं फेरे।

जब मन्त्र जप पूरा हो जाय तब उस गृहस्थ यन्त्र को अपने घर
तिजोरी अथवा अलमारी में किसी डिब्बी में बन्द कर के रख दे, जब
वह यन्त्र घर में रहेगा, तब तक उस घर में किसी प्रकार का कलह
गृहस्थ से सम्बन्धित परेशानियां नहीं आयेंगी।

६. सर्वोन्नति प्रयोग

यह प्रयोग सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, कर्जा उतारने, रकम कहीं रुक
हो तो उसे प्राप्त करने, व्यापार-वृद्धि, नौकरी में प्रमोशन, आ
उन्नति, रोग-मुक्ति आदि सभी कार्यों और उन्नति में यह प्रयोग
दायक रहा है।

सामग्री—सर्व कामना सिद्धि यन्त्र, जल पात्र, अगरबत्ती, घी
दीपक।

मन्त्र—ओ३म् महायक्षाय मम सर्वोन्नति सिद्धि देहि दापय स्वाहा।

विधि—साधक को चाहिए कि वह इस समय में उत्तर की ओर मुंह कर बैठ जाय और सामने दीपक, अगरबत्ती लगा ले, फिर रुद्राक्ष की माला से उपर्युक्त मन्त्र की तीन मालाएं फेरें।

मन्त्र जप पूरा होने पर वह यन्त्र अपने घर में पूजा-स्थान में रख दें, और सम्भव हो सके तो रोज उसके सामने अगरबत्ती व दीपक जलाये।

ऐसा करने पर उस प्रयोगकर्त्ता के जीवन में सभी दृष्टियों से उन्नति होती रहती है।

९

बीसवीं शताब्दी में अमृत की खोज

जीवन में पूर्णता और अजर-अमर होने के लिए व्यक्ति सदियों से लालायित रहा है, उसकी एक ही आकांक्षा रही है कि वह किसी भी प्रकार से अपने जीवन को व्यवस्थित बनाकर बुढ़ापे को रोक सके, यही नहीं अपितु उसकी इच्छा हमेशा-हमेशा के लिए अमर बने रहने की रही है, और इसके लिए उसने मन्त्र, तन्त्र, औषधियों, कायाकल्प और अन्य कई प्रकार के प्रयोगों को आजमाया है, पर हर बार उसे असफलता ही मिली।

पर अब जाकर उसने उस 'अमृत' को खोज निकाला है, जिसके माध्यम से व्यक्ति मृत्यु को परे धकेलने में समर्थ हो सका है, जिसके कारण वह बुढ़ापे को रोककर जीवन में पूर्णता प्राप्त करने में सफल हो सका है।

पाठकों के लिए एक गंभीर और महत्वपूर्ण 'बीसवीं शताब्दी में अमृत की खोज' स्वामी अरविन्द के शब्दों में :

आदिकाल से मनुष्य की यह जिज्ञासा और महत्वाकांक्षा रही है कि वह अपनी वृद्धावस्था को रोककर किसी प्रकार से स्वस्थ रहता हुआ दीर्घजीवी और अमर बना रह सके, इसके लिए उसने अपने ऊपर सैकड़ों

प्रयोग किये, पुराणों में वर्णित देवताओं और दानवों का युद्ध स्पष्ट है, कि समुद्र-मन्थन के बाद जब उसमें से अमृत निकला तो उसे पीकर अजर-अमर होने के लिए उन दोनों में घमासान युद्ध छिड़ गया, इस युद्ध में देवता विजयी हुए और अमृत पीकर हमेशा-हमेशा के लिए उन्होंने मृत्यु को परे धकेल दिया।

इसके बाद उस अमृत तत्व की खोज हम भूल गये। पुराण काल में युधिष्ठिर ने भी भगवान श्रीकृष्ण से पूछा कि क्या अमृत जैसा तत्व विद्यमान है, जिससे कि मैं अपने भाइयों को अमरत्व प्रदान कर सकूं, परन्तु उनकी यह खोज अधूरी ही रही, इसके बाद भी आदमी चुपचाप शांत होकर बैठ नहीं गया, अपितु निरन्तर उसकी खोज इस अनुपम तत्व को ढूंढ़ने में लगी रही और इस खोज में उसे सैकड़ों बार असफलताएं भी प्राप्त हुईं।

जिस समय बालक जन्म लेता है, तो नवीनतम शोधों के अनुसार वह जितना समय जवान होने में लगाता है, लगभग उससे चौगुनी आयु उसकी होती है, पहले पच्चीस वर्ष के बालक को जवान माना जाता था, और उसकी आयु १०० वर्ष बनी रहती थी, परन्तु आज अन्य साधनों के माध्यम से बालक पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में ही जवान बन जाता है, इसीलिए उसकी आयु साठ या सत्तर वर्ष से ज्यादा नहीं हो पाती, यह जवानी धीरे-धीरे बुढ़ापे में परिवर्तित होती रहती है और यही बुढ़ापा आगे चलकर मृत्यु का रूप धारण कर लेता है।

शरीर तत्व के शोधकर्त्ताओं के अनुसार बुढ़ापा आने के तीन कारण हैं—पहला कारण तो यह है कि हमारे शरीर में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है, परन्तु उस परिवर्तन का हमारी कार्यक्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, जैसे बालों का सफेद हो जाना, चेहरे पर या शरीर पर झुर्रियां पड़ जाना आदि।

दूसरा परिवर्तन समय के साथ-साथ अनिवार्य रूप से शरीर के अंगों पर पड़ता है, ज्यों-ज्यों आयु बढ़ती है, त्यों-त्यों फेफड़ों व गुर्दों की कार्यक्षमता पर प्रभाव पड़ता रहता है, युवावस्था की अपेक्षा साठ वर्ष की अवस्था में इन दोनों अंगों की कार्यक्षमता में लगभग पचास प्रतिशत न्यूनता आ जाती है, रक्तचाप लगभग बीस प्रतिशत बढ़ जाता है और प्रतिदिन मस्तिष्क की कोशिकाओं में गिरावट आने लग जाती है, इन कोशिकाओं की गिरावट ही व्यक्ति को मृत्यु में परिवर्तन कर देती है।

तीसरा परिवर्तन हमारे खान-पान, रहन-सहन वातावरण आदि के

प्रभाव से हमारी धमनियों में कोलेस्ट्रोल जैसे पदार्थ एकत्र होते रहते हैं, जिसकी वजह से हमारी रक्त-वाहक नलिकाएं कमजोर हो जाती हैं और उनका लचीलापन समाप्त हो जाता है, इनके संकुचित होने से इनकी आंतरिक चौड़ाई कम हो जाती है, फलस्वरूप शरीर के सभी अंगों में पूरी तरह से रक्त-संचार नहीं हो पाता और व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

पहले दो परिवर्तनों पर तो हमारा अधिकार नहीं है, परन्तु यदि हम प्रयत्न करें तो तीसरे प्रकार के परिवर्तन पर नियंत्रण कर सकते हैं, खान-पान, वातावरण आदि में सुधार करके हम मनोवांछित लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसी धारणा को लेकर फ्रांस के विख्यात डाक्टर एडवर्ड ब्राउन सेफार्ड ने ज्ञात किया कि समय के साथ-साथ व्यक्ति में पौरुष-तत्व की कमी हो जाती है, और इस तत्व की न्यूनता ही व्यक्ति को मृत्यु के मुख में धकेल देती है, इसके लिए उसने जानवरों के अण्डकोश से रस निकालकर एक अर्क तैयार किया और अपने शरीर में उस अर्क को पहुंचा दिया, उस समय डा० ब्राउन की अवस्था ७२ वर्ष की थी, डाक्टर ने दो दिन के अन्दर ही महसूस किया कि उनके सिर के बाल स्वतः काले होने लगे हैं और झुर्रियां मिटने लगी हैं, पहले डा० ब्राउन छड़ी की सहायता से चलते थे, पर इस इंजेक्शन के बाद वे बिना छड़ी की सहायता से सीढ़ियां चढ़ने-उतरने लग गये, उनके चेहरे और शरीर पर आश्चर्यजनक परिवर्तन और प्रभाव दिखाई देने लगे। डा० ब्राउन की इस खोज से पूरे संसार में तहलका मच गया और ऊंचे-से-ऊंचे राजनेता और करोड़पति इस प्रकार का इंजेक्शन लेने लगे।

परन्तु यह उम्मीद भी बेकार साबित हुई, क्योंकि इसका असर बहुत थोड़े समय तक रहा, कुछ समय तक तो जवानी के लक्षण दिखाई देते रहे, परन्तु साल भर के भीतर-भीतर तेजी से शरीर का क्षरण होने लगा, कुछ वर्षों बाद डा० ब्राउन की भी मृत्यु हो गई, आज भी यह दवा 'टैस्टोस्टीरोन' के रूप में हर जगह आसानी से मिलती है।

इसके बाद रोमानिया की डा० एना ने सन् १९५० में 'एच-ई' नामक एक ऐसे पदार्थ का प्रयोग प्रारम्भ किया जिससे वृद्ध व्यक्ति पूर्णतः जवान बन सके, यह दवा पूरे संसार में सर्वाधिक विख्यात हुई और डा० एना से कायाकल्प करवाने वालों में चीन के चेयरमैन माओ, रूस के ख्रुश्चेव आदि कई नाम सम्मिलित हैं, जिन्होंने इस दवा के माध्यम से कायाकल्प करवाया।

हकीकत में यह दवा भी बेअसर रही, क्योंकि एच-ई वास्तव में प्रोकेन पदार्थ का ही रूप था। यह प्रोकेन प्रोटीन में घुलनशील होने की वजह से झुर्रियों को मिटा देता था, और शरीर में एक विशेष जोश तथा उमंग पैदा कर देता था, परन्तु इसका प्रभाव भी कुछ समय तक ही रहता है और आगे चलकर इसके दुष्परिणाम यह होते हैं कि व्यक्ति उतनी ही तीव्रता से पुन: क्षरण की ओर अग्रसर होने लगता है, यह दवा भी वैज्ञानिक कसौटी पर टिक नहीं पाई।

उन्हीं दिनों स्विटजरलैण्ड के प्रोफेसर पालनिहेन्स ने शरीर के नवीनीकरण के लिए एक सर्वथा नयी विधि अपनाई; उसने पशुओं की कोशिकाओं को लेकर अधेड़ व्यक्तियों के शरीर में समाहित करने की कोशिश की, इससे कुछ दिनों के लिए आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त हुए और महीनेदो महीने के लिए तो ऐसा लगा जैसे वह साठ साल का व्यक्ति पच्चीस वर्ष की अवस्था में पहुंच गया हो परन्तु उसका प्रभाव महीने-दो महीने से ज्यादा नहीं रहा और व्यक्ति तीव्रता से पुन: वृद्धावस्था की ओर बढ़ने लग गया। प्रभु ने हमारे शरीर का निर्माण इस प्रकार से किया है कि वह अन्य पशु या मनुष्य की कोशिकाओं को अपने साथ समाहित नहीं करता, इसीलिए यह प्रयोग सर्वथा असफल रहा।

पिछले दस वर्षों में डा० जार्विक ने सर्वथा एक नया प्रयोग किया और इसमें उसे कुछ सफलता भी मिली, डा० जार्विक के अनुसार हम कृत्रिम अंग बनाने में सक्षम हैं; और हमारे शरीर के जो अंग घिस गये हों उनको फेंक कर उनको नये अंग लगा दें, इस प्रयास में डाक्टर ने गुर्दे, किडनी, धमनियां और नकली हृदय लगाकर मनुष्य को यौवन सम्पन्न बनाने का प्रयास किया, परन्तु डा० जार्विक भी इसमें सफलता नहीं पा सके, क्योंकि अन्य अंग तो वह लगा सकता है, परन्तु मानव-मस्तिष्क का क्या होगा जो विचार, भाव, चेतना आदि का केन्द्र है, इसमें बिल्कुल सफलता न मिल पाने के कारण डा० जार्विक को अपना प्रयास अधूरा ही छोड़ना पड़ा।

जब सभी तरह से वैज्ञानिकों को निराशा हाथ लगी तो वे पुन: पुरातनता की ओर देखने लगे और आयुर्वेद की तरफ उन्होंने ध्यान दिया, जिसमें कायाकल्प करने और मनुष्य को अमर बनाने के प्रयोग दिये हुए हैं, इन प्रयोगों में एक आंवले का प्रयोग है, आयुर्वेद के अनुसार यदि व्यक्ति नित्य आंवले का सेवन करे तो बुढ़ापा आ ही नहीं सकता, कुछ वैज्ञानिकों ने आंवले का सत्व निकालकर मानव रक्त में पहुंचाने का

प्रयास किया। इससे क्षणिक सफलता अवश्य मिली परन्तु जो मनोवांछित परिणाम वे चाहते थे, वह प्राप्त नहीं कर सके।

इस समस्या का समाधान वैज्ञानिकों के पास तो नहीं परन्तु कई योगियों के पास अवश्य है, जिससे वे मानव का कायाकल्प करने में सक्षम हैं। साथ-ही-साथ उनमें अमरत्व प्रदान करने की भी शक्ति है। पिछले दिनों गंगोत्री से आगे गोमुख स्थान पर हिमालय के उच्चतम योगियों का सम्मेलन हुआ था, और कायाकल्प तथा अमरत्व से संबंधित औषधि के वारे में गम्भीरता से विचार-विमर्श हुआ। इस सम्मेलन की आवश्यकता इसलिए अनुभव हुई कि हिमालय में ऐसी कई वनस्पतियां हैं, जो मनुष्य को अमर वनाने में पूर्ण रूप से सहायक हैं, परन्तु अनजाने में ही जिस प्रकार से अंधाधुंध हिमालय के जंगलों की कटाई हो रही है, उससे इन वनस्पतियों की सुरक्षा आवश्यक हो गई है।

इसी खतरे को भांपते हुए आज से सात-आठ वर्ष पहले ही पूज्य गुरुदेव के निर्देश से नैनीताल के आगे एक स्थान पर दो मील लम्बा-चौड़ा एक फार्म खरीदा गया और अनथक प्रयासों से इस फार्म में पूरे हिमालय की उन दुर्लभ जड़ी-बुटियों को पैदा करने की या उगाने की योजना तैयार की गई जिससे कि ये दुर्लभ जड़ी-बूटियां समाप्त न हो जायं। इस फार्म में चौंसठ दिव्य औषधियों को तो उगाया ही गया है, मयूरकन्द, तेलियाकन्द, अश्वत्थ, अशोक और कल्पवृक्ष जैसे पौधे भी उगाये गये हैं और सफलता से ये पौधे इस जमीन में वढ़े भी। आज यह फार्म पूरे संसार का अद्वितीय फार्म है, पूरे हिमालय में पाई जाने वाली विशिष्ट औषधियां पौधे और पेड़ों के रूप में यहां सहजता से प्राप्त हैं।

इन्हीं पौधों में एक पौधा 'अमृत वल्ली' है जिसे आयुर्वेद के ग्रन्थों में अमृत के नाम से पुकारा गया है। धन्वन्तरी ने अपने ग्रन्थ में इस पौधे की प्रशंसा करते हुए वताया है कि इसके रस के सेवन से न तो बुढ़ापा आ सकता है और न व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त कर सकता है। पिछले सैकड़ों वर्षों से इस पौधे की खोज हो रही थी, कुछ योगियों ने इस पौधे को ढूंढ़ निकालने का दावा भी किया, परन्तु परीक्षण करने पर वह दावा सर्वथा खोखला और बेमानी निकला।

यह पौधा लगभग पांच फीट ऊंचा और दो फीट चौड़ा होता है, इसकी पत्तियां नीम की पत्तियों के समान लम्बी और कोणदार होती हैं, एक डाली पर लगभग सोलह फूल उगते हैं, दिन को ये फूल बन्द रहते हैं, परन्तु ज्यों ही चन्द्रमा खिलता है ये फूल खिल जाते हैं, चन्द्रमा जिधर

घूमता है, ये फूल भी उधर घूमते रहते हैं। एक फूल में सोलह बीज होते हैं, इन बीजों की यह विशेषता है कि यदि फूल से बीज को अलग कर दिया जाय, और हथेली में उस बीज को रखा जाय, तो पांच मिनट के अन्दर-अन्दर उसमें से रस निकलने लगता है। वह बीज स्वतः घुलकर रस रूप में परिणत हो जाता है, परन्तु यह क्रिया चन्द्रमा की साक्षी में ही संभव है, दिन को यदि यह बीज हथेली पर रखा भी जाए तो उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

नागार्जुन ने अपने ग्रन्थ में इस पौधे का वर्णन किया है और बताया है कि "स्वतः बीज से निकलते हुए रस को यदि व्यक्ति सेवन करे तो उसका कायाकल्प अवश्यम्भावी है।" हम बड़ी कठिनाई से इस पौधे को फार्म में प्रतिस्थापित कर सके, परन्तु इसका जब परीक्षण एक अस्सी साल के वृद्ध पर किया गया तो उसके आश्चर्यजनक परिणाम सामने आये। हथेली पर कुछ बीजों को पूर्णमासी की रात्रि को रख दिया तो चन्द्रमा की किरणों से आप्लावित होकर ये बीज स्वतः ही रस में परिणत हो गये। वह रस वृद्ध व्यक्ति को सेवन कराया गया, तीसरे दिन उसके शरीर के सारे बाल काले रंग में बदलने लगे और पन्द्रह दिन के बाद जो वृद्ध हांफता हुआ एक फर्लांग भी नहीं चल सकता था, वह दौड़ता हुआ पांच मील की दूरी को पार कर गया।

इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि समय बीतने के साथ-साथ उसके प्रभाव में कोई न्यूनता नहीं आयी, अपितु उस अस्सी साल के वृद्ध में वही जोश, वही उमंग, और वही उत्साह बना रहा।

एक मरणासन्न आयु प्राप्त व्यक्ति को मात्र आधा चम्मच यह रस दिया गया तो वह पुनः जीवन प्राप्त कर सका और छः महीने बीतने के बाद भी वह उतना ही स्वस्थ, निरोग और प्रसन्नचित है।

आधुनिक युग में अमृतवल्ली की प्रामाणिक खोज एक आश्चर्यजनक वरदान के रूप में सामने आयी है, यद्यपि अभी तक यह दावा तो नहीं किया जा सकता कि इसके सेवन से व्यक्ति मरा नहीं है पर हमने छः वृद्धतम व्यक्तियों पर इसका प्रयोग किया है और जो परिणाम हमारे सामने आये हैं, वे आश्चर्यजनक हैं। उनके बुढ़ापे के चिह्न हमेशा-हमेशा के लिए मिट गये, शरीर की कांति और चेहरा पच्चीस वर्ष के युवक जैसा हो गया, और छः महीने बाद भी उसमें किसी प्रकार की कमी या न्यूनता अथवा क्षरण अनुभव नहीं हुआ।

वस्तुतः आज के युग में यह आश्चर्यजनक जड़ी मानव-समाज को प्राप्त

हुई है, जिसका इतिहास अत्यधिक लम्बा और गौरवमय रहा है। यह एक ही जड़ी उस अमृत कलश की तरह है, जिसे पीकर देवता सही अर्थों में अजर-अमर बन सके हैं। और इन बीसवीं शताब्दी में भी इस अमृत घट की खोज से पूरे संसार को अमरत्व प्रदान किया जा सकेगा।

१०

रत्नों के रंगमहल में

प्रस्तुत लेख में रत्नों की रहस्य कथा से पाठकों को परिचित कराया जा रहा है कि किस प्रकार रत्न के माध्यम से व्यक्ति अपने भाग्य में परिवर्तन ला सकता है, और जीवन को सभी दृष्टियों से सुखी, सफल और सम्पन्नकर सकता है।

मोहन कृष्ण स्वयं रत्नों के अच्छे ज्ञाता और पारखी रहे हैं, और उनका जीवन का अधिकांश भाग रत्नों के रहस्य के बारे में ही व्यतीत हुआ। उन्हीं के शब्दों में यह शोध-परक महत्वपूर्ण सारगर्भित लेख :

रत्नों के बारे में ज्ञान सदियों से चला आ रहा है और अधिकांश व्यक्तियों की राय है कि रत्नों के माध्यम से भाग्य को परिवर्तित किया जा सकता है। कुछ ऐसे अशुभ रत्न होते हैं कि उनके आने से परिवार तबाह हो जाते हैं, तो कुछ रत्न व्यक्ति के जीवन में आश्चर्यजनक परिवर्तन लाकर उन्हें उन्नति के शिखर पर पहुंचा देते हैं।

यह भी आवश्यक नहीं कि प्रत्येक रत्न प्रत्येक व्यक्ति के लिए शुभ या अशुभ हो, किसी को कोई रत्न अनुकूल फल देता है, तो वही रत्न दूसरे व्यक्ति को अशुभ फल भी दे देता है, इसलिए रत्नों का चयन सावधानी के साथ करना चाहिए।

रत्नों के चयन में कई बातों का ध्यान रखना पड़ता है कि व्यक्ति के ग्रहों के अनुसार कौन-सा रत्न ज्यादा अनुकूल रहेगा। वह रत्न दूषित नहीं होना चाहिए। रत्न में किसी प्रकार की रेखा, धब्बा या छींटा नहीं हो, साथ ही रत्न पारदर्शी, स्वच्छ व स्पष्ट हो, इसके साथ ही रत्न कितने वजन

का और किस उंगली में पहिना जाना चाहिए इन सब बातों का निश्चय रत्न धारण करने से पहले कर लेना चाहिए।

संसार में चौरासी रत्न विख्यात हैं इनमें से नौ रत्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण और मुख्य कहे जाते हैं, पहले मैं पाठकों के लाभार्थ चौरासी रत्नों के नाम स्पष्ट कर रहा हूं :

चौरासी रत्न

१. माणिक्य, २. हीरा, ३. पन्ना, ४. नीलम, ५. लहसुनिया, ६. मोती, ७. मूंगा, ८. पुखराज, ९. गोमेदक, १०. अजूबा, ११. अहवा, १२. अवरी, १३. अमलिया, १४. अलेमानी, १५. अपल, १६. उदारू, १७. एमनी, १८. कटैला, १९. कुदरत, २०. कसौटी, २१. लहरुआ, २२. कासला, २३. कुरण्ड, २४. गौरी, २५. गूदड़ी, २६. गोदन्ता, २७ गोदन्ती, २८. चकमक, २९. चित्ती, ३०. चुम्बक, ३१. जबरजद, ३२. अचेमानी, ३३. जराहत, ३४. जहरमोहरा, ३५. झरना, ३६. दूरटेडी, ३७. तामड़ा, ३८. टिलियर, ३९. तुरनली, ४०. तुरसावा, ४१. दारचना, ४२. दानेफरंग, ४३. दुरेनजफ, ४४. दांतला, ४५. घुसेला, ४६. नरमपधन, ४७. पितोनिया, ४८. पारस, ४९. फातेजद्दर, ५०. फिरोज, ५१. फिटक, ५२. बांसी, ५३. मरगज, ५४. मकड़ी, ५५. मरियम, ५६. मारबल, ५७. मूंसा, ५८. मुवेनज्फ, ५९. यशव, ६०. रातरतुबा, ६१. लालड़ी, ६२. लाजवर्त, ६३. लूधिया, ६४. लास, ६५. वसरा, ६६. वसरी, ६७. संगसतिरा, ६८. सुलेमानी, ६९. संगेराहत, ७०. सुनहला, ७१. सिन्दूरिया, ७२. सिवार, ७३. मिझरी, ७४. संगिया, ७५. सिफरी, ७६. सोममक्खी, ७७. सुरमा, ७८. सिगली, ७९. स्फटिक, ८०. हकीक, ८१. हदीद, ८२. हजरतेवेर, ८३. हिरवल, ८४. हिरणाक।

ये चौरासी रत्न महत्वपूर्ण हैं, और शरीर में पाये जाते वाले १६८ रोगों की औषधियां हैं, अब मैं प्रमुख नवरत्नों का परिचय दूंगा :

१. सूर्य रत्न—माणिक्य

यह सबसे अधिक महंगा और बहुमूल्य रत्न माना गया है। कभी-कभी तो हीरे से भी ज्यादा इसका मूल्य आंका जाता है, यह गुलाबी रंग का होता है, पर मैंने श्याम तथा आसमानी रंग के माणिक्य भी देखे हैं, यह सूर्य ग्रह का रत्न है, इसका प्रयोग राजा-महाराजा अपने मुकुटों में जड़ाने के लिए करते हैं। कलकत्ता में एक ८० केरेट का माणिक्य है, जिसका मूल्य

३६ अरब रुपये है, इसी से इसके मूल्य की पहिचान की जा सकती है।

यह शौर्य और वीरता का प्रतीक रत्न है। यदि यह रत्न पहना हुआ है तो शत्रु स्वयं बलहीन हो जाता है। यदि लग्न से सूर्य तीसरे, पांचवें, नवें या ग्यारहवें भाव में हो और ऐसा व्यक्ति माणिक्य रत्न धारण करे तो उसे अपार धन तो मिलता ही है, साथ-ही-साथ उसे यश, सम्मान, पद और प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। नवरत्नों की अंगूठी में इसे मध्य में जड़वाया जाता है, ऐसा रत्न धारण करने वाला व्यक्ति रोगरहित, धार्मिक विचारों वाला तथा वाक्पटु एवं धनी होता है।

कई रोगों में माणिक अचूक लाभ देता है। १. बड़े-से-बड़े घाव पर यदि माणिक्य की भस्म लगाई जाय तो वह घाव तुरन्त ठीक हो जाता है। २. यदि एनीमिया अर्थात् खून की कमी से सम्बन्धित रोग हो तो माणिक्य की भस्म शहद के साथ चटाने से तुरन्त लाभ देता है। ३. जिसकी स्मरण शक्ति कमजोर हो या मस्तिष्क विकृत हो तो उसे माणिक्य की भस्म गाय के दूध के साथ देने से अचूक लाभ प्राप्त होता है। ४. यह पुरुषत्व का प्रतीक है, इसको धारण करने से नपुंसकता दूर होकर पूर्ण पुरुषत्व प्राप्त होता है। ५. यदि पानी में कुछ समय माणिक्य रखकर वह पानी पी लिया जाय, तो पीलिया रोग समाप्त हो जाता है। ६. कैंसर के रोगी को यदि पीपल के पत्ते के रस में माणिक्य की भस्म मिलाकर चटाई जाय तो निश्चय ही कैंसर समाप्त हो जाता है।

२. चन्द्र रत्न—मोती

यह चन्द्रग्रह का प्रतीक है, मोती कई रंगों के होते है, इनमें काला, पीला, लाल, आसमानी और सफेद रंग के विशेष प्रसिद्ध हैं। मोती की बीस जातियां होती हैं और प्रत्येक जाति के मोती का प्रभाव अलग-अलग है, उदाहरण के लिए अधिकतर महिलाओं के गले में कृशा जाति के मोतियों की माला होती है, ऐसे मोती धारण करने वाला व्यक्ति या स्त्री हमेशा आर्थिक दृष्टि से परेशान रहता है। मत्स्याल मोती सर्वश्रेष्ठ होता है, और इसको पहनने वाला व्यक्ति अजेय बना रहता है।

बकरी के दूध के साथ मोती-भस्म लेने से जोड़ों का दर्द समाप्त हो जाता है।

३. मंगल रत्न—मूंगा

संस्कृत में इसे प्रवाल, अंगारक, लत मणि आदि नामों से भी पुकारा जाता है, यह सागर के नीचे की सतह पर लाल व सफेद पाया जाता है, यह एक ऐसा रत्न है कि यदि इसे बायें हाथ की अनामिका उंगली में धारण किया जाय तो उसे हृदय-रोग नहीं होता और संघर्षपूर्ण जिन्दगी में राहत और सुख अनुभव होने लगता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि स्त्री जाति को भूलकर भी लाल रंग का मूंगा रत्न धारण नहीं करना चाहिए। अपितु उसे सदैव सिन्दूरी रंग का मूंगा ही पहनना चाहिए।

मूंगा रत्न कई रोगों में सहायक है, यदि पानी के गिलास में रात-भर मूंगा रत्न रहने दें और प्रातःकाल वह पानी पी लिया जाय, इस प्रकार बीस दिन तक करने से पुराने-से-पुराना बवासीर हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है।

४. बुध रत्न—पन्ना

पन्ने के कई नाम हैं, जैसे मरकत, पाची, हरिमणि, पन्ना आदि। इसका रंग हरी झांई लिए हुए होता है, मैंने सफेद और नीम की पत्ती के रंग के पन्ने भी देखे हैं। मूल्य में यह काफी महंगा होता है, कई बार तो एक केरेट पन्ने का मूल्य पांच लाख से भी ज्यादा हो जाता है, अमेरिका में एक करोड़पति के पास पन्ने का प्याला है, जिसका सन् १९८० में एक अरब तीस करोड़ रुपया मूल्य आंका गया था। निजाम हैदराबाद के पास पन्ने का एक गिलास था, जिसका मूल्य उसकी रियासत के बराबर आंका गया। विवश होकरे निजाम ने उस गिलास के टुकड़े-टुकड़े करके बेचा और उस जमाने में भी ६० करोड़ रुपये से ज्यादा एकत्र किए थे।

यह अत्यधिक सहयोगी रत्न है, अंगूठी में जड़वाकर पहनने वाला व्यक्ति धन-सम्पत्ति वाला, सुखी और मान-सम्मान वाला होता है। यदि पन्ने के प्याले में शराब डालकर पी जाय तो उस शराब का प्रभाव और नशा सौ गुना ज्यादा बढ़ जाता है। पन्ना धारण करने वाले व्यक्ति पर किसी विष का असर नहीं होता, जिसको गैस की बीमारी हो, उसे पन्ना रत्न अवश्य धारण करना चाहिए, इसकी भस्म से पागलपन, गठिया, आधाशीशी, हकलाना, मूर्छा आदि रोग दूर हो जाते हैं।

५. गुरु रत्न—पुखराज

इसको संस्कृत में पुखराज, पीतमणि, वाचस्पति आदि नामों से भी जाना जाता है, पुखराज लगभग सभी रंगों में मिलता है, परन्तु इसका सर्वश्रेष्ठ रंग पीला है, काला और सफेद पुखराज काफी महत्वपूर्ण होता है। यदि घर में कन्या-रत्न ही होती हो, तो पति-पत्नी दोनों पीला पुखराज धारण करे, तो उसके घर निश्चय ही पुत्र-रत्न पैदा होता है।

हड्डी का दर्द, काली खांसी, बवासीर आदि रोगों में पुखराज की भस्म विशेष महत्वपूर्ण मानी गई है, यदि शहद के साथ नित्य थोड़ी-सी पुखराज भस्म दी जाय तो उसको जीवन में कभी भी कोई रोग नहीं होता।

६. शुक्र रत्न—हीरा

हीरा, हीरक, भार्गव प्रिय, पवि, अर्क आदि इसके अन्य नाम है। यह कई रंग का होता है, परन्तु सफेद रंग का हीरा सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह अत्यधिक महत्वपूर्ण और बहुमूल्य रत्न है, इसको धारण करने वाला व्यक्ति शीघ्र ही धनवान् हो जाता है। एक जौहरी के पास एक गुलाबी हीरा है, जिसका वजन मात्र १६० केरेट आंका गया है, इसका मूल्य लगभग दो अरब रुपये है, फिर भी वह इसको देना नहीं चाहता। नीले रंग का अस्सी केरेट का एक हीरा अस्सी करोड़ में बिका था। भारत के कई राजा-महाराजा के पास महत्वपूर्ण हीरे हैं, परन्तु राज्य-भय से उनका प्रदर्शन नहीं किया जाता, विदेशों के कोहिनूर, हारलक होप आदि हीरे तो विश्व प्रसिद्ध रहे हैं। हीरे की पहिचान यह है कि गर्म दूध में हीरा डाल दिया जाय तो दूध तुरन्त ठण्डा हो जाता है, हकलाने वाला व्यक्ति यदि अपने मुंह में हीरा रखकर बोले तो उसका तोतलापन समाप्त हो जाता है, शरीर की दुर्बलता, कमजोरी, अजीर्ण, स्नायुरोग आदि में हीरक भस्म अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी गई है।

७. शनि रत्न—नीलम

इसे नील, महानील, शनि रत्न, इन्द्र नील आदि-आदि नामों से भी पुकारा जाता है। यह नीले रंग का ही होता है, परन्तु कुछ हल्के नीले रंग के भी पाये जाते हैं। इसकी एक और जाति होती है, जिसे खूनी नीलम कहा जाता है। वह लाल रंग का होता है, यह रत्न कुछ घण्टों में ही असर

दिखाने लग जाता है। यदि नीलम व्यक्ति के लिए शुभदायक हो गया तो उसे मालामाल कर दे, अन्यथा उसे पूरी तरह से बर्बाद और नेस्तनाबूद भी कर देता है।

८. राहु रत्न—गोमेद

इसके कई नाम प्रचलित हैं—इसमें स्वर, भानु, पीत रत्न, राहु रत्न, गोमेदक आदि विशेष प्रचलित हैं, गौमूत्र के रंग का गोमेद सर्व श्रेष्ठ माना गया है, पीले और सुर्ख रंग के गोमेद भी मिलते हैं, काले रंग का गोमेद शुभदायक नहीं होता। इसके पहनने से राहु का विपरीत प्रभाव समाप्त हो जाता है, यह पथरी रोग को दूर करने में विशेष रूप से सहायक है।

९. केतु रत्न—लहसुनिया

लहसुनिया के कई नाम हैं, जिनमें वैदूर्य, बिडालाक्ष, अग्ररोग आदि विशेष प्रचलित हैं। सबसे अच्छा रत्न लंका का होता है, इसे 'कैट्स आई' भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें बिल्ली की आंख की तरह एक सफेद लकीर दिखाई देती है। इसका रंग श्याम, पीला, काला, सफेद होता है। तीन लकीरों वाला लहसुनिया रत्न सबसे अधिक श्रेष्ठ और कीमती माना गया है, इसकी माला धारण करने वाला व्यक्ति अजेय होता है।

स्मरण शक्ति, जोड़ों का दर्द, मुकदमे में जीत, पारिवारिक सुख-शांति आदि में लहसुनिया रत्न विशेष रूप से उपयोगी एवं सहायक है।

१०. नौ रत्न अंगूठी

कुछ लोग एक ही अंगूठी में नौ रत्न जड़वाकर उसको धारण करते हैं, पर इसमें रत्नों का चयन सावधानी के साथ करना चाहिए, और सभी रत्न लगभग बराबर वजन के होने चाहिए। इसके अलावा इस अंगूठी में रत्नों को सही स्थानों पर जड़ना चाहिए, जो कि इस प्रकार है :

पन्ना	हीरा	मोती
पुखराज	माणिक्य	मूंगा
लहसुनिया	नीलम	गोमेद

ये रत्न अत्यधिक नाजुक होते हैं, अतः इनको जड़वाते समय पूरी-पूरी सावधानी बरतनी चाहिए, ज्यादा चोट लगने से रत्न टूटने का खतरा

रहता है, इसलिए कुशल कारीगर से ही रत्न जड़वाना चाहिए।

रत्नों को अंगूठी में इस प्रकार जड़वाना चाहिए कि वह रत्न उंगली की त्वचा से स्पर्श होता रहे, इसके लिए रत्न के नीचे का स्थान खोखला बना रहना चाहिए।

स्त्रियां रत्नों को गले में, कानों में या नाक में भी धारण कर सकती हैं, परन्तु पुरुष अंगूठी में जड़वाकर ही रत्न धारण कर सकता है।

११

दक्षिणावर्ती शंख की महिमा

आज मैं ७५ वर्ष से भी ज्यादा उम्र का हो गया हूं। और जब मैं मात्र १४ वर्ष का था तभी मैंने संन्यास की दीक्षा ले ली थी, इसके बाद मेरे जीवन का अधिकांश हिस्सा संन्यासी जीवन व्यतीत करते हुए हिमालय स्थित उच्चकोटि के योगियों, साधुओं, संन्यासियों के साथ ही व्यतीत हुआ है और उनके ज्ञान से मैंने अपने आपको लाभान्वित किया है।

इन वर्षों में मैंने कई प्रकार की साधनाएं सम्पन्न कीं और अपने शिष्यों से सम्पन्न करवाईं। आर्थिक-व्यापारिक उन्नति के लिए मैंने सियार सिंगी, हत्था जोड़ी, एकाक्षी नारियल, श्वेतार्क गणपति और ऐसी हजारों देव-दुर्लभ वस्तुओं के बारे में जानकारी प्राप्त की, इनसे संबंधित जितने भी प्रकाशित और हस्तलिखित ग्रन्थ थे, उनको खंगाल डाला, जहां-जहां से भी इनसे सम्बन्धित साधनाएं प्राप्त हुईं उन्हें अपने गृहस्थ शिष्यों, व्यापारियों और उद्योगपतियों से सम्पन्न कराईं और उसमें आशातीत सफलता प्राप्त हुई।

पर मैं अब उम्र के इस भाग में जाकर यह दावे के साथ कह सकता हूं, कि आर्थिक-व्यापारिक उन्नति तथा पूर्ण भौतिक सफलता प्राप्ति के लिए जितना अचूक और महत्वपूर्ण प्रयोग दक्षिणावर्ती शंख के माध्यम से संभव है, वैसा अन्य किसी भी प्रकार के प्रयोग या मंत्र-जप से संभव नहीं है। वस्तुतः दक्षिणावर्ती शंख कल्प-प्रयोग देवताओं की तरफ से मानव-

जाति को वरदान है, जिससे कि वे अपने जन्म-जन्म की दरिद्रता मिटा सकें और अपने जीवन काल में ही पूर्ण सफलता तथा सम्पन्नता प्राप्त कर सकें।

दक्षिणावर्ती शंख समुद्र में पैदा होता है, जहां से लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ, इस दृष्टि से एक ही पिता की सन्तान होने की वजह से दक्षिणावर्ती शंख भगवती लक्ष्मी का ही लघु भ्राता कहलाता है, इसलिए जो इस प्रकार के शंख पर प्रयोग करता है, उससे लक्ष्मी अवश्य ही प्रसन्न होती है तथा उसके जीवन में किसी प्रकार का कोई अभाव नहीं रहता। यह शंख लक्ष्मी का ही दूसरा स्वरूप है और प्रत्येक गृहस्थ को अपने घर में इस प्रकार का शंख रखना चाहिए।

दक्षिणावर्ती शंख

१. संसार में जितने भी शंख पाये जाते हैं, वे बायीं तरफ से खुलने वाले होते हैं, ऐसे शंखों की बहुतायत देखने को मिल जाती है, परन्तु ऐसे बहुत ही कम शंख होते हैं, जो दाहिनी ओर से खुले हुए होते हैं, ऐसे ही शंखों का विशेष महत्त्व होता है और इस प्रकार के शंख को ही दक्षिणावर्ती शंख कहा जाता है।

२. छोटा दक्षिणावर्ती शंख प्रयोग में नहीं लाना चाहिए, क्योंकि वह उतना अधिक फलदायक व अचूक नहीं होता। कम-से-कम जिस शंख में आधा किलो पानी समा सके, उतना बड़ा शंख ही प्रामाणिक और मान्य माना गया है, ऐसे शंख पर प्रयोग करने से ही पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

३. दक्षिणावर्ती शंख समुद्र से निकलते वक्त निर्मल होता है, यह शंख महत्त्वपूर्ण व प्रभावोत्पावक तभी कहलाता है, जब यह मन्त्र सिद्ध प्राण-प्रतिष्ठा युक्त हो। विशेष मन्त्रों से सम्पुटित चैतन्य दक्षिणावर्ती शंख का ही प्रयोग शास्त्रसम्मत है।

४. दक्षिणावर्ती शंख को हमेशा लाल वस्त्र में ही लपेटकर रखना चाहिए या इसे स्थापित करते समय भी नीचे लाल वस्त्र बिछा देना चाहिए।

आयुर्वेदिक

आयुर्वेद की दृष्टि से दक्षिणावर्ती शंख का विशेष महत्त्व है, इस शंख की संरचना ही कुछ इस प्रकार से है कि इसमें जल रखने पर उस जल में

शंख के सहयोग से कुछ विशेष प्रतिक्रिया हो जाने से वह जल विशेष प्रभावयुक्त हो जाता है।

१. यदि बड़े दक्षिणावर्ती शंख (ऐसा शंख जिसमें आधा किलो या इससे अधिक पानी समा सके) में रात्रि को सोते समय जल भर कर रख दें, तथा प्रातःकाल पानी से भरी बाल्टी में उस जल को मिलाकर स्नान किया जाए तो कुछ ही दिनों में उस व्यक्ति के सभी प्रकार के चर्म रोग स्वतः समाप्त हो जाते हैं और वह निर्मल-रोगरहित हो जाता है।

२. इसी प्रकार इस शंख में बारह घण्टे जल भरकर वह जल यदि दिखाई देने वाले सफेद दागों पर लगायें और ऐसा कुछ समय तक करें तो धीरे-धीरे ये सफेद दाग समाप्त हो जाते हैं और नैसर्गिक रूप से शरीर से मेल खाती हुई चमड़ी वहां प्राप्त हो जाती है।

३. रात्रि को इस शंख में जल भर कर रख दें, प्रातःकाल इस जल में कुछ गुलाब जल मिला दें और उसे अपने बालों में लगावें तो धीरे-धीरे सफेद बाल काले हो जाते हैं और स्थायी रूप से काले रहते हैं, इसी प्रकार यह जल भौंहों पर या दाढ़ी पर लगाने से वहां के बाल भी काले हो जाते हैं।

४. यदि पेट में तकलीफ या आंतों में सूजन हो, अथवा आंतों में किसी प्रकार का जख्म हो तो इस प्रकार बारह घण्टे तक शंख में रखे हुए जल का एक चम्मच नित्य पान करे। धीरे-धीरे आंतों का जख्म मिट जाता है और पेट से सम्बन्धित रोग समाप्त हो जाता है।

५. लगभग बारह घण्टे तक रखा हुआ जल दूसरे सामान्य जल से मिलाकर यदि प्रातःकाल आंखों पर छिड़का जाए तो आंखें निरोग, स्वस्थ और तन्दुरुस्त हो जाती हैं, यदि कुछ समय तक इसका नियमित अभ्यास करें तो आंखों पर लगा हुआ नजर का चश्मा उतर जाता है और आंखें सामान्य या स्वस्थ हो जाती हैं।

धार्मिक

धार्मिक दृष्टि से भी इस शंख को लक्ष्मी का प्रिय आभूषण बताया है और एक प्रकार से लक्ष्मी का ही प्रिय रूप माना जाता है, अतः जिसके घर में पूजा स्थान में यह शंख रखा रहता है, उसके घर में निरन्तर लक्ष्मी वास बना रहता है।

१. यदि प्रतःकाल स्नान करते समय इस शंख में थोड़ा-सा जल लेकर

वह जल बाल्टी में भरे हुए पानी में मिलाकर स्नान करे तो शरीर पुण्यवान एवं कांतिमय होता है।

२. यदि इस प्रकार के शंख को कारखाने में या फैक्टरी में स्थापित किया जाय, तो स्वतः ही उसकी दरिद्रता समाप्त हो जाती है और आर्थिक उन्नति होने लगती है। इस शंख को विशेष रूप से दारिद्र्य निवारक कहा जाता है और इसके रहने से उसके व्यापार में वृद्धि होती रहती है।

दैहिक

१. मेरा ऐसा अनुभव है कि यदि प्रातःकाल स्नान कर शरीर को पोंछकर इस शंख को अपने चेहरे पर हलके-हलके रगड़ें तो धीरे-धीरे चेहरे की झुर्रियां मिट जाती हैं और चेहरा कांतिमय बन जाता है।

२. यदि इस शंख को पूरे शरीर पर हल्के-हल्के फेरा जाए और कुछ दिनों तक ऐसा प्रयोग किया जाए, तो अवश्य ही पूरा शरीर मोती की तरह स्वस्थ, सुन्दर एवं लावण्यमय बन जाता है।

३. कभी-कभी आंखों के नीचे काले-काले-से दाग बन जाते हैं, जिससे चेहरे की सुन्दरता समाप्त हो जाती है, यदि इस शंख को नित्य प्रातःकाल उठकर आंखों के नीचे धीरे-धीरे फेरा जाय, और इस प्रकार कुछ दिनों तक ऐसा करे तो अवश्य ही ये दाग समाप्त हो जाते हैं, ऐसा मेरा अनुभव है।

अनुष्ठान

इस शंख पर कई प्रकार के अनुष्ठान सम्पन्न किये जाते हैं। मेरा मूलतः यह अनुभव है, कि लक्ष्मी-प्राप्ति से संबंधित अनुष्ठान इस पर पूर्ण सफल और प्रभावकारी होते हैं, मैं अपने दो अनुभूत प्रयोग नीचे स्पष्ट कर रहा हूं।

१. वशीकरण प्रयोग

यदि घर में कलह हो या पति-पत्नी में मतभेद हो या पत्नी चाहती हो कि उसका पति उसके नियंत्रण में रहे या कोई व्यक्ति किसी अन्य को अपने वश में करना चाहता हो या किसी शत्रु को अपने अधीन करना चाहता हो तो ऐसे सभी प्रयोगों में नीचे लिखा प्रयोग उपयोगी हो सकता है।

यह प्रयोग किसी भी रविवार से आरम्भ किया जा सकता है। रवि-

वार के प्रातःकाल उठकर स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर अपने सामने इस शंख को रख दें और उस पर कुंकुम आदि लगा दे, इसके बाद शुद्ध घृत का दीपक इसके सामने रख कर स्फटिक माला से निम्न मंत्र की एक माला फेरे। इस प्रकार ३० मिनट तक नित्य नियमपूर्वक करे तो निश्चय ही वह अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार के प्रयोग में नित्य मात्र दस से पन्द्रह मिनट लगते हैं, और ऐसा प्रयोग करने पर व्यक्ति मनोवांछित सफलता प्राप्त कर लेगा।

मन्त्र

ओ३म् क्रीं अमुकं मे वशमानाय स्वाहा।

यह मन्त्र अपने आपमें विशेष शक्ति समेटे हुए है। इसकी विधि में यह शंख अपने सामने रख दे और चावल के साबुत दाने अपने सामने किसी पात्र में रख दे। इस बात का ध्यान रखे कि चावल के दाने खण्डित न हों।

इसके वाद उपर्युक्त मन्त्र पढ़कर कुछ दाने इस शंख के मुंह में डाल दे। इस प्रकार नित्य १०८ बार मन्त्र पढ़कर चावल के दाने इस शंख के मुंह में डाल दे।

मन्त्र में जहां 'अमुक' लिखा हुआ है, वहां उस पुरुष या स्त्री का नाम उच्चारण करे, जिसे वश में करना है, जब माला पूरी हो जाय तब वह शंख वहां से उठाकर सुरक्षित स्थान पर रख दे। इस बात का ध्यान रखे कि शंख में डाले हुए चावल के दाने गिरें नहीं।

प्रयोग पूरा होने पर चावल के दाने किसी सफेद कपड़े में बांधकर अपने संदूक में या किसी सुरक्षित स्थान पर रख दे। ऐसा करने पर वह पुरुष या स्त्री प्रयोग करने वाले के वश में रहेगी और वह जैसा चाहता है, उसी प्रकार से कार्य सम्पन्न होगा।

जब उसे इस वशीकरण प्रयोग से मुक्ति देनी हो तब उस पोटली में से वे चावल के दाने निकालकर किसी नदी, तालाब या पवित्र स्थान पर डाल देने से वह उस वशीकरण प्रभाव से मुक्त हो जाता है।

२. दक्षिणावर्ती शंख कल्प प्रयोग

यह शंख लक्ष्मी प्राप्ति, आर्थिक उन्नति, व्यापार वृद्धि आदि में भी विशेष रूप से सहायक है। कर्जा उतारने में तो यह प्रयोग अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं प्रभावयुक्त है।

जो व्यक्ति इस प्रकार का प्रयोग चाहता है या अपने जीवन में पूर्ण आर्थिक उन्नति एवं व्यापार वृद्धि चाहता है, उसे यह प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

प्रयोग

वैशाख पूर्णिमा को प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर अपने सामने इस शंख को रख दें और उस पर केसर से स्वस्तिक चिह्न बना दे, इसके बाद निम्न मन्त्र जाप करें।

मन्त्र

ओ३म् श्रीं ह्रीं दारिद्र्य विनाशिनी धनधान्य समृद्धि देहि देहि कुबेर शंख विध्यै नमः।

इस मन्त्र को पढ़ता जाय और चावल के कुछ दाने इसके मुंह में डालता रहे। लगभग दो घण्टे तक इस मन्त्र का जाप करना है। इसमें माला की संख्या निर्धारित नहीं है और यह भी आवश्यक नहीं है, कितना मन्त्र जप हों, इतना ही पर्याप्त है कि लगभग दो घण्टे तक कोई व्यक्ति या महिला उपर्युक्त मन्त्र पढ़ते हुए सामने रखे मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त चैतन्य दक्षिणावर्ती शंख के मुंह में कुछ दाने डालता रहे। जब मुंह चावलों से भर जाय तब मन्त्र प्रयोग बन्द कर दे और चावलों के दानों के साथ इस शंख को लाल वस्त्र में बांधकर अपने घर के पूजा स्थान में रख दे या कारखाने, फैक्ट्री अथवा व्यापारिक स्थल पर स्थापित कर दे।

यह सौभाग्यशाली शंख वहां जब तक रहेगा, तब तक उसके जीवन में निरन्तर आर्थिक-व्यापारिक उन्नति होती रहेगी। यह भी स्पष्ट है कि ऐसा प्रयोग करने पर शीघ्र ही व्यक्ति कर्जे से मुक्ति पा लेता है और सभी दृष्टियों से उन्नति करता हुआ पूर्ण भौतिक सुख प्राप्त करता है।

दीपावली के दिन भी इस शंख का पूजन किया जा सकता है और जिस प्रकार लक्ष्मी पूजा होती है उसी प्रकार इसका पूजन किया जाना चाहिए।

वस्तुतः यह शंख अत्यधिक महत्वपूर्ण, दुर्लभ एवं प्रभावयुक्त है तथा ऐसे बिरले ही सौभाग्यशाली होंगे जिनके घर में इस प्रकार का दुर्लभ-महत्वपूर्ण शंख पाया जाता है। पर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रकार का शंख तभी सफलता देने वाला हो सकता है जब वह प्राण-संजीवनी प्रक्रिया से सिक्त मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो।

जिन्दगी की समस्याएं सुलझाने में सहायक

वृद्ध साधक चैतन्य जी द्वारा जानकारियों, अनुभवों एवं प्रयोगों के आधार पर यह लेख प्रस्तुत है—मैं आप लोगों के बीच का ही एक सामान्य व्यक्ति हूं और गृहस्थ के सारे कार्यों और समस्याओं से बराबर प्रभावित रहा हूं, परन्तु आज मेरी आयु साठ वर्ष से ज्यादा हो रही है। इस बीच मैं अपने जीवन में शून्य से लगाकर जिस स्तर तक पहुंचा हूं और जो मैंने आर्थिक-व्यापारिक उन्नति की है उसका श्रेय तन्त्र-मन्त्र और टोने-टोटकों के प्रयोगों पर ही जाता है।

आर्थिक-व्यापारिक उन्नति के लिए सबसे श्रेष्ठ उपाय दक्षिणावर्ती शंख प्रयोग है। वास्तव में ही आर्थिक उन्नति के लिए शास्त्रों में वर्णित सैंकड़ों-हजारों प्रयोग हैं, परन्तु दक्षिणावर्ती शंख का प्रयोग यदि सही रूप में किया जाय, तो कई प्रकार की समस्याएं दूर हो सकती हैं और अपने जीवन में मनोवांछित कार्य कर सफलता प्राप्त की जा सकती है।

दक्षिणावर्ती शंख के तीन भेद हैं

१. **उत्तम**—जिस शंख में आधा किलो से ज्यादा पानी समा सके उसे उत्तम कोटि का दक्षिणावर्ती शंख कहा जाता है।

२. **मध्यम**—जिसमें लगभग आधा किलो पानी भली प्रकार से आ सके उसे मध्यम स्तर का दक्षिणावर्ती शंख कहा जाता है।

३. **सामान्य**—जिस शंख में आधा किलो से कम पानी समाता है, वह सामान्य दक्षिणावर्ती शंख कहा जाता है।

किसी भी प्रकार के प्रयोग में, विशेष कर आर्थिक-व्यापारिक उन्नति के प्रयोग में मध्यम या उत्तम स्तर का दक्षिणावर्ती शंख ही प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

यह शंख साफ और बिना छिद्र का होना चाहिए। जितना ही ज्यादा बड़ा शंख होगा उतना ही महत्वपूर्ण और विशेष कहा जाता है।

यों तो मैंने पूज्य गुरुदेव के यहां दक्षिणावर्ती शंख का एक दुर्लभ जोड़ा देखा है, जो लक्ष्मी और नारायण का स्वरूप हैं। इनमें से प्रत्येक शंख में पांच किलो से भी ज्यादा पानी आ सकता है। मैंने अपने जीवन में हजारों शंख देखे हैं, पर ऐसा दुर्लभ शंख पहली बार ही देखने को मिला है।

१. व्यापार वृद्धि में

व्यापार वृद्धि, आर्थिक उन्नति, प्रमोशन, मनचाहे स्थान पर स्थानान्तरण आदि के लिए इस प्रयोग को सम्पन्न किया जा सकता है।

मन्त्रसिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त मध्यम स्तर का दक्षिणावर्ती शंख वैशाख पूर्णिमा के दिन प्रात:काल अपने सामने लाल वस्त्र बिछाकर उस पर रख दे और उसकी पीठ पर निम्न यन्त्र को केसर से अंकित कर दे। इसके बाद उस शंख को कहे कि मेरी यह समस्या जल्दी-से-जल्दी दूर हो और फिर यन्त्र अंकित वह दक्षिणावर्ती शंख लाल वस्त्र में लपेटकर घर में किसी स्थान पर रख दे, तब तक शंख को लाल वस्त्र से खोले नहीं जब तक कि कार्य भली प्रकार से सम्पन्न न हो जाय।

यन्त्र

२	३	८
७	१	९
५	४	६

२. बिक्री बढ़ाने का प्रयोग

दुकान में बिक्री नहीं बढ़ रही हो या ग्राहक नहीं आता हो अथवा माल नहीं बिक रहा हो तो निम्न प्रयोग अवश्य ही इस दिन सम्पन्न करना चाहिए।

वैशाख पूर्णिमा के दिन अपने सामने लाल वस्त्र बिछाकर दक्षिणावर्ती शंख को पहले दूध से और फिर जल से धोकर रख दे और उस पर बराबर-बराबर मात्रा में कपूर, केसर तथा कुंकुम मिलाकर उसकी स्याही से दक्षिणावर्ती शंख की पीठ पर चांदी की सलाका से निम्न यन्त्र अंकित करे :

यन्त्र

२८	१५	१८	२४
१७	११	१२	२४
१४	५१	१६	२२

फिर इस यन्त्र अंकित दक्षिणावर्ती शंख को लाल वस्त्र में बांधकर अपनी दुकान में ऐसे स्थान पर रख दे जहां पर ग्राहक की नजर उस पर पड़े, ऐसा प्रयोग करने पर असाधारण लाभ होने लगता है। मैंने स्वयं इस प्रयोग को करवाया है और कई भाइयों को इस प्रयोग से लाभ हुआ है।

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रयोग में मध्यम या उत्तम स्तर का शंख ही काम में लाया जाना चाहिए।

३. आकस्मिक धन प्राप्ति प्रयोग

वैशाख पूर्णिमा के दिन मध्यम या उत्तम स्तर का शंख अपने सामने सफेद वस्त्र बिछाकर रख दे और उस पर निम्न आकस्मिक धन प्राप्ति यन्त्र केसर से अंकित कर दे :

यन्त्र

५	२	७	१
३	८	६	९

इसके बाद उस शंख पर पूजा आदि कर पुष्प चढ़ाकर प्रार्थना करे कि मुझे जल्दी-से-जल्दी अनायास एवं आकस्मिक धन प्राप्ति हो, फिर उस यन्त्र को कपड़े में बांधकर रात्रि को सोते समय सिरहाने के पास रख दे तो रात्रि में उसे स्वप्न में स्पष्ट हो जाता है कि उसे अनायास धन प्राप्ति के लिए क्या करना चाहिए।

लौटरी का नम्बर, घुड़दौड़ या ऐसा कोई भी स्वप्न उसे जल्दी ही दिखाई देता है, जिसका उपयोग कर वह सफलता प्राप्त कर सकता है।

४. टोना-टोटका दूर करने का प्रयोग

यदि किसी शत्रु ने दुकान या व्यापार पर कोई प्रयोग कर दिया है अथवा टोने-टोटके से व्यापार बांध दिया है अथवा दुकान बांध दी हो या शरीर पर अथवा परिवार पर किसी प्रकार का तांत्रिक प्रयोग कर दिया हो तो निम्नलिखित प्रयोग से वह तांत्रिक प्रयोग दूर हो जाता है और पुनः जीवन में सभी दृष्टियों से अनुकूलता प्रारम्भ हो जाती है।

वैशाख पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल ११ बजे से पहले-पहले अपने सामने सफेद वस्त्र बिछाकर उस पर दक्षिणावर्ती शंख को रख दे और उसकी पीठ पर कुंकुम से निम्नलिखित तांत्रिक प्रयोग करने का यन्त्र अंकित करे :

यन्त्र

०	०	०
०	०	०
०	०	०

फिर दिन भर उस यन्त्र को उसी स्थान पर रहने दे, दूसरे दिन उसी समय उस शंख को साफ पानी में धोकर वह जल किसी गिलास या लोटे में ले ले और वह जल यदि घर में, दुकान में, कार्यालय में अथवा अपने शरीर पर छिड़के तो वहां पर किया हुआ टोना-टोटका दूर हो जाता है, और जो भी तांत्रिक प्रयोग शरीर पर या व्यापार पर होता है वह समाप्त हो जाता है।

५. गृहस्थ सुख-प्रयोग

यदि घर में पति-पत्नी में मतभेद हो या गृहस्थ में कोई समस्या हो, घर में बड़ी लड़की का विवाह नहीं हो रहा हो, तो इस महत्वपूर्ण प्रयोग को वैशाख पूर्णिमा के दिन सम्पन्न किया जा सकता है।

इस दिन प्रातःकाल सूर्योदय के समय सामने पीला वस्त्र बिछाकर उस पर मध्यम या उत्तम स्तर का दक्षिणावर्ती शंख रख दे और उसकी पीठ पर केसर से निम्नलिखित यन्त्र अंकित कर दे :

यन्त्र

१११	३३३	५५५
२२२	९९९	७७७
६६६	४४४	८८८

इसके बाद उसके सामने हाथ जोड़कर अपनी समस्या रखे जिस समस्या की वजह से उसका गृहस्थ जीवन डांवाडोल हो या जिस परेशानी से मुक्ति नहीं मिल रही हो।

इसके बाद उस यन्त्र अंकित दक्षिणावर्ती शंख को उसी बिछे हुए कपड़े में बांधकर पूजा स्थान में रख दे और उसे वहां तब तक रहने दे जब तक कि उस समस्या का निदान न हो जाय।

१२

सहस्रार जागरण : एक दुर्लभ और वरदायक सिद्धि

परमश्रेष्ठ योगीराज ज्ञानेश्वर के द्वारा भेजा गया यह लेख हमारे लिए वरदानस्वरूप है, आओ हम सब मिलकर प्रतिज्ञा करें कि हम अपना जीवन कीट-पतंगों की तरह व्यतीत नहीं करेंगे अपितु मानव जीवन को सार्थकता प्रदान करते हुए कुण्डलिनी जागरण कर सहस्रार जागृत करने में समर्थ हो सकेंगे।

जीवन को समझने के लिए उसके बाह्यरूप का चिन्तन व्यर्थ है। इसकी अपेक्षा शरीर के अन्दर स्थित सूक्ष्म शरीर और चक्रों को समझना नितान्त अनिवार्य है। शरीर में मुख्य रूप से सात चक्र हैं, जो मूलाधार से आज्ञा चक्र तक हैं, ये सभी चक्र अपने आपमें सुषुप्तावस्था में रहते

हैं, परन्तु विशेष क्रिया के द्वारा तथा गुरुदेव के सहयोग से इन चक्रों को जगाने की क्रिया प्रारम्भ की जाती है। जब ये चक्र जगते हैं, तो विचित्र और विविध अनुभव प्राप्त होते हैं। प्रत्येक चक्र जगने पर नवीन विचार और नवीन अनुभूतियां होती रहती हैं। प्रत्येक चक्र के साथ-साथ एक ऐसा अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त होता है, जो शब्द में वर्णित नहीं किया जा सकता, यह तो तभी अनुभव होता है, जब साधक स्वयं इसमें प्रवेश करे।

आज्ञा-चक्र तक पहुंचते-पहुंचते साधक स्वयमेव सिद्ध बन जाता है और उसे कई सिद्धियां स्वतः प्राप्त हो जाती हैं। वह देखता है कि धीरे-धीरे प्रकृति उसके निमन्त्रण में हो रही है। वह अनुभव करता है कि वह जो भी कुछ चाहता है, तुरन्त प्राप्त हो जाता है। वह वायु में से पदार्थ की सृष्टि करने में समर्थ हो पाता है, और उसके द्वारा लाखों लोगों का कल्याण होने लगता है।

परन्तु यह तो उस लम्बे रास्ते का एक पड़ाव है, जिसे आज्ञा-चक्र कहते हैं, इसके आगे पहुंचना जीवन की सर्वोच्च सिद्धि है, जो कि योगियों के लिए भी दुर्लभ है, इसको सहस्रार जागरण कहते हैं।

हमारे सिर के मध्यम भाग में एक ऐसा उल्टा छाते की तरह का गुम्बज है जो अधोमुखी है, और जिसमें से निरन्तर रस प्रवाहित होता रहता है। इसके हजार से भी ज्यादा छेद होते हैं, जिन छेदों में से अमृत-तत्व टपकता रहता है, इसीलिए इसको सहस्रार कहा गया है। जब साधक आज्ञा-चक्र जागरण करने के बाद कुण्डलिनी को आगे बढ़ाता है, तो वह पूर्ण सिद्धिमान बन जाता है। वह वायु और शून्य में से पदार्थ बनाने में समर्थ होता है, एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ में रूपान्तरित करने की सामर्थ्य पैदा कर लेता है। उससे भी ज्यादा वह ध्यान लगाने की प्रक्रिया में सिद्ध हो जाता है।

जब कुण्डलिनी इड़ा और पिंगला नाड़ियों के माध्यम से सुषुम्ना को साथ लेकर सहस्रार तक पहुंचती है, तो ये तीनों ही नाड़ियां उस सहस्रार गुम्बद से टकराती हैं, और टकराने से उनमें से रस झरने लगता है, जो कि अमृत तत्व होता है। यह अमृत तत्व इन नाड़ियों के माध्यम से पूरे शरीर में फैल जाता है, और सारा शरीर स्वस्थ, निरोग, तेजस्वी, कांतिमान तथा प्रकाशयुक्त हो जाता है। उसके चेहरे पर एक अपूर्व आभा और ज्योति दिखाई देने लगती है। एक ऐसा आभा-मण्डल बन जाता है, जैसा कि देवताओं के सिर के चारों ओर दिखाई देता है। ऐसा होने पर

साधक को स्वतः ही वाक्-सिद्धि प्राप्त हो जाती है। वह किसी को श्राप भी देता है, तो वह तुरन्त प्रभावयुक्त हो जाता है, और वरदान भी देता देता है, तो पूर्ण हो जाता है । ऐसे ही साधक को सिद्ध कहा जाता है ।

साथ-ही-साथ सहस्रार जागरण से वह विचार-शून्य होकर अखण्ड आनन्द में लीन हो जाता है। मानसिक संताप और कष्ट हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं, और वह अखण्ड समाधि में लीन होने की प्रक्रिया सीख जाता है। इसकी वजह से साधक मनचाही समाधि प्राप्त कर अखण्ड आनन्द में निमग्न हो जाता है।

हमारे मस्तिष्क में लाखों छोटे-छोटे सेल हैं, पर इनमें से केवल एक प्रतिशत सेल ही जागृत हैं, वाकी सारे सेल या ग्रन्थियां सुषुप्तावस्था में हैं। इन सेलों में आश्चर्यजनक गुण और प्रभाव है, इसके जाग्रत होने से व्यक्ति त्रिकालदर्शी हो जाता है। भूत, भविष्य और वर्तमान उसके सामने साकार होते हैं। ऐसा व्यक्ति अमृत तत्व सेल को जगाकर मृत्यु पर नियंत्रण प्राप्त करता हुआ पूर्ण निरोग और स्वस्थ बना रहता है। प्रकृति ग्रन्थी को जगाकर समस्त प्रकृति पर अधिकार कर लेता है। प्राणश्चेतना ग्रन्थी के जगने से वह स्वयं के और किसी भी व्यक्ति के पिछले जीवन और आगे के जीवन को देख पाने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है और जीवन में सभी दृष्टियों से पूर्णता प्राप्त करता हुआ अजर-अमर हो जाता है।

१३

त्रिकालदर्शी बनिये : अनाहत-चक्र जगाकर

जीवन को समझने के लिए और पूरे संसार को अपने आपमें आत्मसात् करने के लिए शरीर के अन्दर स्थित चक्रों को समझने और उसे उन्नत करने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में इसी को कुण्डलिनी जागरण क्रिया कहा जाता है।

पूरा ब्रह्माण्ड मनुष्य के शरीर में ही विद्यमान है, आवश्यकता है इसे जानने की और इसे पहिचानकर ब्रह्माण्ड को अपने आपमें आत्मसात

करने की। ऐसा होने पर ब्रह्माण्ड में और विश्व में कहीं पर भी कोई घटना घटित हो रही हो तो उससे वह अछूता नहीं रहता, अपितु सशरीर उपस्थित न होते हुए भी वह उसमें भागीदार होता है।

विद्वान विचारक योगीराज स्वामी अभयानन्द जी ने इस लेख के माध्यम से जो नतून दृष्टि हमें प्रदान की है, वह वास्तव में ही पाठकों के लिए उपयोगी है।

डाक्टरों, चिकित्सकों और शरीर वैज्ञानिकों ने शरीर से वाह्य अंगों और उससे सम्बन्धित रोगों के बारे में तो थोड़ी-बहुत जानकारी प्राप्त की है, परन्तु इससे भी एक बड़ी दुनिया हमारे शरीर में विद्यमान है, जिसे योगियों ने ब्रह्माण्ड कहा है। उनके अनुसार समस्त ब्रह्माण्ड और उसमें होने वाली हलचल हम अपने शरीर में देख सकते हैं।

योगियों ने बताया है, कि शरीर में मूलतः सात चक्र हैं जो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, और इन चक्रों का भेदन करना ही ब्रह्माण्ड को समझना है। उनके अनुसार ये सातों चक्र और उनकी स्थिति इस प्रकार है।

क्र० सं०	नामचक्र	स्थान	दल	तत्वबीज
१	मूलाधार	गुदा व योनि	४	पृथ्वी
२	स्वाधिष्ठान	पेडू	६	जल
३	मणिपूर	नाभि	१०	अग्नि
४	अनाहत	हृदय	१२	वायु
५	विशुद्ध	कण्ठ	१६	आकाश
६	आज्ञा चक्र	भ्रू मध्य	२	महत्तत्व
७	सहस्रार	मस्तिष्क	सहस्र	तत्वातीत

मूलाधार प्रारम्भ चक्र है और यहीं से कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। इसके जागने से स्वतः साधक को विद्या, आरोग्य प्राप्ति और ज्ञान प्राप्ति होने लग जाती है। यह एक अनिवार्य और महत्वपूर्ण चक्र है, जिसका जागना प्रत्येक साधक के लिए अनिवार्य है।

जब साधक मूलाधार जागरण कर लेता है, तब वह अपने गुरु की सलाह के अनुसार कुण्डलिनी को आगे अग्रसर करता है और पेडू के मध्य में स्थित स्वाधिष्ठान चक्र पहुंचता है। यह सिन्दूरी वर्ण का ६ दलयुक्त कमल है, जो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब इस पर आघात होता है, और यह चक्र जागने की स्थिति में आता है, तो साधक को स्वतः ही काव्य

स्फुरण होने लगता है। नवीन कविताएं उसके मुंह से उच्चरित होने लगती हैं और योग के प्रति उसकी रुचि बढ़ जाती है। काफी समय तक पद्मासन पर बैठकर ध्यानस्थ होने लगता है और इस प्रकार वह एक महत्वपूर्ण स्थिति को प्राप्त होता है जिसे योगियों में श्रेष्ठ स्थिति कहा जाता है।

इसके बाद साधक को अपना अभ्यास यहीं नहीं रोक देना चाहिए। अपनी कुण्डलिनी को निरन्तर आगे की ओर बढ़ाते रहना चाहिए। जब स्वाधिष्ठान चक्र से कुण्डलिनी आगे की ओर अग्रसर होती है तो नाभि के पास मणिपूर चक्र मिलता है, जो दस दल युक्त नील वर्ण का होता है। यह अग्नि तत्व प्रधान चक्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके जागने से व्यक्ति में विद्या-तत्व की प्रधानता बढ़ जाती है और उसके मुंह से स्वतः वेद-मंत्र उच्चारण होने लगते हैं और जरूरत से ज्यादा सामर्थ्य, क्षमता और हौसला आ जाता है। ऐसा व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों में भी अपने आपको अविचलित रखता हुआ निरन्तर आगे चलकर समाज को नेतृत्व प्रदान कर सकता है और एक नई दिशा दृष्टि देकर सैंकड़ों-हजारों लोगों का पथ-प्रदर्शन करने की क्षमता प्राप्त करता है।

अनाहत चक्र

इसके बाद की प्रक्रिया थोड़ी कठिन अवश्य है, परन्तु साधक यदि उसी प्रकार से अभ्यासरत रहे तो यह कुण्डलिनी आगे चलकर हृदय-पक्ष के पास अनाहत-चक्र से टकराती है, जो कि अरुणिमा लिए द्वादश दलयुक्त अत्यन्त मनोहर चक्र है।

यह चक्र योगियों के लिए भी दुर्गम और प्रयत्नसाध्य है, क्योंकि इस चक्र की स्थिति हृदय के निकट है और दूसरे शब्दों में मन के उस भाग को स्पर्श करता है, जो अत्यन्त ही संवेदनशील, चंचल और समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है।

यदि हम अपने मन पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकें और मन को विश्व के किसी एक निश्चित बिन्दु तक पहुंचा सकें तो मन उस बिम्ब या दृश्य पर जाकर टकराता है और हम एक ही सेकेंड में उस दृश्य को ठीक उसी प्रकार से देख लेते हैं, जिस प्रकार से टेलीविजन पर हम कोई दृश्य देख सकने में समर्थ होते हैं।

पर इसके लिए मन पर नियंत्रण प्राप्त करना जरूरी है, अन्यथा मन अपनी इच्छानुसार इधर-उधर भागेगा और हम उसे जिस बिन्दु, दृश्य या घटना पर एकत्र करना चाहेंगे, वह संभव नहीं हो सकेगा।

मन पर नियन्त्रण प्राप्त करने की विधि

इसके लिए यह आवश्यक है कि मन पर भली प्रकार से नियन्त्रण प्राप्त किया जाय। इसके लिए योगियों ने त्राटक विधि बताई है। किसी एक बिन्दु पर बिना पलक झपकाये निरन्तर देखते रहने की क्रिया को त्राटक कहते हैं। जब यह अभ्यास लगभग एक घण्टे का हो जाता है तो इस अभ्यास के द्वारा साधक अपने मस्तिष्क और मन पर भली प्रकार से नियंत्रण प्राप्त करने में सक्षम हो पाता है, ऐसी स्थिति में उसके पास वह सामर्थ्य आ जाती है कि वह मन को जिस बिन्दु पर पहुंचाना चाहे पहुंचा सकता है।

त्रिकालदर्शी बनिये

हमारे पूर्वज त्रिकालदर्शी थे और एक स्थान पर बैठकर संसार की हलचल को उसी क्षण देख पाने में समर्थ थे। यही नहीं, अपितु पिछले सौ वर्षों में घटित घटनाओं तथा आने वाले सौ वर्षों में घटित घटनाओं को भी वे देख सकने में समर्थ थे। इसका कारण यह था कि प्रारब्ध निश्चित है और समय आने पर प्रारब्ध में अंकित घटनाएं घटती ही हैं। ब्रह्माण्ड में आने वाला समय और वीता हुआ समय ज्यों-का-त्यों अंकित है। आवश्यकता इस वात की है कि उन क्षणों तक पहुंचने की क्रिया प्राप्त हो सके और इसके लिए हमारे पास सशक्त माध्यम मन ही है, जिसके द्वारा हम भूत, भविष्य और वर्तमान को साफ-साफ देख सकने में समर्थ होते हैं।

साधक इसका अभ्यास करने के लिए सर्वप्रथम त्राटक का अभ्यास करे, तब उसे अपने मन को आज्ञा देनी चाहिए कि वह अमुक व्यक्ति के पिछले जीवन में घटित घटनाओं को देखे। ऐसा होने पर मन बीते हुए समय चक्र में प्रवेश करता है और उन घटनाओं के बिम्ब प्रेषित करता है, जो घटनाएं घटित हो चुकी होती हैं और वे बिम्ब जब अनाहत-चक्र के द्वारा हृदय से आकर टकराते हैं, तो हमें वे घटनाएं साफ-साफ दिखाई दे जाती हैं, जो कि उसके जीवन में घटित होती हैं। इसी को अतीत देखने की क्रिया कहते हैं।

ठीक उसी प्रकार मन को जब आदेश दिया जाता है कि वह उस व्यक्ति के जीवन में आने वाली घटनाओं और उस काल खण्ड में प्रवेश कर देखे तब ऐसी स्थिति में मन समय के उस चक्र में प्रवेश करता है, जिसे भविष्य कहते हैं और भविष्य के उन वर्षों में वह उन सारे बिम्बों,

दृश्यों और घटनाओं को देखकर तरंगों के माध्यम से अनाहत चक्र से जाकर टकराता है और ऐसा होने पर वे सारी घटनाएं व्यक्ति के सामने साकार हो जाती हैं, इसी को भविष्य दर्शन कहते हैं।

इस प्रकार साधक अनाहत चक्र को जागृत कर मन पर नियन्त्रण प्राप्त करने में सक्षम हो पाता है और उसके माध्यम से वह समय की किसी भी अवधि को भली प्रकार से देख सकने में समर्थ हो पाता है। वह जीवन के पिछले सारे दृश्यों को और आने वाले भविष्य को हूबहू उसी प्रकार देख लेता है। जिस प्रकार व्यक्ति अपने सामने घटित घटनाओं को देखता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमारे शरीर में हृदय के पास स्थित अनाहत चक्र अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण चक्र है, जो संवेदनशील होने के साथ-साथ महत्वपूर्ण, प्रभावयुक्त और किसी भी कालखण्ड को देख सकने में समर्थ है। इसके जगने से सौ-दो सौ साल पहले की और आगे की घटनाओं को देखा जा सकता है। इसी को त्रिकालदर्शिता की संज्ञा दी गई है। इसके लिए साधक निरन्तर अभ्यासरत होकर मूलाधार से कुण्डलिनी को जगाता हुआ सहस्रार तक पहुंचने की क्रिया सम्पन्न करे और मार्ग में हृदय के पास स्थित अनाहत चक्र को जागृत कर मन पर नियंत्रण प्राप्त करता हुआ समय और अवधि के उन क्षणों को देख सकने की सामर्थ्य पैदा करे, जिसको अज्ञात कहा जाता है ऐसी स्थिति प्राप्त होने पर ही व्यक्ति 'त्रिकालदर्शी' बन सकता है।

१४

योगिनी एकादशी के अवसर पर स्वर्णाकर्षण गुटिका प्रयोग कीजिए

योगिनी एकादशी कार्य सिद्धि साधना में सफलता की दृष्टि से अद्वितीय तिथि कही जाती है, शास्त्रों में कहा गया है कि योगिनी एकादशी के दिन यदि कोई विशेष प्रयोग सम्पन्न किया जाय, तो अवश्य ही

सफलता प्राप्त होती है, खास तौर से कुछ विशेष मांत्रिक ग्रन्थों में तो बताया गया है कि योगिनी एकादशी के अवसर पर स्वर्णाकर्षण गुटिका का प्रयोग सम्पन्न किया जाय तो साधक को आश्चर्यजनक सफलता व सिद्धि प्राप्त होती है।

योगीराज स्वामी हेमानन्द जी ने अपने अनुभवों के माध्यम से लेख तैयार कर हमें जो गौरव प्रदान किया है, उसके लिए हम उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं।

योगिनी एकादशी शास्त्रों में महत्वपूर्ण एकादशी मानी गई है, एक तरफ धार्मिक दृष्टि से इसका विशेष महत्व है, जब लोग पुण्यदायिनी नदियों में इस पर्व पर स्नान कर अपने पापों का क्षय करते हैं, वहीं दूसरी ओर साधक और मन्त्रद्रष्टा इस तिथि की प्रतीक्षा पूरे वर्ष-भर करते रहते हैं और महत्वपूर्ण प्रयोग इस तिथि को सम्पन्न कर निश्चित सफलता और अनुकूलता प्राप्त करते हैं।

यों तो इस महत्वपूर्ण पर्व पर कई प्रकार की साधना एवं सिद्धियां सम्पन्न की जाती हैं, तांत्रिक ग्रन्थों में बताया है कि इस तिथि पर सम्पन्न किया हुआ कार्य पूर्ण रूप से सिद्ध होता ही है, परन्तु मैंने पूरे जीवन में इस पर्व पर कई प्रकार के तांत्रिक-मांत्रिक प्रयोग सम्पन्न किये हैं और यह अनुभव किया है कि यदि इस तिथि के अवसर पर स्वर्णाकर्षण गुटिका से सम्बन्धित प्रयोग सम्पन्न किये जाएं तो अचूक फल प्राप्ति और अद्भुत सफलता प्राप्त होती है।

स्वर्णाकर्षण गुटिका क्या है

यह काले रंग की गोल गोली की तरह गुटिका होती है, जो प्रकृति की तरह से मानव के लिए वरदानस्वरूप है, इसको यदि सूर्य की तरह रख-कर देखें तो इसमें से प्रकाश निकलता हुआ-सा दिखाई देता है या सूर्य के सामने देखने पर ऊपर से काला रंग होते हुए भी झांकने पर दूसरे प्रकार की रोशनी प्रतीत होती है, साधनाओं में इस गुटिका का विशेष महत्व है।

यह गुटिका सामान्य रूप से साधु-संन्यासियों के पास प्राप्त हो जाती है। यह गुटिका मन्त्र सिद्ध चैतन्य प्राण प्रतिष्ठा युक्त होनी चाहिए, तभी यह गुटिका विशेष अनुकूल फल प्रदान कर सकती है, सामान्य स्तर की गुटिका घर में सुख और सौभाग्य तो देती है, परन्तु यदि इस पर विशेष प्रयोग सम्पन्न करना हो तो मन्त्र सिद्ध चैतन्य प्राण प्रतिष्ठा युक्त स्वर्णाकर्षण गुटिका ही होनी चाहिए।

मेरे जीवन के हजारों अनुभवों में से मैं इस विशेष पर्व के अवसर पर पांच महत्वपूर्ण प्रयोग स्पष्ट कर रहा हूं, जो कि मेरे आजमाए हुए हैं और जिनके माध्यम से मुझे हर बार सफलता प्राप्त हुई है।

१. गृहस्थ प्रयोग

(अ) कन्या के शीघ्र विवाह के लिए।
(आ) पुत्र के लिए योग्य बहू प्राप्ति के लिए।
(इ) पति-पत्नी में मधुरता के लिए।
(ई) इच्छित सम्बन्ध बढ़ाने के लिए।
(उ) वशीकरण प्रयोग के लिए।

सामग्री—स्वर्णाकर्षण गुटिका (मंत्रसिद्ध प्राण-प्रतिष्ठायुक्त) मूंगे की माला, अगरबत्ती, दीपक, जलपात्र।

अवधि—दो घण्टे।

तिथि—योगिनी एकादशी।

प्रयोग विधि—जो साधक या साधिका इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहे, वह इस दिन किसी समय स्वर्णाकर्षण गुटिका को शुद्ध जल में धोकर किसी तांबे के पात्र में चावलों की ढेरी बनाकर उस पर स्वर्णाकर्षण गुटिका रख दे और उस पर केसर का तिलक व पुष्प चढ़ा दे, सामने दूध का बना प्रसाद रखें और फिर नीचे लिखे मंत्र का जप मूंगे की माला से करे।

मंत्र जप करने से पूर्व हाथ में जल लेकर संकल्प करे कि मैं अमुक कार्य की सिद्धि के लिए यह प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं।

मन्त्र

ओ३म् वैचाक्षी कामरूपाय कामदेव्यै इच्छित कार्य-सिद्धि करि करि यं रं एं ह्लीं फट् स्वाहा।

इसमें मंत्र जप संख्या निर्धारित नहीं है, केकल दो घण्टे मंत्र जप करना चाहिए, इसके बाद स्वर्णाकर्षण गुटिका को उठाकर किसी अच्छे स्थान पर रख देनी चाहिए, ऐसा करने पर शीघ्र ही साधक को सफलता मिलती है।

२. लक्ष्मी-प्राप्ति के प्रयोग

इस प्रयोग के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यों की सिद्धि प्राप्त की जा

सकती है :

(अ) नया व्यापार प्रारम्भ करने व अनुकूलता प्राप्ति के लिए।

(आ) व्यापार में आश्चर्यजनक प्रगति के लिए।

(इ) आर्थिक उन्नति के लिए।

(ई) आकस्मिक धन-प्राप्ति के लिए।

सामग्री—स्वर्णाकर्षण गुटिका, कमल गट्टे की माला, अगरबत्ती, दीपक, केसर, जलपात्र।

अवधि—दो घण्टे।

तिथि—योगिनी एकादशी (इसके लिए दिन के ११ बजे से १ बजे तक का समय सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है।)

प्रयोग विधि—इस प्रयोग को सम्पन्न करने के लिए साधक पीली धोती पहनकर उत्तर दिशा की तरफ मुंह करके बैठ जाय। सामने लाल वस्त्र बिछाकर उस पर आठ चावलों की ढेरियां बनावे और एक बड़ी ढेरी आगे बना दे, फिर इस पर स्वर्णाकर्षण गुटिका रख दे। इसके वाद उस पर केसर का तिलक करे और कमल गट्टे की माला से मात्र दो घंटे निम्न मंत्र का जप करे :

मन्त्र

ओ३म् ह्रीं धनधान्यादिपतये स्वर्णाकर्षण कुबेराय समृद्धि देहि दापय स्वाहा।

मन्त्र जप करने से पूर्व हाथ में जल लेकर संकल्प करे कि अमुक व्यापार या अमुक कार्य के लिए और उसमें पूर्ण सफलता के लिए यह प्रयोग इस विशेष तिथि व मुहूर्त के अवसर पर सम्पन्न कर रहा हूं, जिसमें मुझे पूर्ण सफलता मिले।

दो घण्टे मंत्र जप करने के बाद उन चावलों की ढेरियों के साथ उस स्वर्णाकर्षण गुटिका को उसी कपड़े में बांधकर घर के किसी महत्वपूर्ण स्थान पर रख दे। ऐसा करने पर उसे शीघ्र ही मनोवांछित सफलता प्राप्त हो जाती है।

३. शत्रु-स्तम्भन प्रयोग

इस प्रयोग के अन्तर्गत पांच प्रकार के कार्यों सफलता प्राप्त की जा सकती है :

(अ) शत्रु की गति-मति बांधने के लिए।

(आ) शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए।
(इ) मुकदमे में सफलता प्राप्ति के लिए।
(ई) शत्रुओं को अपने अनुकूल बनाने के लिए।
(उ) किसी भी प्रकार के राज्य कार्य में सफलता प्राप्ति के लिए।

सामग्री—स्वर्णाकर्षण गुटिका, मूंगे की या हकीक की माला, अगरबत्ती, दीपक, जलपात्र।

अवधि—दो घण्टे, दिन के किसी भी समय।

विधि—योगिनी एकादशी।

प्रयोग विधि—जो साधक इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहते हैं, वह मंत्रसिद्ध प्राण-प्रतिष्ठायुक्त चैतन्य स्वर्णाकर्षण गुटिका को जल से धोकर किसी पात्र में गन्धक की ढेरी बनाकर उस पर रख दें और सामने गुड़ का प्रसाद चढ़ावे, फिर हाथ में जल लेकर संकल्प ले कि मैं अमुक शत्रु की बुद्धि नष्ट करने के लिए या अमुक मुकदमे में सफलता के लिए या अमुक कार्य की सिद्धि के लिए यह प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं जिसमें मुझे शीघ्र और पूर्ण सफलता मिले।

मन्त्र

ओ३म् क्रीं कालिकायै कार्यं सिद्धि देवी मम कार्यं सिद्धि करि करि क्रीं क्रीं क्रीं हूं फट्।

यह प्रयोग मात्र दो घण्टे का है, और प्रयोग सम्पन्न करने के बाद गुटिका को घर के किसी सुरक्षित स्थान पर रख दे, और गंधक को जला दे। ऐसा करने पर शत्रु की बुद्धि, गति, मति बंध जाती है और अपने इच्छित कार्य में सफलता प्राप्त होती है।

इस प्रयोग को किसी को हानि पहुंचाने या द्वेष-वश सम्पन्न नहीं करना चाहिए, केवल आत्म-रक्षार्थ ही प्रयोग करना चाहिए।

४. तंत्र नष्ट प्रयोग

इस प्रयोग के अन्तर्गत तीन प्रकार के कार्यों की सिद्धि प्राप्त की जा सकती है :

(अ) स्वयं पर या परिवार के किसी सदस्य पर कोई तांत्रिक प्रयोग या टोना-टोटका हो तो उसे दूर करने के लिए।

(आ) व्यापार पर या जीवन के अन्य किसी भी कार्य पर किसी ने जादू-टोना कर दिया हो तो उसे नष्ट करने के लिए।

(इ) भूत-प्रेत-पिचाश आदि भगाने के लिए।

सामग्री—स्वर्णाकर्षण गुटिका, मूंगे की माला, लोबान, धूप, जल-पात्र।

अवधि—दो घण्टे (दिन के किसी भी ससय)।

तिथि—योगिनी एकादशी।

प्रयोग विधि—जो साधक या साधिका इस प्रयोग को सम्पन्न करना चाहें यह इस दिन किसी समय स्वर्णाकर्षण गुटिया को मिट्टी के कुल्हड़ में रखकर उसे पीली सरसों या काली मिर्च से ढक दे अर्थात् उस कुल्हड़ में नीचे स्वर्णाकर्षण गुटिका रखकर उस पर लगभग सौ ग्राम काली मिर्च या सरसों डाल दे, और फिर हाथ में जल लेकर यह संकल्प ले कि मैं अमुक कार्य की सिद्धि के लिए इस प्रयोग को सम्पन्न कर रहा हूं। इसके बाद निम्न मंत्र का जप दो घण्टे करे :

मन्त्र

ओ३म् क्लीं क्रीं हूं मम इच्छित कार्य सिद्धि करि करि हूं क्रीं क्लीं फट्।

दो घण्टे मंत्र जप होने के बाद उसी दिन रात्रि को इस कुल्हड़ को काली मिर्च (या सरसों) व स्वर्णाकर्षण गुटिका सहित कहीं पर जमीन में गाड़ दें। ऐसा करने पर शीघ्र ही उसे इच्छित सफलता प्राप्त हो जाती है।

५. स्वास्थ्य लाभ प्रयोग

इसके अन्तर्गत निम्न चार प्रकार के कार्यों की सिद्धि प्राप्त की जा सकती है :

१. पुरानी बीमारी को मिटाने के लिए।
२. आरोग्य प्राप्ति के लिए।
३. अकाल मृत्यु टालने के लिए।
४. ..र्ण यौवन, सुन्दरता और स्वास्थ्य प्राप्ति के लिए।

सामग्री—स्वर्णाकर्षण गुटिका, अगरवत्ती, जल पात्र।

अवधि—दो घण्टे।

तिथि—योगिनी एकादशी।

प्रयोग विधि—इस दिन यह प्रयोग किसी भी समय सम्पन्न किया जा सकता है। किसी तांबे के पात्र में स्वर्णाकर्षण गुटिका को रखकर उस पर

धीरे-धीरे जल डालता हुआ निम्न मंत्र का जप करे। जप से पूर्व हाथ में जल लेकर संकल्प करे कि मैं स्वयं के लिए या अमुक व्यक्ति के लिए अमुक कार्य की सिद्धि के लिए यह प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं। इसके बाद हकीक माला से निम्न मंत्र का जप करे :

मन्त्र

ओ३म् यं स्वर्णाकर्षण गुटिकायै मम कार्यं सिद्धि करि करि हुं फट्।

यह मंत्र दो घण्टे जप करे और उसके बाद इस स्वर्णाकर्षण गुटिका पर चढ़ाया हुआ जल उस रोगी व्यक्ति के शरीर पर और घर में छिड़क दे। ऐसा करने पर शीघ्र ही उसे पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

ऊपर मैंने जो प्रयोग बताये हैं, उनमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि एक प्रयोग के लिए जो स्वर्णाकर्षण गुटिका काम में ली जाएगी वह दूसरे प्रयोग या अनुष्ठान में उपयोग नहीं की जा सकती। प्रत्येक प्रयोग के लिए अलग-अलग स्वर्णाकर्षण गुटिका होनी चाहिए।

१५

यह आपका कौन-सा जीवन है

क्या आप जीवित हैं ? प्रश्न पढ़कर चौंकेंगे—पर प्रश्न उचित है, सही और समयानुकूल है।

यदि आप जीवित हैं तो मालूम करें कि आप वास्तव में ही मनुष्य हैं या पशु-जीवन ही व्यतीत कर रहे हैं।

और यदि मनुष्य हैं तो आपका जीवन अधोमुखी है या ऊर्ध्वमुखी ? और यदि निरन्तर ऊर्ध्वमुखी है तो फिर वह आपका जीवन कौन-सा जीवन है ? पहला-दूसरा-तीसरा या सातवां, आठवां—।

इन सब जटिल प्रश्नों का सामना कर प्रामाणिक रूप से उत्तर दिया है विद्वान् लेखक, विचारक, भ्रमणशील योगी हेतुकानन्द ने।

भारतीय दर्शन के अनुसार व्यक्ति चौरासी लाख योनियों को भुगतने

के बाद मानव शरीर धारण करता है, और उसके बाद वह पुनः आवागमन के चक्कर में घूमता हुआ हजारों-लाखों योनियों को पार करता हुआ आगे बढ़ता रहता है। इसलिए मानव-जीवन को स्वर्णिम और दुर्लभ जीवन कहा गया है। कुछ लोग इस जीवन को भली प्रकार से समझ लेते हैं और अपने मार्गदर्शन के द्वारा लक्ष्य पर पहुंच जाते हैं। जबकि अधिकांश व्यक्ति जो मिल जाय उसी जीवन को जीने को बाध्य होते हैं।

नवीन शोध

परन्तु पिछले कुछ वर्षों में परामनोविज्ञान के द्वारा जो खोज हुई है उससे यह स्पष्ट हुआ है कि मनुष्य मरकर पुनः मनुष्य शरीर धारण करता है। वह कुत्ते, बिल्ली या अन्य किसी पशु-पक्षी की योनि में जन्म नहीं लेता। ऐसे सैंकड़ों उदाहरण हैं कि एक बालक भारत के किसी गांव में पैदा हुआ। उसे पूर्व जन्म का जो वृत्तांत याद था ज्यों-का-त्यों दुहरा दिया, और उस स्थान पर ज्ञात करने से उसने जो तथ्य बताये वे पूर्णतः प्रामाणिक और सही उतरे, इससे यह तो स्पष्ट होता है कि मानव मृत्यु के बाद कुछ समय तक अन्य योनियों भूत, प्रेत, पिशाच आदि में भटककर पुनः मानव गर्भ से जन्म लेता है, परन्तु इस परामनोविज्ञान की शोध से एक भी उदाहरण ऐसा नहीं मिला कि किसी बालक ने यह बताया हो कि वह पहले अमुक पशु या पक्षी था और उसके बाद पुनः मनुष्य शरीर धारण किया हो।

जैन दर्शन के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सव्वय सुत्त' में बताया है कि मनुष्य मर-कर पुनः मनुष्य शरीर ही धारण करता है। इसमें भी मनुष्य पुनः मनुष्य ही बनता है और नारी मृत्यु के उपरान्त पुनः नारी योनि में ही शरीर धारण करती है।

इसी ग्रन्थ में आगे बताया है कि दर्शन में चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने की जो बात कही गई है, वह लाक्षणिक है। इसका तात्पर्य यह है कि कुछ व्यक्ति मनुष्य योनि में जन्म लेने के बाद गधे की तरह ही पूरा जीवन व्यतीत करते हैं। उनके शरीर में आलस्य भरा होता है। कार्य करने का कोई निश्चित समय नहीं होता और बुद्धि से मन्द होने के कारण उनका पूरा जीवन एक गधे की तरह ही परिवार का बोझ ढोते-ढोते बीत जाता है। अतः वह मनुष्य रूप होते हुए भी दूसरे प्रकार से गधा ही है और वह योनि गधे की योनि ही कही जा सकती है। इसी प्रकार कुछ स्त्रियां अत्यन्त लालची होती हैं। ये आचार-विचार, खान-पान आदि के

बारे में जो शुद्धता बरतनी चाहिए, वह नहीं बरततीं, भोजन बनाते-बनाते भी खाना शुरू कर देती हैं। सब्जी पकाते हुए उसके कच्चे और पक्के होने का ज्ञान उस सब्जी को चखकर करती हैं, या अपने परिवार से छुपाकर घी, दूध आदि खा लेती हैं, तो यह उनका जीवन बिल्ली का जीवन ही कहा जायगा।

कुल मिलाकर उस ग्रन्थ में पूर्ण प्रामाणिकता के साथ यह स्पष्ट किया है कि मनुष्य शरीर समाप्त होने के बाद आत्मा पुनः मानव शरीर को ही ग्रहण करती है। परन्तु मनुष्य का वह जीवन कैसा होगा उसी के आधार पर उसे कुत्ते, बिल्ली, गधे या अन्य पशु-पक्षियों की योनियों की संज्ञा दी जा सकती है।

यह छठा जीवन है

मानव जीवन और उसकी पहचान के बारे में भारतीय दर्शन के साथ-साथ बौद्ध दर्शन में भी विशेष तथ्य स्पष्ट है। भगवान बुद्ध ने मृत्यु के समय अपने प्रिय शिष्य आनन्द को अपने पास बुलाकर कहा—"आनन्द, मैं इस शरीर को छोड़ रहा हूं, परन्तु फिर भी मैं पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाया, क्योंकि यह मेरा छठा जीवन ही है।"

आनन्द बुद्ध की बात को भली प्रकार से नहीं समझ पाया तब बुद्ध ने कहा—"जो बात तुम मुझसे नहीं समझ पाये हो वह बात मेरे अन्य ग्रन्थ तुम्हें बता देंगे।"

परन्तु इस तथ्य की पूरी और प्रामाणिक व्याख्या बौद्ध ग्रन्थों के अलावा जैनों के प्रसिद्ध आचार्य बेलाचार्य के ग्रन्थ 'जीवनार जीव' में मिल जाती है। इस ग्रन्थ में यह पूर्ण प्रामाणिकता के साथ समझाया है कि व्यक्ति का जीवन क्या है, और किस प्रकार से वह अपने जीवन को पहिचान सकता है।

इस पुस्तक में भारतीय बौद्ध और यवन-दर्शन की व्याख्या करते हुए जैन-दर्शन की विशद व्याख्या की है, और बेलाचार्य ने जीवन की पूर्णता के साथ समझाया है। बेलाचार्य जैन शास्त्र और दर्शन शास्त्र के उद्भट विद्वान् थे। कहा जाता है कि वे शरीर में से आत्मा को निकालकर पिछले कई जीवन को देखने में समर्थ थे। उन्होंने अपने जीवन में संसार के लगभग सभी ज्ञात दर्शनों का अध्ययन किया था, और जीवन की अंतिम अवस्था में अस्सी पृष्ठों की एक पुस्तक लिखी थी जो 'जीवनॉर जीवन' के नाम से प्रसिद्ध है, और आज यह पुस्तक इस क्षेत्र में संसार की सबसे

अधिक प्रामाणिक पुस्तक मानी जाती है।

वेलाचार्य ने बताया कि प्रत्येक मानव-आत्मा जीवन प्राप्त करने के लिए बाध्य है, आत्मा शरीर का जर्जर हिस्सा छोड़कर जब स्वतन्त्र होती है, तो वायु-मंडल में विचरण करती रहती है, और इस प्रयत्न में रहती है कि वह किसी स्वस्थ, नवीन और ताजी देह में प्रवेश पा सके।

जब बालक जन्म लेता है, तो वह उसका पहला जीवन तो होता ही है, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि वह उसका पहला जीवन ही हो। क्योंकि जीवन का आधार आत्मा की पहिचान तथा जीवन को ऊर्ध्वमुखी बनाने के प्रयास में है।

वेलाचार्य ने बताया है कि मानव-जीवन और पशु-जीवन में कोई अन्तर नहीं है। अन्तर केवल इतना ही है कि पशु चार पैरों से चलता है, जबकि मानव दो पैरों से ही अपना काम चला लेता है। इसके अलावा पशु और मानव में कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं है। पशु भी भोजन करते हैं, नींद लेते हैं, और समय पर संतान उत्पन्न करते हैं। ठीक इसी प्रकार मानव भी भोजन करता है, नींद लेता है, और संतान उत्पन्न कर अंत में मृत्यु को प्राप्त कर लेता है।

इन दोनों में तात्विक अन्तर उस क्षण से शुरू होता है जब वह सांसारिक प्रपंचों को छोड़ छल, कपट, झूठ, दम्भ आदि को एक तरफ सरकाकर आत्मा और अपने जीवन के अभ्युत्थान को पहिचानने का प्रयास करता है। उसी क्षण से उसका मानव-जीवन प्रारम्भ होता है, और वही क्षण प्रथम जीवन का प्रारम्भ कहा जाता है।

यों तो व्यक्ति चाहे पचासों जन्म ले ले, परन्तु फिर भी वे जीवन, सही रूप से जीवन नहीं कहे जा सकते। केवल पशु जीवन ही कहे जा सकते हैं। इसीलिए उस जीवन की कोई गणना नहीं होती और न उस जीवन के बारे में कोई चिंतन ही किया जा सकता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह चिंतन जो आत्मा को पहिचानने का प्रारम्भ होता है यह यदि क्षणिक होता है, तो व्यर्थ होता है। बोलचाल की भाषा में इसे 'मसानिया वैराग' कहा जाता है। जब व्यक्ति किसी सम्बन्धी को श्मशान में जलाने जाता है, तो वह विचार करता है कि मैं यह छल, कपट करके जो धन और पापपूर्ण कमाई एकत्र कर रहा हूं यह व्यर्थ है, आखिर में तो खाली हाथ ही संसार से जाना है, तो मैं यह सब क्यों करूं? अब आगे जाकर मैं अपने जीवन को इन सारे पापपूर्ण प्रपंचों से दूर रखूंगा। परन्तु घर आते-आते वह सब कुछ भूल जाता है, और पुनः उसी

माहौल में घुस जाता है, जिसमें वह जी रहा था। ऐसे क्षणिक आवेश या क्षणिक विचार को जीवन का प्रारम्भ नहीं कहा जा सकता।

जीवन को पहिचानें

जीवन के प्रारम्भ का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति अपने संस्कारों से या गुरु से इस तथ्य को पहिचाने कि वास्तविक जीवन क्या है, और इस जीवन का उत्थान किस प्रकार से हो सकता है। बेलाचार्य ने यह भी बताया है कि जब प्रथम जीवन का प्रारम्भ होता है तब उसकी कुण्डलिनी का सबसे नीचे का हिस्सा स्पन्दित होने लगता है, और इस स्पन्दन के साथ ही उसके जीवन की शुरुआत हो जाती है।

कई बार अनजाने में ही इस प्रकार की कुण्डलिनी का स्पन्दन प्रारम्भ हो जाता है। पर इसके बाद यदि व्यक्ति इस संबंध में कोई प्रयत्न नहीं करता तो वह स्पन्दन कुछ समय के बाद स्वतः समाप्त हो जाता है, और उसका यह जीवन प्रारम्भ होते-होते भी रह जाता है, परन्तु कुछ व्यक्ति अपने गुरु या ईश्वर की कृपा से ऐसे कार्यों में सचेत हो जाते हैं जिससे कि उनका यह स्पन्दन धीरे-धीरे ऊंचा उठता रहता है, और उनका जीवन जागरूक बना रहता है।

इसके बाद यदि व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, और वह आत्मा दूसरा शरीर धारण कर लेती है तब भी वह स्पन्दन उस आत्मा के साथ ही आता है; और उसी क्रम से शुरू रहता है। यदि ऐसा रहता है, तो यह उसका दूसरा जीवन कहा जाता है।

कुण्डलिनी ही जीवन है

कुण्डलिनी का एक सिरा मूलाधार कहलाता है, तो इसका अंतिम सिरा सहस्रार कहलाता है। जब यह स्पन्दन मूलाधार से प्रारम्भ होकर आधे से अधिक मार्ग पार कर लेता है, तब उस व्यक्ति को कभी-कभी आभास होने लगता है कि उसकी रीढ़ में सनसनाहट-सी हो रही है। वह सनसनाहट ही इस बात का आभास है कि उसकी कुण्डलिनी जागरण अवस्था में ऊपर की ओर उठ रही है।

जब कुण्डलिनी का स्पन्दन सहस्रार तक पहुंचता है, तो सहस्रार चेतना प्रारम्भ हो जाती है। वहां पर जो मांस पेशियां सुप्त अवस्था में होती हैं, उनमें धड़कन प्रारम्भ हो जाती है, और उन मांसपेशियों के जागरण से उस व्यक्ति के जीवन में एक नवीन आलोक प्राप्त होने लगता

है। उसे कुछ ऐसा लगता है कि जैसे वह एक विशेष प्रकाश से नहा लिया हो। उसके चेहरे पर एक विशेष चमक और ओज प्राप्त हो जाता है, और वह संसार के प्रत्येक कार्य या घटना को एक नवीन दृष्टि से देखने का अभ्यस्त हो जाता है। पर यह स्थिति मात्र तीन जीवन में ही समाप्त हो जाती है, या दूसरे शब्दों में कहा जाय कि जिसका सहस्रार जागृत हो जाता है, वह तीन जीवन प्राप्त कर लेता है।

बेलाचार्य ने आठों जीवन की पहिचान के लक्षण बताये हैं, वे संक्षेप से इस प्रकार हैं।

पहला जीवन

यह जीवन प्रत्येक मानव शरीर को प्राप्त होता है और यह जीवन सामान्य जीवन कहा जाता है। पशु जीवन और इस जींवन में तात्विक कोई अन्तर नहीं होता।

दूसरा जीवन

पहले जीवन में यदि कुण्डलिनी स्पन्दन प्रारम्भ हो जाता है, और वह स्पन्दन बराबर जीवन के अंत तक चलता रहता है, तो इस स्पन्दन का क्रम उसके दूसरे जीवन में भी बना रहता है, और इस प्रकार यदि भाग्य से उसे योग्य गुरु प्राप्त हो जाता है, तो विशेष प्रयत्नों से वह कुण्डलिनी जागरण-प्रक्रिया को ऊंचा उठाता है। यदि वह चाहे तो इस जीवन में ही सहस्रार तक पहुंच सकता है, अन्यथा सामान्य रूप से कुण्डलिनी स्पन्दन सिर के अंतिम भाग तक पहुंचाने में सक्षम होता है। जिस व्यक्ति का दूसरा जीवन होता है, वह पशु जीवन से कुछ ऊपर उठा हुआ होता है। उसके जीवन में क्रूरता नहीं होती, उसका मन कोमल और दया से पूर्ण होता है। उसके जीवन में गुरु का स्थान सबसे ऊंचा होता है। वह इस बात को अनुभव करता है कि अन्य सारा जीवन तो पशु की तरह ही है केवल यही एक ऐसा व्यक्ति या मार्गदर्शक है जो कि मुझे पशु जीवन से हटाकर मानव जीवन और आगे चलकर दिव्य जीवन देने में समर्थ हो सकता है। इस प्रकार की भावनाओं से युक्त स्पन्दित कुण्डलिनी को लिए हुए जो सिर के अन्तिम भाग तक कुण्डलिनी जागरण को पहुंचाने में सक्षम हो पाता है, वही अपना दूसरा जीवन समाप्त करता है।

कई बार ऐसा भी होता है कि परिस्थितियां, घर के वातावरण और संस्कारों की वजह से दूसरा जीवन आगे न बढ़कर वह स्पन्दन धीरे-धीरे

कमजोर होते-होते पुनः नीचे सरक आता है, और मूलाधार तक स्थिर हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह पुनः पहले जीवन में चला जाता है, और जब ऐसा होता है तो यह उसका अधःपतन ही कहलाता है।

तीसरा जीवन

यह जीवन महत्वपूर्ण जीवन होता है क्योंकि इस जीवन में व्यक्ति गुरु कृपा से, शक्तिपात द्वारा या अपने प्रयत्नों से सहस्रार भेदन में समर्थ हो जाता है। वह जीवन उच्चता के मूल्यों को छू लेता है। जरूरत से ज्यादा स्वार्थी नहीं होता। धोखा, छल, कपट और प्रपंच में लिप्त नहीं होता, तथा मानव-मूल्यों को पहचान कर उनकी उन्नति और अपने जीवन में उन मूल्यों की वृद्धि के लिए बराबर प्रयत्नशील रहता है। उसके चेहरे पर एक प्रकार की चमक होती है जो कि सामान्य मानव के चेहरे पर नहीं देखी जा सकती। साथ-ही-साथ उसे कई बार आने वाली घटनाओं का पहले से ही आभास हो जाता है। उसे यह अनुमान हो जाता है कि उसके जीवन में या आने वाले जीवन में निकट भविष्य में अच्छी या बुरी क्या घटना घटित होने वाली है। इसके अलावा वह मनुष्यों को और अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है।

चौथा जीवन

यह जीवन एक विशेष प्रकार का मोड़ लेता है, जबकि व्यक्ति गृहस्थी में रहता हुआ भी गृहस्थ नहीं होता, क्योंकि उसके जीवन में मानवीय मूल्य बहुत बढ़ जाते हैं। वह केवल अपना या अपने परिवार का हित ही नहीं देखता, अपितु पूरे समाज, देश और संसार का हित देखने में संलग्न होता है। यदि संसार में कहीं पर भी भूकम्प आता है, और उससे लोगों की मृत्यु होती है तो उसके हृदय में दुख और वेदना जागृत हो जाती है। इसके साथ-ही-साथ ऐसा व्यक्ति एक दिव्य जीवन जीने के पथ पर बढ़ जाता है। लोग उससे सलाह लेते हैं, उसके व्यक्तित्व से आकर्षित होते हैं। उसके साथ बैठने में, उससे बात करने में अपना सौभाग्य समझते हैं, और वह जीवन के सभी क्षेत्रों में पूर्णता प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है।

पांचवां जीवन

जो व्यक्ति पांचवें जीवन में प्रवेश करता है उसके चेहरे के चारों

तरफ एक हल्की-सी आभा दिखाई देने लग जाती है। इस जीवन की पहिचान इससे की जाती है कि उसकी आवाज में एक विशेष प्रकार का सम्मोहन होता है। उसकी बात को सुनकर मन को शांति और संतोष मिलता है। मन में ऐसा विचार रहता है कि उसके पास ही ज्यादा-से-ज्यादा समय व्यतीत हो और उससे कुछ प्राप्त किया जा सके।

साथ-ही-साथ ऐसा व्यक्ति गृहस्थ कार्यों में ध्यान देने के अतिरिक्त जीवन की उन्नति पर भी बराबर नजर रखे हुए होता है। वह बराबर अपने प्राणों को और अपने जीवन को ऊंचा उठाने में प्रयत्नशील बना रहता है।

ऐसा व्यक्ति गृहस्थ होते हुए भी योगी और योगी होते हुए भी गृहस्थ की तरह जीवन व्यतीत करने में समर्थ होता है, परन्तु उसके जीवन में वासना का उद्वेग नहीं होता। उसके जीवन में स्वार्थ और क्षुद्र विचार नहीं होते, अपितु उसके जीवन में दिव्यता, श्रेष्ठता और उच्चता होती है।

उसके व्यक्तित्व से एक विशेष प्रकार का आकर्षण अनुभव होता है। लोग दूर-दूर से उससे मिलने के लिए आते हैं। उसके विचारों का अनुसरण करते हैं। उसके लिए अपने आपको समाप्त करने के लिए भी प्रयत्नशील होते हैं। ऐसा जीवन अपने आपमें एक श्रेष्ठ जीवन कहा जा सकता है, क्योंकि उसके कार्यों का अपने आपमें एक इतिहास बनता जाता है।

छठा जीवन

यह जीवन अपने आपमें महत्वपूर्ण जीवन माना गया है, क्योंकि ऐसे व्यक्ति के जीवन में अत्यन्त उच्चकोटि के मानवीय मूल्य स्थापित होते हैं। एक प्रकार से देखा जाय तो वे समाज के पथ-प्रदर्शक और नेतृत्व करने की क्षमता रखते हैं। समाज का बहुत बड़ा वर्ग उनके पीछे होता है। उनका पूरा व्यक्तित्व एक विशेष प्रकार के सांचे में ढला होता है। उनके व्यक्तित्व से लोग स्वतः ही चुम्बक की तरह आकर्षित होते हैं, और वे समाज को एक नई दिशा दृष्टि देने में सक्षम हो पाते हैं।

उनकी आवाज में एक दृढ़ता और स्थिरता होती है, वे जो भी बात कहते हैं, प्रामाणिकता के साथ कहने में समर्थ और सक्षम होते हैं, वे समाज के विरोधी तत्त्वों की परवाह नहीं करते, अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किसी भी प्रकार की अड़चन को बर्दाश्त नहीं कर पाते और तीव्र गति से अपने लक्ष्य पर बढ़ते रहते हैं, भगवान बुद्ध, महावीर

स्वामी, भगवान श्री रामचन्द्र आदि इसी जीवन में आते हैं।

सातवां जीवन

दर्शन शास्त्र के उद्‌भट विद्वान बेलाचार्य ने बताया है कि सातवां जीवन अपने आप में निस्पृह जीवन होता है, उसमें एक विशेष प्रकार की उच्चता स्थापित होती है, परन्तु अपने चारों तरफ वे एक ऐसा आवरण ओढ़ लेते हैं, जिससे उनके वास्तविक स्वरूप का लोगों को भान हो पाता है। एक प्रकार से वे अपने आपमें अत्यन्त महान होते हुए भी सामान्य मानव ही दिखाई देते हैं।

उसमें इतनी क्षमता होती है कि वे अपने केहरे के प्रभा-मण्डल को क्षीण कर लेते हैं, जिससे कि सामान्य मानव उसको पहचान न सके। वे सामान्य व्यक्ति की तरह रहते हैं, उठते हैं, खाते-पीते और संसार की क्रिया में संलग्न रहते हैं, परन्तु इतना होने पर भी वे जल में कमलवत् बने रहते हैं।

ऐसा व्यक्तित्व अपने कार्यों से, भाषणों, विचारों और लेखन से, समाज को और देश को एक नई दिशा-दृष्टि देने में सक्षम हो पाता है। उसका व्यक्तित्व चुम्बकीय होता है। बाहर से ऐसे व्यक्ति शांत, सरल और सौम्य दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है कि जैसे यह व्यक्तित्व हम लोगों के बीच का ही हो। वह सुख में खिलखिलाता है, दुख में दुखी होता है, उसके चेहरे पर बच्चों की तरह सरलता और करुणा व्यक्त रहती है, परन्तु ऐसी आत्मा अपने आपमें विराट व्यक्तित्व को समाहित किए हुए होती है। पर वह उस व्यक्तित्व की विराटता पर एक हल्का-सा पर्दा डाले रहते हैं, जिससे कि वे अन्य सामाजिक प्रपंचों में लिप्त न हो जाएं।

इतना होने के बावजूद भेदक आंखें ज्ञात कर सकती हैं कि यह साधारण व्यक्तित्व अपने आपमें कितना महान और दिव्य है। ऐसे व्यक्तित्व का सहस्रार खुला हुआ होता है। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में वह पूर्णता प्राप्त होता है और उसकी सबसे बड़ी पहचान यह है कि उसके सारे शरीर से एक विशेष प्रकार की सुगन्ध निरन्तर प्रवाहित होती रहती है।

आठवां जीवन

यह अपने आप में पूर्ण अवस्था होती है और ऐसा व्यक्ति सामान्य मानव की तरह अपने आपको समाज में समाहित कर लेता है, परन्तु

समाज से एकाकार होते हुए भी वह सबसे अलग-थलग दिखाई देता है।

उसके व्यक्तित्व की विराटता यही है कि वह पूरे देश और विश्व को अपने विचारों से प्रभावित करने की क्षमता रखता है और पूरे संसार को एक नवीन दृष्टि देने मे सक्षम हो पाता है। मानवीय मूल्यों से पूर्ण होने के साथ-साथ उसकी आवाज में एक विशेष प्रकार का आकर्षण, उसके व्यक्तित्व में एक विशेष प्रकार का चुम्बकीय प्रभाव और उसके कार्यों में एक विशेष प्रकार की नवीनता बनी रहती है।

वह गृहस्थ होते हुए भी योगी होता है, परन्तु ऐसा व्यक्ति समाज का एक सदस्य होकर ही अपने जीवन की पूर्णता मानता है। वह योगी का उच्च जीवन जीने के बाद भी सामान्य गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है। उसके रहन-सहन, वेशभूषा आदि में सामान्यता बनी रहती है, परन्तु सौभाग्यशाली व्यक्ति ही ऐसे व्यक्तित्व के भीतर झांकने में समर्थ हो पाते हैं, और उसकी विराटता को पहचान पाते हैं। सामान्य मानव तो उसे एक सामान्य गृहस्थ ही मान लेते हैं।

भगवान श्री कृष्ण ऐसे ही व्यक्तित्व थे, जो योगीराज कहलाने के साथ-साथ पूर्ण गृहस्थ दिखाई देते थे। वे सामान्य जीवन गृहस्थ के बीच ही व्यतीत कर अपने विराट व्यक्तित्व को छिपाने के प्रयास में संलग्न रहे थे।

वास्तव में ही जो आतमा आठवां जीवन प्राप्त कर लेती है वह जीवन का श्रेष्ठतम वरदान और उच्चतम स्थिति प्राप्त कर लेती है।

आठवां जीवन समाप्त होने पर ही मुक्ति हो पाती है। इससे पहले मानव-आत्मा की उस पूर्ण पुरुष-ज्योति में लीन होने की सम्भावना नहीं रहती। व्यक्ति आठवां जीवन पार करके ही पूर्णता प्राप्त कर सकता है और मुक्ति प्राप्त करने में सक्षम हो पाता है।

एक जीवन में ही आठों जीवन

दर्शन शास्त्र के अनुसार यह ज़रूरी नहीं है कि आठ जीवन प्राप्त करने के लिए आठ बार जन्म ले, जैसा कि ऊपर बताया गया है कि पचास बार जन्म लेने पर भी पहला जीवन प्रारम्भ हो पाता है। कोई जरूरी नहीं है, पचास या साठ बार जन्म लेने पर भी दूसरा जीवन प्रारम्भ हो सके।

इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति चाहे तो अपने वर्तमान जीवन में ही आठों जीवन प्राप्त कर सकता है, पर इसके लिए उसे सही पथ-प्रदर्शक की

आवश्यकता है, यह पथ-प्रदर्शक भी वह हो जो स्वयं छठा, सातवां या आठवां जीवन जी रहा हो, जो गुरु स्वयं पहले या दूसरे जीवन में होता है वह अपने शिष्य को आगे का ज्ञान कैसे दे सकता है ?

व्यक्ति कुण्डलिनी जागरण, सहस्त्रार भेदन और विशेष प्रकार की साधना के द्वारा इस वर्तमान शरीर में ही सभी जीवन को पार करता हुआ आठवां जीवन प्राप्त कर अन्त में मोक्ष प्राप्त कर सकता है और अपनी आत्मा को ब्रह्म में लीन कर सकता है।

अब आपका यह कौन-सा जीवन है

आप स्वयं अपने आपके लिए चिन्तन कर सकते हैं और ज्ञात कर सकते है कि आपका यह जीवन कौन-सा जीवन है ? सम्भव न हो तो योग्य गुरु के माध्यम से अपने वर्तमान जीवन को पहचाने, जो गुरु प्रजा-साधना से सम्पन्न होता हैं, वह साधना के माध्यम से सामने वाले व्यक्ति को देख-कर जान सकता है कि वह किस जीवन की गतिशील कर रहा है। जब उसे यह ज्ञात हो जाता है, तब वह उसे आगे के जीवन के लिए तैयार कर सकता है।

इसके लिए जाति और अवस्था कोई बाधक नहीं होती, छोटे और बड़े का कोई भेद नहीं होता और इनमें पुरुष और नारी का कोई अन्तर नहीं होता। आवश्यकता केवल इस बात की है कि उसके दिव्य संस्कार जागृत हों। वह इस संसार के छल, प्रपंच से परे सरककर कुछ क्षणों के लिए अपने बारे में सोचे और इस बात का निश्चय कर ले कि वह वर्तमान समय में किस जीवन में गतिशील हो रहा है और किस प्रकार से वह पूर्णता प्राप्त करता हुआ मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

१६

प्रमुख महाविद्या साधना, महाकाली साधना

दस महाविद्याओं में सर्वश्रेष्ठ महाकाली कलियुग में कल्पवृक्ष के समान शीघ्र फलदायक एवं साधक की समस्त कामनाओं की पूर्ति में सहायक है। जो साधक इस साधना एवं सिद्धि को प्राप्त कर लेता है, उसके जीवन में किसी प्रकार का कोई अभाव नहीं रहता। भोग और मोक्ष दोनों में समान रूप से सम्पन्नता प्राप्त कर जीवन में सभी दृष्टियों से पूर्णता प्राप्त कर लेता है।

आश्विन नवरात्रि में ऐसी ही महाकाली से सम्बन्धित साधना सम्पन्न होने पर साधकों के लिए वरदानस्वरूप है।

योगिराज कालिदासानन्द द्वारा प्रस्तुत यह लेख पाठकों के लिए दीप स्तम्भ है :

संसार में सैकड़ों-हजारों साधनाएं हैं, परन्तु हमारे महर्षियों ने इन सभी साधनाओं में दस महाविद्याओं की साधना को प्रमुखता और महत्व दिया है। दस महाविद्याओं में भी काली महाविद्या सर्वप्रमुख, महत्वपूर्ण और अद्वितीय कही गयी है, क्योंकि यह त्रिवर्गात्मक महादेवियों—महालक्ष्मी, महासरस्वती, महाकाली में सर्वप्रमुख है। शास्त्रों के अनुसार मात्र काली की साधना से ही जीवन की समस्त कामनाओं की पूर्ति कर मनोवांछित फल प्राप्ति सम्भव होती है। इस संबन्ध में यदि हम साधनात्मक ग्रन्थों को टटोलकर देखें, तो लगभग सभी योगियों, संन्यासियों, विचारकों, साधकों और महर्षियों ने एक स्वर से काली साधना को और महत्व प्रदान किया है।

महत्व

दस महाविद्याओं में प्रमुख और शीघ्र फलदायक होने के कारण पिछले हजारों वर्षों से हजारों-हजारों साधक इस साधना को सम्पन्न करते आए हैं, और उनके मन में यह तीव्र लालसा रहती है कि अवसर मिलने

पर किसी प्रकार से काली साधना सम्पन्न कर ली जाय। इस साधना से अगणित लाभ हैं, फिर भी जिन साधकों ने काली साधना को सिद्ध किया है उनके अनुसार निम्न तथ्य तो साधना सम्पन्न करते ही प्राप्त हो जाते हैं:

अथ कालीमन्वक्ष्ये सद्योवाक्सिद्धिपायकान्।
आराविर्तैर्यः सर्वेष्टं प्राप्नुवन्ति जना भुवि॥

अर्थात् काली साधना से तुरन्त वाक् सिद्धि (जो भी कहा जाय वह सिद्ध हो जाय) तथा इस लोक में समस्त मनोवांछित फल प्राप्त करने में साधक सक्षम हो पाता है।

२. इस साधना के करने से व्यक्ति समस्त रोगों से मुक्त होकर पूर्ण स्वस्थ, सबल एवं सक्षम होता है।

३. यह साधना जीवन के समस्त भोगों को दिलाने में समर्थ है, साथ ही काली साधना से मृत्यु के उपरान्त पूर्ण मोक्ष प्राप्त होती है।

४. शत्रुओं का मान मर्दन करने, उन पर विजय पाने, मुकदमे में सफलता और पूर्ण सुरक्षा के लिए इससे बढ़कर और कोई साधना नहीं।

५. इस साधना से दस महाविद्याओं में से एक महाविद्या सिद्ध होती है, जिससे सिद्धाश्रम जाने का मार्ग प्रशस्त होता है।

६. इस साधना की सिद्धि से तुरन्त आर्थिक लाभ और प्रबल पुरुषार्थ प्राप्ति सम्भव होती है।

७. "काली पुत्रो फलःप्रदः" के अनुसार काली साधना योग्य पुत्र देने, पुत्र की उन्नति व उसकी सुरक्षा और उसे पूर्ण आयु प्रदान करने के लिए श्रेष्ठ साधना कही गई है।

वस्तुतः काली साधना को संसार के श्रेष्ठ साधकों और विद्वानों ने अद्भुत और शीघ्र सिद्धि देने वाली साधना कहा है। इस साधना से जीवन के सारे अभाव दूर कर अपने भाग्य को बनाता हुआ साधक पूर्ण सफलता प्राप्त करता है।

समय

महाविद्या साधनाओं में नवरात्रि का तो विशेष महत्व रहा है, क्योंकि ये दिन इस प्रकार की साधनाओं के लिए सर्वोपरि है। फिर आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से जो नवरात्रि प्रारम्भ होती है। वह तो महत्वपूर्ण है ही, इसलिए साधकों को चाहिए कि वे नवरात्रि का चयन इस प्रकार की

साधना के लिए विशेष रूप से करें।

नवरात्रि की एक और विशेषता है कि यह हस्त नक्षत्र से प्रारम्भ होने वाली नवरात्रि है। अतः बुधवार और हस्त नक्षत्र का संयोग अपने आपमें विनय संयोग माना गया है। इसलिए महत्वपूर्ण योग में यदि यह साधना सम्पन्न की जाती है, तो इसमें विशेष सफलता प्राप्त होती है। साधकों को चाहिए कि वे इस महत्वपूर्ण नवरात्रि से इस अद्वितीय साधना को सम्पन्न करें।

सरल साधना

यद्यपि महाकाली-साधना महाविद्या-साधना है, और महाशक्ति की आधारभूत महाविद्या है, फिर भी यह साधना अन्य सभी साधनाओं की अपेक्षा सूक्ष्म और सरल है। साथ-ही-साथ यह सौम्य साधना है। इसका कोई विपरीत प्रभाव या परिणाम प्राप्त नहीं होता।

सही अर्थों में देखा जाय तो महाकाली साधना सरल और गृहस्थों के करने के लिए ही साधना है। यह मन्त्रात्मक साधना होने के कारण अनुकूल, शीघ्र प्रभावोत्पादक और श्रेष्ठ साधना है। इस साधना को पुरुष या स्त्री कोई भी कर सकता है। ऐसी साधना कोई भी गृहस्थ कर सकता है, योगी और संन्यासी कर सकता है। जो थोड़ा-बहुत भी पढ़ा-लिखा है, अपने जीवन के अभावों को दूर करना चाहता है उसके लिए यह स्वर्णिम अवसर है कि वे नवरात्रि का लाभ उठाकर महाकाली साधना सम्पन्न करे।

साधना विधि

साधक प्रातः स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर अपने घर में किसी एकान्त स्थान अथवा पूजा कक्ष में चैतन्य मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त महाकाली यंत्र एवं महाकाली चित्र स्थापित करे। साधक चाहे तो अकेला या अपनी पत्नी के साथ बैठकर पूजन कार्य कर सकता है। पूजन के लिए कोई जटिल विधि-विधान नहीं है। अपने मन से ही उसके सामने पुष्प व प्रसाद चढ़ाकर संकल्प करे कि मैं समस्त कामनाओं की पूर्ति, सिद्धि के लिए महाकाली साधना प्रारम्भ कर रहा हूं।

१. साधक के सामने पूर्ण चैतन्य महाकाली यन्त्र और महाकाली चित्र फ्रेम में मंढा हुआ स्थापित होना चाहिए, जो कि मन्त्रसिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो।

२. प्रथम दिन महाकाली देवी का पूजन कर उसका ध्यान कर मंत्र जप प्रारम्भ कर देना चाहिए, पूजन में कोई जटिल विधि-विधान नहीं है, मानसिक या पंचोपचार पूजा कर सकता है।

३. रात्रि को भूमि शयन करना चाहिए, खाट या पलंग का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

४. भोजन एक समय एक स्थान पर बैठकर जितना भी चाहे किया जा सकता है, पर शराब, मांस, मद्य, लहसुन, प्याज आदि का निषेध है।

अनुभव

साधक जब साधना में बैठता है, तो तीसरे ही दिन उसे घर के साधना कक्ष में सुगन्ध-सी अनुभव होती है। यह सुगन्ध अपने आपमें अवर्णनीय होती है। पांचवें दिन उसे कमर में बंधे हुए घुंघरुओं की-सी आवाज सुनाई दे सकती है, और आठवें दिन उसे जगत् जननी महाकाली के दर्शन हो जाते हैं। इसके लिए अखण्ड श्रद्धा, विश्वास और विधि-विधान के साथ साधना आवश्यक है।

प्रयोग

प्रथम दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर आसन पर पूर्व की ओर मुंह कर सामने शुद्ध घृत का दीपक लगा कर तथा महाकाली यन्त्र व चित्र को स्थापित कर उसकी पूजा करें। इसके पूर्व गणपति और गुरु पूजा आवश्यक है।

इसके बाद दाहिने हाथ में जल लेकर हिन्दी में ही संकल्प किया जा सकता है कि 'मैं अमुक तिथि तक एक लाख मन्त्र जप अमुक कार्य के लिए कर रहा हूं। आप मुझे शक्ति द जिससे कि मैं अपनी साधना में सफलता प्राप्त कर सकूं।' ऐसा कहकर हाथ में लिया हुआ जल छोड़ देना चाहिए। इसके बाद नित्य संकल्प करने की जरूरत नहीं है।

फिर निम्नलिखित महाकाली ध्यान करें :

शवारूढ़ाम्महाभीमांघोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम्।
चतुर्भुजांखड्गमुण्डवरांभयकरां शिवाम् ॥ १॥
मुण्डमालाधरान्देवीं लोलजिह्वान्दिगम्बराम्।
एवं सन्चिन्तयेत्कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥२॥

ध्यान के बाद निम्नलिखित मन्त्र का जप प्रारम्भ करें, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है। इस मंत्र की रुद्राक्ष माला से नित्य एक सौ पचास

मालाएं सम्पन्न होनी चाहिए।

मन्त्र

क्रीं क्रीं क्रीं ह्लीं ह्लीं हुं हुं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्लीं ह्लीं हुं हुं स्वाहा।

१७
वायवीय सिद्धि

शून्य में से मनचाही वस्तु प्राप्त करने की साधना एवं प्रयोग।

शून्य में से मनोवांछित पदार्थ प्राप्त करना भारतीय साधकों एवं योगियों का सफलतादायक प्रयोग रहा है। जंगलों में जब वे साधनारत होते है तो वे इसी प्रकार से इस साधना के द्वारा शून्य में से मनोवांछित वस्तु प्राप्त कर अपना कार्य सम्पन्न कर लेते हैं। हवा में से भोजन प्राप्त करना, शीतल जल, रुपये, धन, धान्य, वस्त्र और अन्य जो भी भौतिक पदार्थ संसार में सुलभ हैं, उन्हें एक क्षण में प्राप्त कर लेना 'वायवीय सिद्धि' कहलाती है।

अभी तक यह साधना विधि गोपनीय रही है, पर इन पंक्तियों के माध्यम से स्वामी हर्षानन्द पहली बार इस प्रामाणिक विधि को प्रस्तुत कर रहे हैं।

मेरे जीवन की कई दिनों से साध थी कि मैं वायवीय साधना सम्पन्न करूं परन्तु इस प्रकार की साधना सिखाने वाला भारतवर्ष में बहुत कम योगी है। यद्यपि दावा तो हजारों-लाखों योगी या साधु करते हैं तथा वे अपने भक्तों के सामने हवा में से भभूत और छोटी-मोटी चीजें निकालकर देते भी हैं, परन्तु यह सब चालाकी और हाथ की सफाई है। कोई भी व्यक्ति इस प्रकार से हाथ की सफाई सीखकर इन छोटी-मोटी वस्तुओं को हवा से प्राप्त कर बता सकता है, परन्तु यह सब धूर्तता है।

मैं गृहस्थ था, यद्यपि एक तरह से कर्म संन्यासी हूं, गृहस्थ में रहते हुए

भी गृहस्थ नहीं हूं। मन जम जाता है, तो कई-कई महीने हिमालय में साधनारत हो जाता हूं, और मौज आती है, तो तीर्थ यात्राओं के दर्शन करने के लिए निकल जाता हूं। मेरा कोई निश्चित स्थान और पता नहीं है, परन्तु मैं भगवे वस्त्र पहनने वाले बाबाओं में से नहीं हूं, जो कि कुछ न जानते हुए भी बहुत कुछ बताने का ढोंग करते हैं।

ऐसे ही घूमते-घूमते मुझे केदारनाथ से पहले गौरी-कुण्ड के पास एक योगी के दर्शन हो गये जो कि दिखने में सीधे-सादे थे, परन्तु जिनके चेहरे पर एक अपूर्व तेज और आभा झलक रही थी। वे भी केदारनाथ की यात्रा पर थे, इसलिए मेरा-उनका साथ हो गया और मैंने उनका सामान अपने कंधों पर उठा लिया जिससे उन वृद्ध योगी को कुछ राहत-सी अनुभव हुई। उनके साथ रहते हुए अनेक आश्चर्यजनक घटनाएं घटीं। फलतः मेरे मन में 'वायवीय विद्या' जानने की लालसा जागी। एक दिन मार्ग में चलते हुए मैंने उनसे इस विद्या के बारे में जानकारी चाही तो उन्होंने बताया कि शून्य-साधना भारतीय योगियों और संन्यासियों के लिए कोई अजूबा नहीं है। हम पहाड़ों पर इसी साधना के बल पर तो मस्ती के साथ रहते हैं। यह साधना जितनी हमारे लिए उपयोगी है, उतनी ही गृहस्थ लोगों के लिए भी उचित है। इसके माध्यम से शून्य में से मामूली सुई भी प्राप्त की जा सकती है, और हाथी को भी प्राप्त किया जा सकता है।

मैंने धड़कते हुए हृदय से उनसे यह विद्या सीखने की इच्छा प्रकट की तो उन्होंने कुछ क्षण मेरी ओर ताका और फिर सिखाने के लिए सहमत हो गये। उनकी स्वीकृति मेरे लिए वरदानस्वरूप थी, क्योंकि इससे मुझे तो लाभ होने वाले थे। एक तो मैं अपने गृहस्थ जीवन को आसानी से सुख-सुविधापूर्ण बिता सकता था, और आराम से अपना पूरा समय-साधना कार्यों में लगा सकता था। दूसरे इससे मुझे इस विद्या के बारे में प्रामाणिकता का भी पता चल जायगा और मैं धड़ल्ले के साथ लोगों से कह सकूंगा कि यह विद्या पूर्णतः प्रामाणिक और सही है।

केदारनाथ की यात्रा कर हम पुनः बदरीनाथ आ गये यहां पर स्वामी जी पन्द्रह-बीस दिन रहना चाहते थे। मैं भी उनके साथ ही ठहर गया। मेरे अनुरोध पर उन्होंने वहीं पर मुझे इसकी जानकारी दी।

साधना दिन

स्वामी जी के अनुसार शून्य-साधना को सम्पन्न करने का सर्वश्रेष्ठ

समय मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष के प्रथम रविवार से प्रारम्भ होता है। यह पांच दिन की साधना है और पांच दिन साधना करने पर यह सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

साधना उपकरण

मेरे पूछने पर स्वामी जी ने निश्छल भाव से बताया कि इसके लिए पांच वस्तुओं की आवश्यकता होती है— १. स्फटिक माला (मंत्र सिद्ध, प्राण-प्रतिष्ठायुक्त), बिल्ली की नाल, ३. शून्य गुटिका, ४. घृत का दीपक, ५. सफेद सूती आसन।

ये पांचों वस्तुएं पहले से ही मंगाकर साधक को रख लेनी चाहिए।

साधना विधि

मार्गशीर्ष शुल्ल पक्ष के प्रथम रविवार को प्रातःकाल घर के एकान्त स्थान में सफेद सूती आसन बिछाकर सामने जल पात्र रख दे और घी का दीपक लगा ले, फिर किसी पात्र में केसर या कुंकुम से स्वस्तिक चिह्न बना कर उस पर शून्य-गुटिका को रख दे। उसके सामने ही बिल्ली की नाल रख दे। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये दोनों ही वस्तुएं पूर्ण प्रामाणिकता के साथ मन्त्रसिद्ध, प्राण-प्रतिष्ठायुक्त होनी चाहिए।

इसके बाद १०८ मनकों की स्फटिक माला से मन्त्र जप प्रारम्भ करना चाहिए। नित्य १०१ मालाएं फेरने का विधान है।

साधना नियम

इस साधना में साधक को पांचों दिन केवल दूध पर ही विताने चाहिए। अन्न ग्रहण नहीं करें, दूध जितनी वार भी और जितना भी चाहें, पी सकते हैं। यदि दूध स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुकूल नहीं पड़ रहा हो तो सर्वथा भूखे रहकर या चाय लेकर साधना की जा सकती है। इसके साथ-ही-साथ भूमि शयन, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन आदि अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त कोई जटिल बन्धन या विधि-विधान नहीं है।

जब साधना पांचों दिन पूरी हो जाय, तब उस बिल्ली की नाल और शून्य-गुटिका को किसी चांदी के तावीज में बन्द कर अपनी दाहिनी भुजा पर काले धागे में बांध ले। ऐसा करने पर यह साधना सिद्ध हो जाती है। इसके बाद जब कभी भी कोई आवश्यकता हो तो केवल एक बार मंत्र उच्चारण कर वस्तु की इच्छा की जाती है, तो वह वस्तु तुरन्त उसके

हाथों में प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार जब उस पदार्थ या वस्तु को पुनः विलीन करना हो तब भी इसी प्रकार इस मन्त्र का एक बार उच्चारण कर ऐसी भावना मन में लाते ही वह पदार्थ या वस्तु शून्य में विलीन हो जाती है।

इस साधना का कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता, यदि साधना किसी वजह से खण्डित भी हो जाती है, तब भी कोई नुकसान या हानि नहीं होती। यह सौम्य मांत्रिक साधना है और इसका फल शीघ्र प्राप्त होता है।

साधना मन्त्र

इस साधना में जिस मन्त्र का जप किया जाता है, वह स्वामी जी के अनुसार इस प्रकार है :

ओ३म् वैताली वैताली वायु मार्गेण इच्छित पदार्थ प्राप्ति क्रीं क्रीं ह्लीं हुं फट् ॥

यह लघु मन्त्र वैताली मन्त्र है और अपने आपमें अचूक तथा शीघ्र सिद्धिदायक मन्त्र है, यह मन्त्र गोपनीय कहा गया है, इसलिए कुकर्मी और दुष्ट प्रकृति वाले व्यक्ति को इस मन्त्र का ज्ञान नहीं होना चाहिए।

१८

आइये, आकाश गमन करें

साधना सम्वन्धी कई ग्रन्थों में पढ़ा है कि उच्च स्तर के योगी आकाश मार्ग से ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करते हैं। ब्रह्मर्षि नारद के बारे में तो प्रत्येक भारतवासी जानता है कि वे एक पल में ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करने में सक्षम थे। आज भी ऐसे कई योगी और संन्यासी हैं, जो आकाश मार्ग से ही एक स्थान से दूसरे स्थान

पर आने-जाने में स्वतन्त्र और समर्थ हैं।

यद्यपि यह पद्धति दुष्कर एवं गोपनीय रही है, पर जब से नारद प्रणीत 'क्षं' विद्या का ज्ञान हुआ है तब से यह पद्धति गोपनीय नहीं रही, 'क्षं' का तात्पर्य आकाश होता है और नारद ने इस ग्रन्थ में उस साधना विधि का विस्तार के साथ उल्लेख किया है, जो आकाश गमन के लिए विशेष रूप से सहायक है।

पाठकों की जानकारी के लिए यह दुर्लभ और गोपनीय ग्रन्थ पहली बार प्रकाश में ला रहे हैं। परमयोगी अभयानन्द जी स्वयं इस दिशा के जानकार हैं और आकाश गमन प्रक्रिया के सिद्धहस्त साधक हैं।

मनुष्य का शरीर पंचभूतात्मक है, जिसमें अग्नि, जल, वायु, आकाश और पृथ्वी तत्व विद्यमान हैं। पृथ्वी तत्व की उपस्थिति होने की वजह से ही मनुष्य के शरीर में भारीपन और गुरुत्वाकर्षण है, जिसकी वजह से ही वह पृथ्वी पर चलता रहता है। यदि उसमें पृथ्वी तत्व का लोप हो जाय तो वह जमीन से ऊपर स्वतः ही उठ जायगा।

जब योगी ने आकाश विचरण किया

स्वामी अच्युतानन्द जी ऐसे पहले वैज्ञानिक योगी हैं, जिन्होंने एक सर्वथा नवीन विधि विकसित की। नाभि के चारों ओर छोटी-छोटी ग्रन्थियां हैं और उन ग्रन्थियों का एकीकरण ठीक नाभि के नीचे होता है। जिसे सामान्य भाषा में गोला या पेचुटी कहते हैं। नाभि के चारों ओर प्राण वायु अर्थात् आक्सीजन भरी होती है जिससे मानव उसके सहारे जीवित रहता है।

योगीराज अच्युतानन्द ने पद्मासन लगाकर सीधे बैठकर नाभि के नीचे जो गोल गोला-सा था उसे नाभि के चारों ओर हिलाना प्रारम्भ किया और जब बहुत तेजी से उस गोले को वृत्ताकार रूप में घुमाया तो उसके आसपास की वायु उस गोले के घर्षण से गर्म होने लगी और ऊपर योगीराज ने जालंधर बन्ध लगा रखा था। फलस्वरूप प्राण वायु गर्म होने पर भी बाहर नहीं निकल पा रही थी। अतएव वह अन्दर-ही-अन्दर इतनी अधिक गर्म हुई कि तेजी से ऊपर उठने लगी और धीरे-धीरे जब बाहर निकलने का उसे कोई मार्ग नहीं मिला तो उसने शरीर को भी अपने साथ ऊपर उठा लिया। इस प्रकार पहली बार केवल यौगिक वैज्ञानिक पद्धति से स्वामी अच्युतानन्द जी ने लगभग जमीन से एक फुट ऊपर उठकर सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

आज योगियों ने जो वह पद्धति विकसित की है उसमें उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है, क्योंकि इस पद्धति में किसी प्रकार का तन्त्र, मन्त्र का सहारा नहीं लिया है, अपितु केवल योग क्रिया के माध्यम से ही अपने आपको हवा में ऊपर उठाकर स्थिर करने की प्रक्रिया प्राप्त की है।

यह प्रक्रिया अत्यधिक सरल और सामान्य है। जिनको नेति, वस्ती आदि क्रियाओं का ज्ञान है वह आगे चलकर किसी अच्छे योगी से अच्युतानन्द द्वारा प्रणीत यौगिक क्रिया सीख सकता है और अपने आपको हवा में स्थिर रखकर सफलता प्राप्त कर सकता है, परन्तु इस प्रक्रिया का स्वतः अभ्यास नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसकी एक विशेष विधि और तरीका है। इसलिए योग्य गुरु के अलावा योगी के निर्देशन में ही यह क्रिया सीखनी चाहिए।

तांत्रिक विधि

आकाश गमन प्रक्रिया सर्वविदित तांत्रिक प्रक्रिया है और मूल रूप से यह रासायनिक क्रिया से सम्बन्धित है। इसमें पारद के बारह संस्कार सम्पन्न कर उसे बुभुक्षित बनाया जाता है और ऐसा पारद जब रजत ग्रास लेने लग जाय तो उस पारद की गुटिका बनाई जाती है और उस गुटिका को स्वर्ण अग्नि संस्कार से संस्कारित किया जाता है।

यह गोली अत्यधिक महत्वपूर्ण और आश्चर्यजनक सफलतादायक बन जाती है। इस गोली को मुंह में रखते ही व्यक्ति का भूमि तत्व सर्वथा लोप हो जाता है, क्योंकि यह गोली व्यक्ति के भूमि तत्व का ग्रास कर लेती है। फलस्वरूप व्यक्ति आक्सीजन से भी हल्का होकर ऊपर आकाश में उठ जाता है।

इस क्रिया के माध्यम से व्यक्ति को अपने ऊपर पूरी तरह से नियंत्रण होता है और मुंह में गोली के संचालन से ही बाएं या दाएं, ऊपर या नीचे घूम सकता है, विचरण कर सकता है, मनोवांछित स्थान पर उतर सकता है और आकाश गमन कर सकता है।

इस प्रक्रिया के द्वारा कई हजार फीट ऊपर आकाश में बिना किसी उपकरण या सहायता के उठ सकता है और सैकड़ों मील की यात्राएं उसने इस गोली के माध्यम से सम्पन्न की है। रासायनिक क्रिया में इस गोली को आकाश गुटिका के नाम से अभिहित किया गया है।

संसार के श्रेष्ठ तांत्रिक और योगियों ने इस विधि को अपनाया है और इसके माध्यम से उन्होंने सैकड़ों मील की यात्राएं पलक झपकते की

हैं, क्योंकि यह गुटिका गति और समय को समाप्त कर देती है अथवा न्यून कर देती है। फलस्वरूप व्यक्ति बहुत ही कम समय में लम्बी दूरी को पार कर सकता है और अपने मनोवांछित स्थान तक पहुंच सकता है।

जब वह इस गुटिका को मुंह से बाहर निकाल लेता है, तो वह व्यक्ति पुनः सामान्य अवस्था में आ जाता हैं। इस गुटिका से उसके व्यक्तित्व और स्वास्थ्य पर किसी प्रकार कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता।

मंत्रात्मक विधि

यह साधना किसी भी अमावस्या से प्रारम्भ की जा सकती है। यह एक सौ बीस दिन की साधना है। पुस्तक में वर्णित विधि के अनुसार साधक को अमावस्या की रात्रि को श्मशान के किनारे सर्वथा नग्न होकर स्नान करना चाहिए और फिर श्मशान में जाकर दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर बैठना चाहिए। अपने नीचे चिता भस्म का आसन बिछा देना चाहिए और फिर सामने हिम श्रृंग को स्थापित कर उसकी मानसिक पूजा सम्पन्न करनी चाहिए। पूर्ण पूजन कार्य सम्पन्न होने के बाद निम्नलिखित मन्त्र का जाप करते रहना चाहिए।

मन्त्र

ओ३म् क्षं क्षं क्षं आकाशचारी शून्य श्रृंग पूर्णत्वं क्षं क्षं क्षं फट् स्वाहा।

छः घण्टे तक इस मन्त्र का जप करने के बाद साधक पुनः श्मशान के बाहर आकर स्नान करे और अपने घर चला जावे। इसमें किसी प्रकार की माला या दीपक की आवश्यकता नहीं है। पर कमजोर मन-मस्तिष्क वाले व्यक्ति को भूल करके भी इस साधना को सम्पन्न नहीं करना चाहिए।

नियमों के अन्तर्गत साधक को एक समय भोजन करना चाहिए। पूरे १२० दिन की साधना में न तो कोई अन्य कार्य करे और न किसी से कोई बातचीत करे। सर्वथा मौन रहता हुआ इसी साधना में रत रहे। दिन को वह कोई कार्य न करे। केवल रात्रि को ही यह साधना सम्पन्न की जाती है।

एक सौ बीस दिन की साधना सम्पन्न होने पर यह मन्त्र सिद्ध हो

जाता है और व्यक्ति को आकाश से एक 'क्षं' गुटिका प्राप्त होती है, जो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इस गुटिका को कमर में या दाहिनी भुजा में बांध देना चाहिए।

इसके बाद जब भी साधक इस मन्त्र का पांच बार उच्चारण करेगा, तो स्वत उसकी आकाश गमन प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाएगी और वह मनोवांछित स्थान पर आ-जा सकेगा।

इस प्रकार की सिद्धि में वह स्वयं तो सबको देख सकेगा, परन्तु उसे कोई भी नहीं देख सकेगा। जब वह इस मन्त्र का विलोमीकरण करेगा, तभी उसे लोग देख पायेंगे। यह इस साधना की विशेषता है।

१९

भगवान महामृत्युंजय

भगवान शंकर के जितने विविध रूप हैं, उतने विश्व में किसी देवता के नहीं मिलेंगे। यजुर्वेद में वे उग्र रुद्री रूप में हैं तो उपनिषद्काल में कल्याणकारी आशुतोष शिव और शंकर के रूप में। पुराणों में उन्हें गिरिजापति बनाकर श्रृंगार का देवता माना है तो वहीं वे विषपान कर नीलकण्ठ के रूप में भी प्रचलित हुए। कहीं वे नटराज हैं तो कहीं श्रृंगारी नायक ईश्वर।

इससे भी महत्वपूर्ण और श्रेष्ठतम रूप है, अमृतवर्षा महामृत्युंजय की। शंकर के चिन्तन, मनन, पूजन और साधना से मृत्युभय को हमेशा के लिए समाप्त किया जा सकता है। इसीलिए मार्कण्डेय ऋषि ने कहा है, "चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः" अर्थात् जब चन्द्रशेखर के आश्रित हूं तो मेरा यम क्या बिगाड़ सकता है?

दीर्घायु एवं स्थायी आरोग्य प्रत्येक मानव के लिए परम आवश्यक है। इसके लिए वह प्रतिदिन-प्रतिक्षण चिन्तित रहता है और विविध औषधियों तथा उपायों का सहारा लेता है। महामृत्युंजय साधना इस दृष्टि से सर्वोपरि है, जिससे साधक निरोग एवं दीर्घायु बना रहता है और

उसका सारा जीवन हंसते-हंसाते व्यतीत हो जाता है।

उमेश पाण्डेय द्वारा निर्दिष्ट यह मौलिक लेख पाठकों के लिए अमृतोपम है।

मृत्यु तो एक दिन सबकी होती ही है, क्योंकि "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः।" असमय में न हो, इसके लिए ऋषि-मुनियों ने सिद्धि प्राप्त कर कुछ ऐसे उपाय ढूंढ़ निकाले हैं, जिसके द्वारा अकाल मृत्यु को टाला जा सकता है, इन उपायों में सर्वश्रेष्ठ उपाय महामृत्युंजय साधना मानी गई है।

महामृत्युंजय प्रयोग

सर्वप्रथम भगवान मृत्युंजय शिव की मूर्ति अर्थात् स्फटिक या पारद शिवलिंग को सामने किसी पात्र में स्थापित कर दोनों हाथों की अंजलि में पुष्प लेकर भगवान शिव का ध्यान करे। दो हाथों से दो अमृत घटों द्वारा अपने सिर पर अभिषेक करते हुए अन्य दो हाथों से मृगचर्म तथा अक्षमाला को धारण किये हुए और अन्य दो हाथों में अमृत से परिपूर्ण दो कुम्भ अपनी गोद में रखे हुए कैलाश पर्वत के समान गौरवर्ण, स्वच्छ कमल पर विराजमान नवीन चन्द्रमा युक्त मुकुट वाले त्रिनेत्र भगवान मृत्युंजय शिव का मैं स्मरण करता हूं।

इसके वाद हाथ में जल लेकर विनियोग करे।

विनियोग

अस्य श्री त्र्यम्बक मन्त्रस्य वशिष्ठ ऋषि अनुष्टुप् छन्द त्र्यम्बक पार्वति पतिदेवता त्रं वीजं वं शक्तिः कं कीलकं मम सर्व रोग निवृत्तये सर्व कार्य सिद्धये अकाल मृत्यु निवृत्तये महामृत्युंजय त्र्यम्बक मंत्र जपे विनियोगः (इतना कहकर हाथ का जल छोड़ दे)।

ऋष्यादिन्यास

ओ३म् वशिष्ठ ऋषये नमः (शिरसि)।
ओ३म् अनुष्टुप्छन्दसे नमः (मुखे)।
ओ३म् त्र्यम्बकदेवतायै नमः (हृदये)।
ओ३म् त्रं बीजाय नमः (गुह्ये)।
ओ३म् वं शक्तये नमः (पादयोः)।
ओ३म् कं कीलकाय नमः (नाभौ)।
ओ३म् विनियोगाय नमः (सर्वांगे)।

कर-हृदयादिन्यास

पहली बार

ओ३म् त्र्यम्बकं

ओ३म् यजामहे

ओ३म् सुगन्धि पुष्टिवर्धनम्

ओ३म् उर्वारूकमिव वंधनात्

ओ३म् मृत्योर्मुक्षीय

ओ३म् मामृतात्

जप के लिए मूलमन्त्र

महर्षि वशिष्ठ ने महामृत्युंजय मंत्र को ३३ अक्षर का बताया है, जो उनके अनुसार ३३ देवताओं और दिव्य शक्तियों के द्योतक हैं। इन ३३ देवताओं में—आठ वसु, ११ रुद्र, बारह आदित्य, एक प्रजापति एवं एक वषट्कार—ये तैंतीस देवता प्राणियों के भिन्न-भिन्न शरीर के अंगों में स्थित हैं। इस मन्त्र के जप से ये सभी शक्तियां शरीर में चैतन्य होकर प्राणी की रक्षा करती हैं और शरीरगत निर्बलता, मृत्यु तथा रोगों को समाप्त करती हैं।

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारूकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मा मृतात्॥

इस मन्त्र का एक लाख जप होना आवश्यक है। जप पूजा होने के बाद दशांश हवन करना चाहिए। जिनमें १. बिल्व, २. खैर, ३. वट, ४. तिल, ५. सरसों, ६. खीर, ७. दूध, ८. दही, ९. पलास और १०. दूर्वा—इन दस द्रव्यों को घी में डुबोकर मूलमन्त्र बोलकर आहुति दी जानी चाहिए और अंत में जिस रोगी के लिए जप किया, उस पर इसी मंत्र से हवन का दसवां अंश अभिषेक करना चाहिए।

दूसरी बार

(अंगुष्ठाभ्यां नमः—हृदयाय नमः)

(तर्जनीभ्यां नमः—शिरसे स्वाहा)

(मध्यमाभ्यां नमः—शिखायै वषट्)

(अनामिकाभ्यां नमः—कवचाय हुं)

(कनिष्ठिकाभ्यां नमः—नेत्र्याय वौषट्)

(करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः—अस्त्राय फट्)

जब प्राण अत्यन्त संकट में हों

जीवन में अचानक दुर्घटना आ सकती है या कोई विशेष आपत्ति, परेशानी, बाधा, राजभय, बीमारी या कष्ट अनुभव हो तब शुक्राचार्य प्रणीत मृत संजीवनी विद्या से प्रेरित महामृत्युंजय मंत्र का जप करना चाहिए। यह "मृत संजीवनी महामृत्युंजय मंत्र" कहा जाता है :

ओ३म् ह्रौं ओ३म् जूं ओ३म् सः ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ओ३म् स्वः ओ३म् भुवः ओ३म् भूः ओ३म् सः ओ३म् जूं ओ३म् ह्रौं ओ३म्।

यह ६२ अक्षरों का शुक्राराधित महामृत्युंजय मंत्र संसार का अमोघ मृत्युभय नाश करने वाला मंत्र कहा गया है।

मृतसंजीवनी विद्या

पुराणों में प्रसिद्ध है कि महर्षि शुक्राचार्य को अमृत सिद्धि प्राप्त थी। यह मृतसंजीवनी विद्या मृत्युंजय मंत्र एवं गायत्री मन्त्र के योग से है, इसका स्वरूप इस प्रकार है :

मृतसंजीवनी मन्त्र

ओ३म् ह्रौं जूं सः ओ३म् भूर्भुवः स्वः ओ३म् तत्सवितुर्वरेण्यं त्र्यम्बकं यजामहे भर्गोदेवस्य धीमहि सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् धियो यो नः प्रचोदयात् उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ओ३म् स्वः भुवः भूः ओ३म् सः जूं ह्रौं ओ३म्।

किसी भी मन्त्र की साधना में विनियोग करन्यास, ध्यान आदि पूर्ववत् ही होंगे।

२०

जय जय जय महिषासुर मर्दिनी

नवरात्रि के अवसर पर

भगवती मां जगदम्बा संसार की अधिष्ठात्री देवी है, जिसके पूजन-मनन से जीवन की समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है। नवरात्रि का पर्व

तो विशेष रूप से मां का ही पर्व है। इन दिनों में जो साधक भक्ति भाव से सकाम या निष्काम किसी भी दृष्टि से साधना करता है, उसे अवश्य ही पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

दुर्गा सप्तशती ग्रन्थ भगवती दुर्गा का सर्वाधिक प्रिय और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसका एक-एक श्लोक एक-एक मन्त्र के बराबर है, और साधकों ने इसके किसी भी एक श्लोक का जप करके मनोनुकूल सफलताएं पाई हैं।

नीचे मैं दुर्गा सप्तशती से विविध कामनाओं की पूर्ति से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण मन्त्र दे रहा हूं। यदि साधक भक्तिपूर्वक मात्र इन मन्त्रों का जप नवरात्रि के अवसर पर सम्पन्न कर लेता है, तो उसे अवश्य ही फल प्राप्ति होती है।

१. सब प्रकार की विपत्तियों के नाश के लिए

शरणागतदीनार्थपरित्राण परायणे।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ॥

मंत्र जप संख्या ५०००, हवन सं० १०००, हवन सामग्री—घृत।

२. सब प्रकार के मंगल के लिए

सर्वमंगमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणि नमोऽस्तुते ॥

मंत्र जप संख्या १०,०००, हवन संख्या ३१००, हवन सामग्री—घृत, कमल गट्टा।

३. सम्पूर्ण बाधाओं से मुक्ति तथा धन-पुत्रादि की प्राप्ति के लिए

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशय ॥

मंत्र जप संख्या ५०००, हवन संख्या ११००, हवन सामग्री—सरसों व घृत।

४. मोक्ष प्राप्ति के लिए

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः ॥

मंत्र जप सं० २१००, हवन सं० १०१, हवन सामग्री—घृत।

५. विश्व की रक्षा के लिए

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भुवनेशलक्ष्मीः।
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा।
ता त्वां नताः स्म परिपालय देव विश्वम् ॥

मन्त्र जप संख्या ५०००, हवन संख्या १०००, हवन सामग्री—घृत मधु।

६. भक्ति की प्राप्ति के लिए

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥

मंत्र जप सं० ५०००,हवन संख्या २१००, हवन सामग्री—घृत, मधु।

७. समस्त रोगों की शांति के लिए

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥

मंत्र जप संख्या १०,०००, हवन संख्या ५०००, हवन सामग्री—सरसों, घृत, काली मिर्च।

८. सम्पूर्ण शूलों को मिटाने के लिए

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानि स्वनेन च ॥

मंत्र जप संख्या २१००, हवन संख्या ५०१, हवन सामग्री—घृत, सरसों।

९. शत्रु विनाश के लिए

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरी।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरी विनाशनम् ॥

मंत्र जप संख्या १०,०००, हवन संख्या ५०००, हवन सामग्री—काली मिर्च, घृत।

१०. महामारी की शांति के लिए

जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते ॥

मंत्र जप संख्या २१००, हवन संख्या १०००, हवन सामग्री—घृत, चन्दन।

११. भय नाश के लिए

सर्वस्वरूपे सर्वज्ञे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयैभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ॥

मंत्र जप सं० ५०००, हवन सं० २१००, हवन सामग्री—घृत।

१२. मनोनुकूल पत्नी की प्राप्ति के लिए

पत्नी मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणी दुर्गसंसार सागरस्य कुलोद्भवाम् ॥

मंत्र जप सं० ३०००, हवन सं० १०००, हवन सामग्री—घृत।

उपर्युक्त मन्त्र दुर्गा सप्तशती से सम्बन्धित हैं, और नवरात्रि में या वर्ष के किन्हीं दिनों में इन मन्त्रों का जप कर जो सम्बन्धित हवन करता है, उसे अवश्य ही पूर्ण सफलता प्राप्त होती है।

दुर्गासप्तशती से सम्बन्धित कुछ विशेष तथ्य

दुर्गा सप्तशती का पाठ साधक पण्डित और सामान्य वर्ग करता आया है, परन्तु उन्हें कुछ विशेष तथ्यों का भली प्रकार से ज्ञान न होने की वजह से वे लाभ के स्थान पर हानि उठा लेते हैं।

नीचे उन बिन्दुओं को स्पष्ट किया जा रहा है, जो प्रत्येक साधक के लिए आवश्यक हैं।

१. दुर्गा सप्तशती के नित्य पाठ में अर्गला, कीलक और कवच का पाठ अवश्य ही करना चाहिए, क्योंकि बिना इन तीनों के पाठ किये मन्त्र जप या दुर्गा सप्तशती के पाठ से कोई फल नहीं मिलता।

२. यदि एक दिन में दुर्गा सप्तशती के कई पाठ करने हों तो कवच, अर्गला और कीलक का एक ही बार पाठ करना चाहिए।

३. दुर्गा सप्तशती के पाठ के अंत में रहस्य त्रय का पाठ अवश्य करना चाहिए।

४. दुर्गा पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व और दुर्गा पाठ के अंत में नवार्ण मन्त्र का जप १०८ बार करना जरूरी है। यदि दिन में एक से अधिक बार दुर्गा पाठ करना हो तब भी प्रत्येक पाठ के प्रारम्भ और अंत में १०८ बार नवार्ण मन्त्र का जप आवश्यक है।

५. दुर्गा सप्तशती के प्रत्येक पाठ के प्रारम्भ में रात्रिसूक्त और अंत में देवीसूक्त का पाठ जरूरी है।

६. दुर्गा पाठ करते समय अध्याय के अंत में 'इति' कहने से लक्ष्मी का नाश, 'वध' कहने से सम्पूर्ण कुल का नाश और 'अध्याय' कहने से अपने प्राणों का नाश होता है। अतः केवल मार्कण्डेयपुराणे इत्यादि कहना चाहिए।

७. दुर्गा पाठ करते समय किसी भी अध्याय के मध्य में विराम नहीं करना चाहिए, और न आसन से उठना चाहिए। यदि ऐसा आवश्यक हो गया हो तो पुनः उस अध्याय का प्रारम्भ से पाठ करना चाहिए।

८. दुर्गा पाठ करने वाले को अपने हाथ में दुर्गा की पुस्तक रखकर पाठ नहीं करना चाहिए। न पाठ करते समय सिर हिलाना चाहिए, गाकर या जोर-जोर से भी पाठ करना वर्जित है।

९. पूरे दुर्गा पाठ में पहले अध्याय, चौथे अध्याय, दसवें अध्याय और तेरहवें अध्याय के अंत में ही पाठ करने वाला चाहे तो कुछ समय के लिए आसन छोड़कर इधर-उधर जा सकता है। यदि लघु शंका से निवृत हुआ हो तो हाथ-पैर धोकर बैठे, यदि दीर्घ शंका से निवृत हुआ हो तो साधक को पुनः स्नान कर बैठना चाहिए।

१०. दुर्गा पाठ प्रारम्भ करते समय दुर्गा का पूजन कर पुस्तक को प्रणाम कर पाठ प्रारम्भ करना चाहिए। इसी प्रकार पाठ की समाप्ति में भी दुर्गा की पुस्तक को प्रणाम करना चाहिए।

११. मन-ही-मन दुर्गा पाठ करना वर्जित है।

१२. शतचण्डी में नवरात्रि के दिनों में ही १०१ पाठ पूरे कर लेने चाहिए।

१३ शतचण्डी या सहस्रचण्डी पाठ होने पर अंतिम दिन दुर्गा के ७०० श्लोकों को पढ़कर प्रत्येक श्लोक के साथ आहुति देनी चाहिए अथवा दशांश हवन करना चाहिए।

१४. नवार्ण मन्त्र का केवल घृत से हवन करना चाहिए।

१५. दुर्गा हवन में तिल, जौ, घृत, शर्करा और अन्य हवनसामग्री का प्रयोग किया जा सकता है।

१६. नवरात्रि में नवमी या अष्टमी को कुल परम्परा के अनुसार हवन करना चाहिए। कहीं-कहीं अष्टमी और नवमी के संधिकाल में भी हवन किया जाता है।

१७. सम्पुटित पाठ करते समय दुर्गा के प्रत्येक मन्त्र के प्रारम्भ और अंत में सम्पुटित मन्त्र मन-ही-मन नहीं जपना चाहिए।

१८. दुर्गा का विसर्जन दसवीं को ही प्रातःकाल किया जाना शास्त्र-सम्मत है।

१९. दुर्गा का मुख दक्षिण दिशा में करने से यह शुभ फल देने वाली है। पूर्व दिशा में करने से विजय प्रदान करने वाली और पश्चिम दिशा में करने से कार्य को सिद्ध करने वाली कही गई है। दुर्गा का मुंह उत्तर दिशा में नहीं होना चाहिए।

२०. शतचण्डी और सहस्रचण्डी में कुमारी का पूजन आवश्यक माना गया है।

२१. शतचण्डी या सहस्रचण्डी वर्ष में किसी भी समय की जा सकती है, इसके लिए उत्तरायण या दक्षिणायन अथवा गुरु चक्र के अस्त का विचार आवश्यक है।

२२. यदि दुर्गा पाठ करते समय अखण्ड दीपक बुझ जाय तो नवार्ण मन्त्र का उच्चारण कर पुनः दीपक प्रज्वलित कर लेना चाहिए।

वस्तुतः दुर्गा सप्तशती का पाठ कलियुग में शीघ्र और शुभ फल देने वाला माना गया है। साधकों को चाहिए कि वे अपने जीवन में दुर्गा सप्तशती का पाठ अवश्य करें।

२१

आपत्ति उद्धारक बटुक भैरव स्तोत्र

जीवन में पग-पग पर बाधाएं, परेशानियां और समस्याएं आती ही रहती हैं, ये समस्याएं आठ प्रकार की होती हैं:

१. स्वयं के या परिवार के किसी सदस्य को रोग होना।

२. घर में मतभेद या पारिवारिक कलह होना।

३. मुकदमे में परेशानी होना या हार की संभावना अनुभव होना।

४. शत्रुओं से परेशानी या जीवन को खतरा अनुभव करना।
५. दरिद्रता से अत्यधिक ग्रस्त और पीड़ित होना।
६. घर में आकस्मिक बाधाएं, अड़चनें या कठिनाइयां उत्पन्न होना।
७. राज्यभय की आशंका या राज्यभय होना।
८. किसी भी प्रकार की समस्या का उपस्थित होना।

इन आठ समस्याओं के निराकरण के लिए तन्त्र ग्रन्थों में 'बटुक भैरव साधना' को स्पष्ट किया गया है। यह भी कहा गया है कि जो बटुक भैरव स्तोत्र का मात्र एक बार पाठ कर लेता है उसके जीवन में किसी प्रकार का कोई अभाव या कष्ट व्याप्त नहीं होता।

साधना रहस्य

इस साधना को पुरुष या स्त्री कोई भी सम्पन्न कर सकता है। यदि साधक किसी भी प्रकार की विपत्ति या परेशानी अनुभव करता है तो उसे चाहिए कि वह रात्रि को लाल वस्त्र धारण कर अपने सामने मन्त्र सिद्ध-प्राण-प्रतिष्ठायुक्त रुद्रयामल तन्त्र से अनुप्राणित 'भैरव यन्त्र' (ऐसा यन्त्र मात्र १२० रु० न्यौछावर से प्राप्त किया जा सकता है) को सामने लाल वस्त्र विछाकर स्थापित कर दें और मंगलवार की रात को ही तेल का दीपक लगाकर इस स्तोत्र के मात्र ५१ पाठ सम्पन्न कर ले तो प्रातःकाल होते-होते चमत्कारिक अनुभव होने लगते हैं और वह समस्या मात्र चौवीस घण्टों में ही हल हो जाती है।

यह एक दिन की साधना है और इसमें कोई लम्बा-चौड़ा विधि-विधान नहीं है। केवल मात्र मंगलवार की रात्रि को सामने भैरव यन्त्र रख, तेल का दीपक लगाकर, लाल वस्त्र धारण कर दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर लाल आसन पर बैठ जाय और यन्त्र के सामने गुड़ का भोग लगा दे जो कि इक्यावन पाठ सम्पन्न करने के बाद प्रातःकाल घर के बाहर दक्षिण दिशा की ओर फेंक दें।

मेरे जीवन में हजारों विपत्तियां आई हैं और मैंने केवल इस स्तोत्र के द्वारा इन सभी विपत्तियों पर विजय पाई है। वास्तव में ही यह एक अद्भुत और रहस्यमय स्तोत्र है जिसका प्रभाव तुरन्त होता है। बन्दूक की गोली का असर एक बार खाली जा सकता है, परन्तु इसका प्रभाव खाली नहीं जाता और चौवीस घंटों के अन्दर-अन्दर यह स्तोत्र अपना असर दिखा देता है।

जीवन में जब भी कोई समस्या, बाधा या परेशानी आवे, इसका

उपयोग किया जा सकता है, क्योंकि यह यन्त्र जीवन-भर के लिए उपयोगी रहता है।

साधना विधि

सबसे पहले हाथ में जल लेकर अपने मन की कामना उच्चारित करते हुए विनियोग करे अर्थात् हाथ में जल लेकर अपनी समस्या बताकर जमीन पर जल छोड़ दे।

इसके बाद करन्यास और अंगन्यास कर मूल स्तोत्र के ५१ पाठ सम्पन्न कर दें।

विनियोग

अस्य श्री बटुक भैरवनामाष्टशतकाऽपदुद्धारणस्तोत्रमन्त्रस्य वृहदारण्यक ऋषि। श्री बटुक भैरवो देवता। अनुष्टुप्छन्दः ह्रीं बीजम् बटुकायेति शक्तिः। प्रणव कीलकम् अभीष्टसिद्ध्यर्थं पाठे जपे विनियोगः॥

करन्यास

ह्रां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं वूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं वैं अनामिकाभ्यां हुम्। ह्रौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ह्रः वः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

षडंगन्यास

ह्रां वां हृदयाय नमः। ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं वूं शिखायै वषट्। ह्रैं वैं कवचाय हुम्। ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः वः अस्त्रायफट् इति षडंगन्यासः।

नैवेद्य समर्पण

ऐह्ये हि देवी पुत्र बटुकनाथ कपिलजटाभारभास्वर त्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशायम् २ सर्वोपचार सहिता बिल गृण्ह गृण्ह स्वाहा।

ध्यान

शान्तं पद्मासनस्थं शशिमुकुटधरं चेत्रतांगे त्रिनेत्रं।
शूलं खड्गं च वज्रं परशुमुसलं दक्षिणांगे वहन्तम्।
नागं पाशं च घंटां नलिनकरयुतं सांकुशं वामभागे।
नागालंकारयुक्तस्फटिकमणि निभ नौमितत्वंशिवाख्यम्॥

मूल पाठ

ओ३म् भैरवोभूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावना ।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रद क्षत्रियो विराट् ॥१॥

श्मशानवासी मांसाशी खपराशी स्मरान्तकम् ।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धिसेवितः ॥२॥

कंकालः कालशमनः कला काष्ठातनुः कविः ।
त्रिनेत्री बहुनेत्रश्च तथा पिंगललोचनम् ॥३॥

शूलपाणिः खड्गपाणि कंकाली धूम्रलोचनः ।
अणभीरुर्भैरवी नाथो भूतपो योगिनी पतिः ॥४॥

धनदा धनहारी च धनवान् प्रतिमानवान् ।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखा च त्रिलोकपः ॥६॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भः शान्तः शान्तजन प्रियः ।
वटुको बहुवेपश्च खट्वांगवर धारकः ॥७॥

भूताध्यक्षः पशुपति भिक्षुकः परिचारक ।
धूतो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥

प्रशान्तः शान्तिदः सिद्धः शंकरः प्रियबान्धवः ।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्प युक्तः शिखी सखः ।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥

कंकालधारी मुण्डो च नागयज्ञोपवीतिकः ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भो मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥

शुद्धो नीलाजंनं दैत्यो दैत्यहा मुण्ड भूषितः ।
बलिभुग्बलिभंगः वैद्यवीर नाथी पराक्रमः ॥१२॥

सर्वापत्तारणो दुर्गा दुष्ट भूतनिवेदितः ।
कामी कलानिधिः कान्तः कामिनीवश कृद्वशी ॥१३॥

सर्व सिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभुर्विष्णुरितीव हि ।
अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः ॥१४॥

मयाते कथितं देवी रहस्य सार्वकामिकम् ।
य इदं पठत स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम् ॥१'॥

२२

अनुपमा : जिसे मैंने वशीकरण से सिद्ध किया है

वशीकरण विद्या भारतवर्ष की प्राचीन और महत्वपूर्ण विद्या रही है। यदि हम इतिहास के पन्ने टटोलें तो वैदिक काल में भी ऋषियों ने वशीकरण का प्रयोग किया है और मनचाही वस्तु प्राप्त की है।

पुराणों में भी इस बात के सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं कि उन श्रेष्ठ योगियों, सिद्धों, राजाओं और व्यक्तियों ने वशीकरण का प्रयोग तीन कारणों से किया है: (१) शत्रु को अपने वश में करके पूर्ण रूप से पराजित कर देना, (२) अपने आपको वशीकरण प्रयोग से सिद्ध करके अत्यन्त सौन्दर्यमय बना देना जिससे कि देखने वाला उस पर पूर्णतः सम्मोहित हो जाय, (३) किसी भी वयस्क सुन्दरी को वशीकरण कर उसका हृदय जीत लेना और अपने प्रणय सूत्र को आगे बढ़ाना।

और यह कोई मर्यादाविरुद्ध बात नहीं है। हां, यदि किसी को झूठा आश्वासन दिया जाय, सब्ज बाग दिखाये जायें, लालच दिया जाय, पैसों के बल पर कुकृत्य किया जाय या मजबूरी का फायदा उठाया जाय तो यह गलत है। अन्यथा यह पुरुष और स्त्री का एक स्वाभाविक आन्तरिक परिवर्तन प्रक्रिया है कि वे एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो प्रणय निवेदन करें और यदि यह प्रणय बढ़ता है तो विवाह के लिए प्रस्ताव रखें।

मुझे प्रारम्भ से ही यह धुन सवार थी कि अपने जीवन को मामूली जीवन नहीं रहने दूंगा। समाज में सम्माननीय स्थान बनाऊंगा, आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता प्राप्त करूंगा और श्रेष्ठ सौन्दर्यवती से विवाह कर अत्यन्त सुन्दर बालकों को जन्म दूंगा। मैं यह भी समझता था कि मेरे लिए निर्धन और गरीब घर का बालक होने के कारण यह सब कुछ शायद संभव नहीं है। यदि मैंने बी० ए०, एम० ए० कर भी लिया लो किसी दफ्तर में कलम घसीटता-घसीटता मर जाऊंगा और मेरे जीवन के सारे सपने चकनाचूर हो जायेंगे। इसके लिए मुझे आवश्यकता थी एक योग्य और समर्थ गुरु की, जो अपने आप में तेजस्वी हो, समस्त विद्याओं का जानकार हो और उनके सान्निध्य में रहकर साधन सम्पन्न कर जीवन की उन श्रेष्ठताओं को प्राप्त करूंगा जिनसे जीवन संवर सकता है, सज सकता है, पूर्णता प्राप्त कर सकता है।

और मैं जब बीस वर्ष का था अपना घर-बार छोड़ दिया और भारत छोड़कर नेपाल की ओर चला गया। पहले छः महीने मैं आस-पास भटकता रहा, पशुपतिनाथ मन्दिर को देखा, बागमती नदी में स्नान किया, बूढ़े, नीलकण्ठ को जल चढ़ाया और सुदूर पहाड़ों में रहने वाली दक्षिण काली मन्दिर में जाकर काली की पूजा-अर्चना-साधना सम्पन्न की।

और उन्हीं दिनों नेपाल के पास ही एक योगी से भेंट हो गयी जिसको देखते ही मेरे अवचेतन मन ने कहा, यह जरूर जानकार व्यक्ति है। इसके पास पाखण्ड नहीं है, ढोंग नहीं है, दिखावा और प्रदर्शन नहीं है। मगर इसके प्रास ऐसा अवश्य है जो अपने आप में अद्वितीय हो सकता है। मैं उसके साथ हो लिया। वह नेपाल में काठमाण्डू से बाहर बूढ़ा नीलकण्ठ से आगे विरचीन गांव के पास जो पहाड़ी है उसी के पास एक झोपड़ी में निवास करता था। मैंने लगभग महीने भर तक उसकी सेवा की और ज्यों-ज्यों मैं उसके सम्पर्क में आता गया त्यों-त्यों मुझे अनुभव होता गया कि जरूर यह अपने आपमें सिद्ध पुरुष है और इससे कुछ महत्वपूर्ण विद्याएं प्राप्त हो सकती हैं।

इस महीने दो-महीने की अवधि में मेरी सेवा से वह काफी प्रसन्न हुआ और पूछा, कहां के रहने वाले हो, आश्चर्य की बात तो यह है कि पिछले दो महीनों में उसने मेरे बारे में या मेरे निवास स्थान के बारे में या मेरे परिवार के बारे में एक भी प्रश्न नहीं पूछा था। आज जब पहली बार उसने प्रश्न किया तो मैंने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, मैं राजस्थान में जयपुर जिले के घरूड़ा गांव का रहने वाला हूं और साधनाओं के द्वारा ही अपने जीवन को पूर्णता देने के प्रयास में भटक रहा हूं।

स्वामी जी ने एक क्षण मेरी आंखों में झांका और कहा, मैं तुम्हें अवश्य कुछ विद्याएं सिखाऊंगा क्योंकि तुम राजस्थान के रहने वाले हो और राजस्थान में ही जोधपुर में मेरे पूज्य गुरुदेव का निवास स्थान है। तुम्हें पाकर ऐसा ही लगता है कि जैसे मैं अपने पूज्य गुरुदेव के चरणों में बैठ गया हूं।

मैंने श्रीमाली जी का नाम सुन रखा था, परन्तु मैं यह भी जानता था कि उन तक पहुंचना अत्यधिक कठिन है। इसलिए मैंने नेपाल का रास्ता पकड़ा था। मैंने पूछा, आप श्रीमाली जी के बारे में तो कुछ नहीं कह रहे हैं ?

उन्होंने साष्टांग दण्डवत करते हुए भक्तिभाव से उन्हें प्रणाम किया और कहा, तुम मूर्ख हो, विशाल समुद्र को छोड़कर एक छोटी-सी तलैया

के पास प्यास बुझाने आये हो। तुम्हें चाहिए कि तुम वहीं से कुछ प्राप्त करते पर, खैर, मुझे तुमसे स्नेह है और मैं तुम्हें अवश्य सिखाऊंगा। तुम मुझे बताओ कि क्या सीखना चाहते हो।

इन पंक्तियों को लिखते समय मैं सही हृदय से कह रहा हूं कि मेरे मन में कोई भावना या विचार नहीं था। न जाने क्यों अकस्मात् मेरे मुंह से निकल गया कि मैं सम्मोहन विद्या सीखना चाहता हूं कि मैं कुछ ही मिनटों में वशीकरण के क्रिया की द्वारा उसे हमेशा-हमेशा के लिए अपना वना लूं।

स्वामी जी ने एक क्षण मेरी ओर ताका और फिर जोरों से खिलखिला पड़े। ऐसा लगा कि स्वच्छ पानी का झरना छलछला आया हो। फिर बोले, तुम्हारी उम्र के बालकों की ऐसी ही इच्छा होती है यह मैं जानता हूं, मगर कोई बात नहीं अगर तुम्हें यही सीखने की इच्छा है तो मैं तुम्हें जरूर उच्चकोटि की वशीकरण विद्या सिखाऊंगा जिससे कि तुम इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सको।

मैं जान-बूझकर उन स्वामी जी का नाम स्पष्ट नहीं कर रहा हूं क्यों कि वे प्रचार-प्रसार से बहुत दूर हैं और उन्होंने मुझे मना किया था कि किसी भी हालत में मेरे नाम का विवरण देना उचित नहीं है और उन्होंने मुझे उसी दिन से वशीकरण विद्या सिखानी प्रारम्भ कर दी।

मैं सप्ताह में दो बार काण्ठमाडू जाता और वहां से राशन-पानी, आटा-चावल, घी आदि खरीदकर ले जाता। स्वामी जी मुझे कुछ रुपये देते और समान खरीदकर लाने को कहते। एक दिन मैं पशुपतिनाथ मन्दिर की परिक्रमा कर बागमती नदी के किनारे उदास मन से बैठा हुआ था कि अचानक मेरी थोडी दूर पर नजर पड़ी। एक अत्यन्त सुन्दर बालिका नदी के एक बड़े ढोके पर बैठी हुई थी और उसके दोनों पैर पानी में पड़े हुए थे। उन पैरों से वह पानी उछाल रही थी, उसे इस बात का कोई ज्ञान नहीं था कि कोई उसको देख रहा है।

पहली ही बार में मुझे वह अत्यन्त सुन्दर अल्हड़ बालिका मन को छू गई। लगभग सतरह-अठारह वर्ष की तरुणी अपने आप में वेखबर बैठी हुई थी। उसे शायद इस बात का ज्ञान ही नहीं था कि उसके शरीर में चुपके से यौवन ने आकर घर कर लिया है। चेहरे पर एक भोलापन, लम्बा-सा कद, गोरा रंग और वड़ी-बड़ी सुन्दर आखें सब कुछ एकबारगी ही मन को छू गया। ऐसा लगा कि कोई देव कन्या हो और कुछ क्षणों के लिए पृथ्वी पर विचरण करने के लिए आई हो।

मुझे अपने आप पर हमेशा गर्व रहा है और अपने संयम पर, अपने

आत्मविश्वास पर जरूरत से ज्यादा भरोसा रहा है। किसी भी स्त्री या बालिका को देखकर कभी भी मेरा मन विचलित नहीं हुआ पर इस बार पता नहीं क्यों मन अटक गया और मैं वहीं मूर्तिवत् खड़ा रहा।

अचानक उसे लगा कि कोई उसे देख रहा है और ज्यों ही उसकी नजर मुझ पर पड़ी तो वह अचानक उठ खड़ी हुई और एक तरफ को चली गई। मैं हताश खिन्न-सा सामान खरीद कर आश्रम में लौट आया।

पर मैं उस रात आराम से सो न सका, और दूसरे दिन मैं वापिस उसी जगह जा पहुंचा। मैंने देखा कि वह बालिका वहीं कपड़े धोने के लिए आयी थी, शायद उसका मकान नदी के आस-पास ही कहीं पर था। इस प्रकार दो-तीन दिन बीत गये। एक दिन मैंने हिम्मत कर उसका नाम पूछ लिया तो उसने भोलेपन से अपना नाम बता दिया। यही नहीं, धीरे-धीरे मुझे यह भी पता चला कि वह किसी ऊंचे खानदान से सम्बन्धित कन्या है पर परिस्थितियों ने उसे गरीब बना दिया है।

मैं लगभग उखड़ा-सा उदास रहने लगा, शायद स्वामी जी ने मेरी मनस्थिति को भांप लिया हो पर वे बोले कुछ नहीं। एक दिन मैं सामान खरीदने के लिए काठमाण्डू गया हुआ था। मैं सीधे बागमती नदी के किनारे चला गया। मुझे वह वहां कहीं पर भी दिखाई नहीं दी, मैं लगभग दो घण्टे तक प्रतीक्षा करता रहा पर उसका कुछ भी पता नहीं चला।

उस दिन मैं अत्यन्त भग्न हृदय से आश्रम में लौट आया। मुझे कुछ ऐसा लगा कि जैसे मेरा सब कुछ छिन गया हो। न मुझे खाना अच्छा लगता न मन्त्र जाप, पहली बार ऐसा लगा कि मैं किसी को चाहने लगा हूं। परन्तु आज बीस दिन हो गये थे, और इन बीस दिनों में मैं रोज काठ-माण्डू के चक्कर लगा लेता पर वह मुझे कहीं पर भी दिखाई नहीं देती और मैं रोज भारी कदमों से आश्रम की ओर लौट आता।

लगभग एक महीना बीत गया था, और मैं ऐसा अनुभव कर रहा था कि मेरा सब कुछ छिन गया हो। उसके बिना जीवन निस्सार और व्यर्थ-सा अनुभव होने लगा। एक दिन स्वामी जी साधना करने के लिए दोपहर के समय कहीं बाहर गये तो मेरे कदम सीधे बागमती नदी की ओर बढ़ गये। दोपहर का समय था, और मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा कि मैं ज्यों ही नदी के किनारे पहुंचा वह वहां पर खड़ी थी। साथ में एक और कोई पुरुष भी खड़ा था जिससे वह हंस-हंसकर बातें कर रही थी। यह दृश्य देखकर मेरे तन-बदन में आग लग गई और मैं एक

अजीब-सी आग में झुलसने लगा। मैं वहां खड़ा रहा। कुछ ही मिनटों के बाद उसने मुझे देखा भी, पर देख करके भी अनदेखी कर दिया। उससे तो मैं लगभग पूरी तरह से जल गया।

मैं वहां पौने घण्टे तक बैठा रहा और चुपचाप नदी को देखता रहा। मेरा सारा शरीर आग की तरह दहक रहा था मगर मैं विवश था, लाचार था, मेरे सामने ही मेरी दुनिया लुट रही थी और मैं खड़ा-खड़ा अपने आपको लुटता हुआ-सा अनुभव कर रहा था।

कुछ ही समय बाद वह युवक वहां से चला गया तो मैंने साहस कर उसके पास जाकर पूछा कि वह कौन था जिससे तुम इतनी हंस-हंसकर बातें कर रही थीं? यह मुझे पूछने का अधिकार भी था क्योंकि पिछले एक महीने में हमने एक-दूसरे को काफी कुछ पहिचान लिया था।

पर मेरी बात सुनकर वह फड़क उठी, बोली, तुम्हें क्या मतलब कि मैं किससे बात कर रही थी। मैं उससे शादी करने का विचार कर रही हूं और आइन्दा मेरे पास आने की जरूरत नहीं है।

इससे तो मैं और भी तिलमिला उठा, एक लड़की अपने रूप और यौवन के घमण्ड में मेरा ऐसा अपमान कर दे, यह मेरे लिए सर्वथा असहनीय था। इच्छा तो हुई कि मैं एक जोरों का थप्पड़ उसके गाल पर रसीद कर दूं पर मैंने अपने आपको जप्त कर लिया।

मैंने कहा, मैं भी अच्छे घराने का लड़का हूं और तुम्हें चाहने लगा हूं। मैं तुम्हारे साथ शादी करने की इच्छा रखता हूं। तुम विश्वास रखो कि मैं तुम्हें बहुत अधिक खुशियां जिन्दगी में दूंगा।

उसने घृणा से मेरी ओर देखा और तिरस्कारपूर्ण स्वर से बोली, तुम प्यार-व्यार को भूल जाओ। तुम उसके सामने हो भी क्या! मैं तुम्हारी सूरत भी नहीं देखना चाहती।

मैं क्रोध, आवेश और अपमान की ज्वाला में दहक उठा। मैंने देखा कि वह तिरस्कारपूर्ण ढंग से मुझे देखती हुई एक ओर को चली गयी।

मैं आश्रम चला आया और निश्चय कर लिया कि मुझे इसको प्राप्त करना ही है, हर हालत में प्राप्त करना है। जब विश्वामित्र जैसे ऋषि ने इन्द्र की अप्सरा को साधना के बल पर अपनी उंगलियों पर नचा लिया था तो मैं ऐसा क्यों नहीं कर सकता और मैं आश्रम में जाकर बैठ गया। मेरा सारा शरीर लाल सुर्ख हो गया था। मुझे अपना कुछ भी होश नहीं था, स्वामी जी ने मुझे देखा, शायद वे सब कुछ समझ गये पर बोले कुछ भी नहीं।

मैंने उस दिन से वशीकरण साधना प्रारम्भ कर दी। और चौबीस घण्टों तक उस विद्या में संलग्न रहा। स्वामी जी मेरे परिश्रम को, मेरी लगन और योग्यता को देखकर खुश थे, और मैंने चालीसवें दिन उस दुर्लभ प्रत्यंगिरा वशीकरण सिद्धि को प्राप्त कर लिया। इस साधना के द्वारा सामने वाले की उपस्थिति आवश्यक नहीं होती केवल बिम्ब आंखों के सामने लाकर सिद्धि होने के बाद केवल एक घण्टा मन्त्र जप करते ही वह बिम्ब या जिसे हम वशीकरण करना चाहें वह वश में हो जाती है। और मैंने साधना सम्पन्न करने के बाद ऐसा ही किया।

शायद आप विश्वास नहीं करें. पर यह मेरे जीवन की सुखद घटना है कि दूसरे दिन सुबह नौ बजे जब मैं सामान लेने गया तो वह मुझे बाजार में दिख गई, परन्तु मैंने उससे बात तक नहीं की और मैं वापिस लौट गया। जब मैं आश्रम में पहुंचा तो मुझे पीछे पदचाप सुनाई दी। मैंने मुड़कर देखा तो वही अनुपमा खड़ी थी, सौन्दर्ययुक्त, यौवन भार से सिक्त।

उसने क्षमा याचना करते हुए मेरे सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। मैं समझ रहा था कि यह वशीकरण साधना का अचूक प्रयोग है जिसके बल पर गरीब, सामान्य रूप-रंग वाले व्यक्ति के सामने ऐसी अद्वितीय अप्सरा खड़ी है, और विवाह का प्रस्ताव रख रही है।

मैं अपमान को भूला नहीं था, झटककर कहा, "तुम जैसी घटिया लड़की से शादी करने की मैं बात भी नहीं सोच सकता। तुरन्त यहां से चली जाओ अन्यथा मैं धक्के मारकर बाहर निकाल दूंगा।"

वह मेरे चरणों में गिर पड़ी, पूरा सौन्दर्य मेरे पैरों में बिखरा हुआ था। यह मेरी जीत नहीं अपितु उस उत्तम कोटि की साधना की विजय थी। मैं कुछ मिनटों तक उसी प्रकार से खड़ा रहा। उसने अपना चेहरा ऊपर उठाया तो उसकी आंखें और चेहरा आंसुओं से तर-बतर था। क्षमा याचना करती हुई बोली, "कल से मैं अपने आपे में नहीं हूं और ऐसा लगता है कि यदि आप मुझे पति या प्रेमी के रूप में प्राप्त नहीं हुए तो मैं सीधे यहां से जाकर बागमती नदी में कूदकर प्राण विसर्जित कर दूंगी।"

उसके कथन में सच्चाई झलक रही थी, वह वास्तव में ही मुझे चाहने लगी थी। मैंने पूछा भी कि मैं तो घटिया हूं, तुम तो मेरी सूरत भी नहीं देखना चाहतीं फिर यहां तक क्यों आ गई हो?

उसने कहा, "कल से पता नहीं क्या हुआ कि मैं पागल-सी हो उठी हूं, हर क्षण आपका चेहरा आंखों के सामने नाचने लगता है, आपका मैंने

अपमान किया था इस पश्चात्ताप की आग में रात-भर झुलसती रही । मुझे मालूम था कि आप शुक्रवार को बाजार से सामान खरीदने आते हैं, इसीलिए मैं आपको ढूंढ़ने के लिए ही बाजार में चक्कर लगा रही थी और ज्यों ही आपको देखा मैं आपके पीछे-पीछे चल पड़ी ।

"मैंने अपने माता-पिता की अनुमति प्राप्त कर ली है । मैं उनकी इकलौती सन्तान हूं और मेरे दादा नेपाल के प्रसिद्ध कुलीन राणा वंश से संबन्धित हैं । मैं खानदानी और सर्वथा पवित्र लड़की हूं । आप मुझे अपना लें अन्यथा मैं पशुपतिनाथ की सौगन्ध खाकर कहती हूं कि एक घण्टे के भीतर-भीतर मैं नदी में कूदकर प्राण त्याग दूंगी ।"

तब तक स्वामी जी लौट आये थे, उन्हें इस बात का कोई पता नहीं था क्योंकि मैंने उन्हें कुछ बताया नहीं था पर आज मैंने उन्हें उसके सामने ही सब कुछ खोलकर बता दिया । स्वामी जी ने शादी करने की स्वीकृति दे दी । बोले, "मैं इसका भविष्य देख रहा हूं आगे चलकर यह भी एक श्रेष्ठ साधिका बनेगी ।"

दूसरे दिन वह अपने मां-बाप को आश्रम में बुला लाई । उनके सामने बातचीत हुई, वे स्वयं शादी के लिए तैयार थे । उन्होंने कहा, जिस बात से मेरी बेटी को सुख मिलता है, मेरे लिए वही सुख है और स्वामी जी के सामने ही हम दोनों विवाह सूत्र में बंध गये ।

आज इस घटना को बीस वर्ष से भी ज्यादा हो गये हैं । इस अवधि में उन स्वामी जी से और प्रातः स्मरणीय उनके पूज्य गुरुदेव से हम दोनों ने काफी कुछ विद्याएं, साधनाएं सीखीं पर मुझे आज भी सबसे पहले सम्पन्न की हुई वशीकरण साधना भली प्रकार से याद है जिसके बल पर मैं अद्वितीय सौन्दर्यवती अनुपमा को अपनी पत्नी बना सका। यद्यपि विवाह से पूर्व उसके मां-बाप, स्वामी जी और उसके सामने मैं कबूल कर चुका था कि तुमसे अपमाणित होकर मैंने तुम पर प्रत्यंगिरा वशीकरण का प्रयोग किया था जिसकी वजह से ही तुम मुझे प्राप्त हो सकी हो ।

उसने हंसकर जवाब दिया, "तुमने क्या किया और क्या नहीं किया इस बात की मुझे चिन्ता नहीं है पर तुमने मुझे पागल बना दिया है । इस बात को मैं जान गई हूं," और यह उस वशीकरण का सही प्रभाव है कि आज बीस वर्षों के बाद भी हम दोनों के बीच कभी किसी प्रकार का मतभेद या तनाव नहीं हुआ ।

और मैं यह निश्चयात्मक स्वर में कहने में समर्थ हूं कि इस प्रत्यंगिरा वशीकरण सिद्धि से इस साधना को सिद्ध करने के बाद कोई भी स्त्री किसी

भी पुरुष को या कोई भी [illegible] घण्टे में अपने वश में कर सकता है, अपने पीछे पागल बना सकता है, और जीवनभर वशीकरणयुक्त बनाये रख सकता है। यदि कोई अन्य व्यक्ति भी इस सिद्धि का जानकार है तो वह किसी के लिए भी ऐसा प्रयोग कर उन दोनों को परस्पर वशीकरण आबद्ध कर सकता है।

प्रत्यंगिरा वशीकरण सिद्धि

यह साधना चालीस दिन की है, और सरल है। साधक को यह साधना उस दिन प्रारम्भ करनी चाहिए जिस दिन गुरुवार को पुष्य नक्षत्र हो।

साधक सफेद आसन पर उत्तर की ओर मुंह कर बैठ जाय और सामने 'प्रत्यंगिरा वशीकरण यन्त्र' स्थापित कर दे जो अनंग-क्रिया से सिद्ध और रति साधना से सिक्त हो। फिर इसके सामने तेल का दीपक लगाकर इक्यावन माला जप करें, इसमें रुद्राक्ष माला का प्रयोग किया जाता है।

ओइम् ऐं ऐं श्रीं ह्रीं वश्यमानाय सम्मोहनाय ह्रीं ह्रीं एं श्रीं फट्॥

जब मन्त्र और चालीस दिन की साधना सिद्ध हो जाय तो अगले चालीस दिनों तक वह माला अपने गले में धारण किये रहे, यद्यपि इसका प्रयोग चालीस दिन की साधना सम्पन्न होते ही किया जा सकता है।

जब किसी पर प्रयोग करना हो तो उस पुरुष या स्त्री का बिम्ब अपनी आंखों के सामने लावे या उसका फोटो अथवा चित्र हो तो अपने सामने रखे और फिर भावना दें कि यह चौबीस घण्टों के भीतर पूर्णतः मेरे वश में हो और उस चित्र या बिम्ब के सामने ही ग्यारह माला मन्त्र जप करे पर हर मन्त्र के बाद और पहले इस शब्द को अवश्य दोहराये कि अमुक मेरे वश में हो और जीवन-भर वश में बनी रहे, इसे सम्पुटित प्रयोग कहा जाता है, अर्थात् मन्त्र के पहले और मन्त्र के बाद उपर्युक्त पंक्ति को दुहराना है। इस प्रकार मात्र एक रात्रि में ही ग्यारह माला अर्थात् ११०० मन्त्र जप पूरा कर लें। ऐसा करते ही जिस पर वशीकरण प्रयोग किया जाता है, वह सिद्ध हो जाती है। पिछले दस हजार वर्षों में यह प्रयोग असफल नहीं हुआ है।

□□


सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्
MAHENDRA SANSKRIT UNIVERSITY 1986 AD

डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली

रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में

- हिमालय पर्वत अपने में असंख्य रहस्य छिपाए हुए हैं। अनन्त काल से हिमालय की गुफाओं, घाटियों और तलहटियों में सिद्ध योगियों, संन्यासियों, तपस्वियों और तन्त्र-शास्त्र के महा पण्डितों का वास रहा है। उस पर्वतीय एकान्त में ये सभी अपनी-अपनी साधनाओं वर्षों से वर्षों तक डूबे रहते रहे हैं।

- अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ज्योतिषाचार्य और तन्त्र-विद्या के विशेषज्ञ डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली उनकी तलाश में दुर्गम हिमालय में खोज करते रहे। वह उनसे मिले और ऐसे-ऐसे रहस्यमय अज्ञात तन्त्रों को खोज निकाला जो आज तक छिपे पड़े थे।

- डॉ० श्रीमाली की यह खोज अत्यधिक चुनौतीपूर्ण और प्रामाणिक है। जिन पाठकों को इस अनोखी विद्या में रुचि है, वे इनकी सहायता से अपनी समस्याओं को सुलझाकर सफल व्यक्ति बन सकते हैं।

- **रहस्यमय अज्ञात तंत्रों की खोज में** डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली की एक श्रेष्ठ तन्त्र पुस्तक है, जो रोचक भी है और ज्ञानवर्द्धक भी।

तन्त्र विद्या पर एक दुर्लभ पुस्तक



सरस्वती सीरीज़

हिन्द पॉकेट बुक्स

20/-